यूनियन भाषा वैभव

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया
अच्छे लोग, अच्छा बैंक

Union Bank
of India
Good people to bank with

यूनियन भाषा वैभव

❖ संरक्षक ❖

नितेश रंजन
कार्यपालक निदेशक

एस. रामसुब्रमणियन
कार्यपालक निदेशक

संजय रुद्र
कार्यपालक निदेशक

❖ मार्गदर्शन ❖

सुरेश चन्द्र तेली
मुख्य महाप्रबंधक (मा.सं.)

गिरीश चंद्र जोशी
महाप्रबंधक (मा. सं. एवं रा.भा.)

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
अच्छे लोग, अच्छा बैंक

Union Bank of India
Good people to bank with

केंद्रीय कार्यालय, यूनियन बैंक भवन,
239, विधान भवन मार्ग, नरीमन पॉइंट. मुंबई - 400 021

यूनियन भाषा वैभव

❖ संपादक ❖

विवेकानंद
सहायक महाप्रबंधक (रा.भा.)

❖ संपादन सहयोग ❖

गायत्री रवि किरण
मुख्य प्रबंधक (रा.भा.)

मोहित सिंह ठाकुर
सहायक प्रबंधक (रा.भा.)

मुद्रक - प्रिंटट्रेड ईशूज़ (इंडिया) प्रा. लि.

अस्वीकरण - 'यूनियन भाषा वैभव' नामक यह पुस्तक पूरी तरह से आंतरिक परिचालन हेतु प्रकाशित की गई है। इसमें भारतीय भाषाओं, हिन्दी एवं भाषा से जुड़े विविध विषयों पर आलेख प्रकाशित किए गए हैं। इनमें व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं और प्रबंधन का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

यूनियन धारा एवं यूनियन सृजन, राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, मानव संसाधन विभाग,
केंद्रीय कार्यालय, 239, विधान भवन मार्ग, नरीमन पॉइंट, मुंबई

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
अच्छे लोग, अच्छा बैंक

Union Bank of India
Good people to bank with

अंशुली आर्या, आई.ए.एस.
सचिव
ANSHULI ARYA, I.A.S.
Secretary

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF HOME AFFAIRS
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE

संदेश

मुझे प्रसन्नता है कि यूनियन बैंक ऑफ इंडिया भारतीय भाषाओं की वैविध्यपूर्ण धरोहर को उजागर करते हुए 'यूनियन भाषा वैभव' शीर्षक से पुस्तक का प्रकाशन कर रहा है। इस सराहनीय प्रयास हेतु मैं बैंक का अभिनंदन करती हूँ।

भारत असंख्य भाषाओं और बोलियों का देश है। हर भाषा सिर्फ संवाद का माध्यम नहीं, वह हमारे लोकगीतों, कथाओं, किंवदंतियों, रीति-रिवाजों और पारंपरिक ज्ञान का जीवंत भंडार है। इन्हीं भाषाओं के सहारे हम अपनी पीढ़ियों तक सांस्कृतिक स्मृतियाँ और सामाजिक मूल्य पहुँचा पाए हैं।

संविधान ने इस महत्त्व को समझते हुए आठवीं अनुसूची में भाषाओं को विशेष दर्जा दिया। प्रारंभ में इसमें 14 भाषाएँ थीं, जो संशोधनों के बाद अब 22 हो चुकी हैं। यह दर्जा केवल प्रतीकात्मक नहीं है, यह इनके संरक्षण, संवर्धन और विकास के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता का द्योतक है। इससे साहित्य, शिक्षा, प्रशासन और संचार के क्षेत्र में भाषाओं को राष्ट्रीय स्तर पर प्रोत्साहन मिला है। हजारों वर्षों से चली आ रही मौखिक और लिखित परंपराएँ इस संवैधानिक संरक्षण से सुरक्षित और सशक्त बनी हैं।

महात्मा गांधी जी ने कहा था- "अगर आप देश को समझना चाहते हैं तो अपनी मातृभाषा में सोचिए, बोलिए और लिखिए।" सचमुच, मातृभाषा में ही स्वाभाविकता और आत्मीयता का अनुभव होता है।

भारतीय भाषाएँ हमारी सांस्कृतिक आत्मा की धड़कन हैं। उनका संवैधानिक संरक्षण अतीत को सुरक्षित रखने के साथ भविष्य को भी सुदृढ़ करता है और विकसित भारत की दिशा में हमारी यात्रा को नई ऊर्जा देता है। आज जब भारत विकसित राष्ट्र बनने की दिशा में तेज़ी से अग्रसर है, तब भाषाओं का संरक्षण और संवर्धन और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। भाषाएँ ही वह सेतु हैं जो अतीत की स्मृतियों को भविष्य की संभावनाओं से जोड़ती हैं। वे हमारी सांस्कृतिक विविधता को सुदृढ़ बनाए रखते हुए 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की संकल्पना को साकार करती हैं।

मुझे विश्वास है कि 'यूनियन भाषा वैभव' न केवल भारतीय भाषाओं की समृद्धि का दस्तावेज़ बनेगी, अपितु यह सभी पाठकों को इस बात के लिए प्रेरित करेगी कि वे अपनी-अपनी भाषाओं की जड़ों से जुड़े रहें और साथ ही भाषाई समरसता और सह-अस्तित्व के भाव को भी आगे बढ़ाएँ। यही भावना हमारे राष्ट्रीय जीवन की एकता को और गहरा करती है।

अं आर्या

(अंशुली आर्या)

तृतीय तल, एन.डी.सी.सी.-II भवन, जय सिंह रोड, नई दिल्ली-110001
फोन : (91) (11) 23438266, फैक्स : (91) (11) 23438267, ई-मेल : secy-ol@nic.in

नितेश रंजन
कार्यपालक निदेशक

प्रिय यूनियनाइट्स,

भारत की विविध सामाजिक संरचना की आत्मा उसकी भाषाई विविधता है। हर समुदाय, प्रांत, और क्षेत्र अपने आपको जिस भाषा में अभिव्यक्त करता है, वह उसकी पहचान और आत्मसम्मान का अटूट हिस्सा है। स्थानीय बोलियों और क्षेत्रीय भाषाओं की वजह से भारतीय समाज में संवाद, सांस्कृतिक आदान-प्रदान और सामूहिक पहचान संभव हो पाई है।

यूनियन बैंक ने हमेशा ग्राहकों की भाषा को बैंकिंग में जोड़ा है और सच्चे मायनों में ग्राहकों को उनकी अपनी भाषा में सेवा प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित किया है। भारत की सभी 22 भाषाओं पर केंद्रित 'यूनियन भाषा वैभव' पुस्तक का प्रकाशन इस क्रम में एक उल्लेखनीय कदम है।

संविधान ने इस सामाजिक समावेशन को मजबूती देने के लिए आठवीं अनुसूची में 22 भाषाओं को आधिकारिक दर्जा प्रदान किया, जिससे सामाजिक-प्रशासनिक संवाद, बहुभाषिक, समावेशी और प्रगतिशील हो सका है। क्षेत्रीय भाषाओं की संवैधानिक मान्यता व्यवसायिक, प्रशासनिक, कानूनी और शैक्षिक स्तर पर समानता का अधिकार देती है। शिक्षा व्यवस्था, प्रशासनिक संवाद, सरकारी योजनाएँ, सार्वजनिक सेवाएँ जैसे कि सामाजिक कल्याण कार्यक्रम, स्वास्थ्य सेवाएँ और ग्रामीण विकास परियोजनाएँ अपनी-अपनी राज्य की भाषाओं में संचालित की जा सकती हैं। इससे आम लोगों की भागीदारी तथा भाषा का सम्मान बढ़ता है।

बहुभाषिक परिवेश में संवैधानिक दर्जा पाने वाली भाषाओं का उपयोग कर प्रशासन आमजन से संवाद में पारदर्शिता और सुस्पष्टता लाता है — खासतौर पर ग्रामीण, दूरदराज़ या कम आबादी वाले क्षेत्रों में जहाँ भाषा-बाधाएँ अब तक सामाजिक प्रगति की बाधक रही हैं। अनुवादित या स्थानीय भाषा में सामग्री उपलब्ध कराने से हर वर्ग का व्यक्ति प्रशासनिक – सामाजिक निर्णयों में भाग ले पाता है।

भाषा संबंधी संवैधानिक व्यवस्था ने लोगों को भारत में अपनी बोलियों पर गर्व करने और पहचान बचाए रखने का कानूनी अधिकार दिया है। इससे न केवल सामाजिक सह-अस्तित्व, भाईचारा और एकता को बढ़ावा मिलता है, बल्कि विभिन्न भाषाई समुदायों के बीच आपसी संवाद को भी सरल, सार्थक और समावेशी बनाया जा सका है।

अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था कि - "हमारी भाषाएँ, हमारी संस्कृति की आत्मा हैं। भारत की विविधता में एकता का आधार हमारी भाषाएँ हैं, इन्हीं में हमारी संस्कृति की जड़े गहराई तक फैली हुई हैं"।

हम जानते हैं कि भाषाएं एक दूसरे से सीखती भी हैं और एक दूसरे को समृद्ध भी करती हैं। इसलिए भाषाओं के बीच परस्पर संवाद को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। हम सभी को हिंदी के साथ-साथ देश की सभी भाषाओं को साथ लेकर चलना चाहिए।

मैं सभी यूनियनाइट्स से आग्रह करता हूँ कि भारतीय भाषाओं में संवाद करें और ग्राहकों के साथ आत्मीय जुड़ाव बढ़ाएं।

नितेश

(नितेश रंजन)

एस. रामसुब्रमणियन
कार्यपालक निदेशक

प्रिय यूनियनाइट्स,

मुझे अत्यंत खुशी है कि बैंक द्वारा भारत के भाषाई धरोहर को समर्पित पुस्तक 'यूनियन भाषा वैभव' शीर्षक से प्रकाशित की जा रही है। इस पुस्तक में आठवीं अनुसूची की भाषाओं के संबंध में जानकारी प्रदान की गई है और भारत की क्षेत्रीय भाषाओं के आपसी संबंध को भी भली-भांति उजागर किया गया है। इस पुस्तक को मूर्त रूप देने हेतु मैं राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग की टीम की सराहना करता हूँ।

आठवीं अनुसूची में दर्ज 22 भाषाओं को संवैधानिक मान्यता दिया जाना केवल सांस्कृतिक या भावनात्मक नहीं बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। राज्य सरकारों, लोक सेवा आयोगों और विशेषकर सेवा क्षेत्रों में स्थानीय भाषा में दक्ष अभ्यर्थियों की माँग बढ़ रही है। इससे न केवल स्थानीय युवाओं को रोज़गार मिलता है, बल्कि कंपनियाँ, बैंकों और सेवा क्षेत्र के संस्थानों द्वारा भी क्षेत्रीय ग्राहकों से सीधे संवाद किया जाना सुगम हो जाता है।

2010 के बाद डिजिटल क्रांति और स्मार्टफोन के आगमन से क्षेत्रीय भाषाओं में टीवी, रेडियो, समाचार पत्र और सोशल मीडिया का उपयोग तेजी से बढ़ा है। विज्ञापन कंपनियाँ, ई-कॉमर्स प्लेटफार्म और डिज़िटल स्टार्टअप अब उत्पादों और सेवाओं का प्रचार विभिन्न भाषाओं में कर रहे हैं जिन्हें संवैधानिक दर्जा प्राप्त है। इससे क्षेत्रीय बाज़ार का विस्तार और उपभोक्ताओं की भागीदारी बढ़ी है। बैंकों ने भी इन अवसरों को पहचाना है और वे भी क्षेत्रीय भाषाओं में अपनी सेवाएं और विभिन्न उत्पाद उपलब्ध करा रहे हैं।

सरकारी दस्तावेज तथा ग्राहक सेवा संबंधी सूचनाएं क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से उपलब्ध कराए जाने से हर नागरिक आर्थिक और व्यावसायिक फैसलों में भागीदार बना है। इस समावेश से न केवल आर्थिक सशक्तिकरण को गति मिलती है, बल्कि भाषागत विविधता देश के कोने-कोने में व्यावसायिक अवसरों की नई राहें खोलती है।

यूनियन बैंक में यूनियन भाषा सौहार्द इंद्रधनुष के माध्यम से स्टाफ को क्षेत्रीय भाषा में व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है, इसके तहत सर्वप्रथम भारतीय भाषाओं में स्टाफ सदस्यों को ग्राहकों से बातचीत के लिए व्यावहारिक भाषा ज्ञान का प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है। आइए हम सब यूनियनाइट्स मिलकर भारतीय भाषाओं को सीखें और इसका दैनिक प्रयोग बढ़ाए तथा ग्राहकों के लिए सुगम्य सेवाएं उपलब्ध करने का प्रयास करें।

एस राम

(एस. रामसुब्रमणियन)

संजय रूद्र
कार्यपालक निदेशक

प्रिय यूनियनाइट्स,

डिजिटल प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास ने वैश्विक स्तर पर भाषायी विविधता को नई चुनौती ही नहीं दी, बल्कि उसके संवर्धन और विस्तार के नए अवसर भी प्रदान किए हैं। इंटरनेट, सोशल मीडिया, ऑनलाइन शिक्षा और सरकारी सेवाओं के डिजिटलीकरण में अनेक भारतीय भाषाओं की सहभागिता निरंतर बढ़ रही है। भारत सरकार की नई शिक्षा नीति ने मातृभाषाओं के संवर्द्धन के साथ-साथ तकनीकी एवं उच्च शिक्षा में भी भारतीय भाषाओं को नए आयाम प्रदान किए हैं।

आज भारत की डिजिटल प्रगति ने विभिन्न क्षेत्रों-शिक्षा, स्वास्थ्य, बैंकिंग, रोजगार, सूचना एवं संचार में स्थानीय भाषाओं की महत्ता को और अधिक प्रखर कर दिया है। इससे न केवल नागरिकों के लिए सेवाओं तक सहज पहुँच सुनिश्चित हो रही है, बल्कि डिजिटल भारत के स्वप्न को साकार करने में भी यह एक महत्त्वपूर्ण साधन सिद्ध हो रही है।

भारत सरकार तथा राज्य सरकारें यह सुनिश्चित करने हेतु कटिबद्ध हैं कि प्रौद्योगिकी आधारित सभी सेवाएँ देश की जनसामान्य तक उनकी मातृभाषा में पहुँचे। जब सेवाएँ अपनी भाषा में उपलब्ध होती हैं, तो उनका प्रभाव और विश्वास दोनों ही कई गुना बढ़ जाते हैं। यही आत्मनिर्भर भारत और समावेशी विकास का मूल आधार है।

आधुनिक तकनीक ने भाषाओं के परस्पर अनुवाद एवं ज्ञान-संवाद को सहज और तीव्र बनाया है। लोग अब अपनी भाषा में विज्ञान, साहित्य और तकनीकी विषयों पर सामग्री देख-सुन सकते हैं, जिससे सूचना का प्रवाह और ज्ञान का विस्तार सरल हुआ है। यह भारतीय भाषाओं के पुनरुत्थान और उनकी वैश्विक प्रतिष्ठा की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

भविष्य में जब भारत पूर्णतः डिजिटल, आत्मनिर्भर और ज्ञान-प्रधान राष्ट्र बनेगा, तब भारतीय भाषाएँ विकास, अनुसंधान एवं नवाचार की अग्रणी धारा बनेंगी। डिजिटल युग में भारतीय भाषाओं का सांस्कृतिक, शैक्षिक और आर्थिक योगदान और भी महत्वपूर्ण होगा।

यूनियन बैंक द्वारा बैंकिंग सेवाओं में बहुभाषीयता को अपनाना इसी दृष्टिकोण की परिणति है। एसएमएस बैंकिंग, मोबाइल बैंकिंग, साइबर सुरक्षा, इंटरनेट बैंकिंग, ग्राहक सेवा केंद्र आदि सभी सुविधाएँ अब विभिन्न भारतीय भाषाओं में उपलब्ध हैं। यह पहल बैंक के ग्राहकों के प्रति सेवा, संवेदनशीलता और प्रतिबद्धता का सशक्त प्रमाण है।

यूनियन बैंक सदैव यह सुनिश्चित करने के लिए प्रयत्नशील है कि भारतीय भाषाओं के माध्यम से वित्तीय समावेशन को गति मिले और ग्राहक सेवा की गुणवत्ता नए मानक स्थापित करे।

इस पुस्तक के प्रकाशन में योगदान देने वाले सभी रचनाकारों और सहयोगियों को मैं अपनी आत्मीय शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ। मुझे दृढ़ विश्वास है कि यह संकलन पाठकों के हृदय को स्पर्श करेगा और भारत की भाषाई विविधता में निहित एकता के आदर्श को उजागर करते हुए एक प्रेरणादायक मील का पत्थर सिद्ध होगा।

संजय रूद्र

(संजय रूद्र)

सुरेश चन्द्र तेली
मुख्य महाप्रबंधक (मा.सं)

प्रिय यूनियनाइट्स,

भारत एक बहुभाषी देश है, जहाँ 19,500 से अधिक भाषाएँ और बोलियाँ बोली जाती हैं। बैंकिंग क्षेत्र में क्षेत्रीय भाषाओं के महत्व को समझते हुए हमारा बैंक प्रत्येक पहलू में क्षेत्रीय भाषाओं का समावेश सुनिश्चित करते हुए आगे बढ़ रहा है। 'यूनियन भाषा वैभव' के प्रकाशन से बैंक का यह दृष्टिकोण प्रमाणित होता है।

भारत की क्षेत्रीय भाषाएँ न केवल सांस्कृतिक धरोहर की रक्षक हैं, बल्कि राष्ट्रीय अस्मिता की आत्मा भी हैं। इन भाषाओं के माध्यम से हम अपनी परंपराओं, लोककथाओं और ऐतिहासिक अनुभवों को अगली पीढ़ी तक पहुँचा सकते हैं। भारतीय संविधान ने 22 भाषाओं को आठवीं अनुसूची में शामिल करके यह सुनिश्चित किया है कि इनकी संरक्षा और विकास सरकार का दायित्व बने। क्षेत्रीय भाषाओं का आठवीं अनुसूची में दर्ज होना भारत को सच में एक समावेशी, उदार और विविधतापूर्ण गणराज्य के रूप में परिभाषित करता है, जहाँ हर भाषा की, और हर भाषा-भाषी की, गरिमा को संवैधानिक बल प्राप्त है।

बैंकिंग सेवाएँ गाँव-गाँव तक पहुँच रही हैं, क्षेत्रीय भाषाओं में सेवाएँ उपलब्ध कराना आवश्यक है। भारत के पूर्व उपराष्ट्रपति ने अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस पर कहा था, "जब हम मातृभाषा की रक्षा और संवर्धन करते हैं, तो हम अपनी सांस्कृतिक विविधता की भी रक्षा करते हैं। भाषा और रोज़गार का सीधा संबंध होना चाहिए"।

भारतीय रिज़र्व बैंक ने भी समय-समय पर बैंकों को निर्देश दिया है कि ग्राहक सेवा में हिंदी के साथ-साथ क्षेत्रीय भाषाओं का उपयोग अनिवार्य करें। बैंक के सभी आवेदन, पासबुक, वाउचर इत्यादि स्थानीय भाषा में भी उपलब्ध करवाने के निर्देश दिए गए हैं। इसका उद्देश्य वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देना और ग्रामीण अल्पशिक्षित तथा अशिक्षित वर्ग को भी बैंकिंग का हिस्सेदार बनाना है।

भारतीय बैंकों के सामने सबसे बड़ी चुनौती ग्राहकों के साथ विश्वासपूर्ण संबंध स्थापित करना है। क्षेत्रीय भाषा में संवाद ग्राहक को आत्मीयता और अपनत्व का अहसास दिलाता है। इसके साथ ही आजकल मोबाइल बैंकिंग, वॉयस बैंकिंग जैसी सुविधाएँ भी क्षेत्रीय भाषाओं में आ रही हैं, जिससे डिजिटल बैंकिंग और भी सरल बन गई है। एक अध्ययन के अनुसार, 68% भारतीय अपनी मूल भाषा में वित्तीय लेनदेन करना पसंद करते हैं। बैंकिंग टचपॉइंट्स का भारतीय भाषा में उपलब्ध होना ग्राहकों की संतुष्टि एवं बैंक की पहुंच को व्यापक करता है। इससे वित्तीय समावेशन को बल मिलता है।

बैंकिंग में क्षेत्रीय भाषाएँ न केवल संवाद का माध्यम हैं, बल्कि आत्मविश्वास, समावेश और सशक्तिकरण का पथ भी हैं। अतः हमें बैंकिंग क्षेत्र में सतत और संगठित प्रयासों से क्षेत्रीय भाषाओं का अधिकाधिक प्रयोग सुनिश्चित करना चाहिए।

(सुरेश चन्द्र तेली)

गिरीश चंद्र जोशी
महाप्रबंधक (मा.सं. एवं रा.भा.)

प्राक्कथन

भारत का संविधान देश की शासन प्रणाली की आधारशिला होने के साथ-साथ भारतीय समाज की विविधताओं को भी सम्मान देता है। इनमें भाषा सबसे महत्वपूर्ण घटक है। भारत की भाषाई विविधता विश्व में अपनी तरह की अनूठी मिसाल है। देश के प्रत्येक भाग में अलग-अलग भाषाएँ और बोलियाँ बोली जाती हैं। यह विविधता केवल संवाद का माध्यम नहीं है, बल्कि यह हमारी संस्कृति, परंपरा, और पहचान की परिचायक भी है। संविधान निर्माताओं ने इस विविधता को समझते हुए भाषा के प्रश्न को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ संभाला और भारतीय संविधान में भाषाओं के लिए विस्तृत प्रावधान सुनिश्चित किए। इन प्रावधानों का उद्देश्य देश की एकता और अखंडता बनाए रखते हुए सभी भाषाओं के लिए समान अवसर प्रदान करना है। संविधान के भाग-17 में विशेष रूप से भाषा के प्रश्न को संबोधित किया गया है। अनुच्छेद 343 से लेकर अनुच्छेद 351 तक भाषा से संबंधित सभी महत्वपूर्ण प्रावधानों को विस्तार से उल्लेखित किया गया है। इसके अतिरिक्त, आठवीं अनुसूची में भाषाओं की सूची दी गई है जिसे समय-समय पर संशोधित किया जाता रहा है।

अनुच्छेद 343 में यह स्पष्ट किया गया है कि संघ की राजभाषा हिंदी होगी और उसकी लिपि देवनागरी होगी। इसके साथ ही यह भी उल्लेख किया गया कि संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त अंकों का रूप अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप में रहेगा। हालांकि संविधान के प्रारंभ में यह व्यवस्था की गई थी कि पंद्रह वर्षों तक अंग्रेजी का भी प्रयोग संघ के कार्यों में होता रहेगा ताकि उन क्षेत्रों के लोगों को, जो हिंदी में अभ्यस्त नहीं हैं, पर्याप्त समय मिल सके। यह एक व्यावहारिक दृष्टिकोण था जिससे किसी भी भाषा के थोपने का आभास न हो और सभी क्षेत्रों के नागरिक सहजता से भाषा परिवर्तन को स्वीकार कर सकें। संविधान ने राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया कि वे आवश्यकतानुसार आदेश द्वारा किसी कार्य में हिंदी के साथ-साथ देवनागरी अंकों के प्रयोग को प्राधिकृत कर सकते हैं।

अनुच्छेद 344 के अंतर्गत राजभाषा के विषय में आयोग और संसद की समिति की व्यवस्था की गई है। संविधान लागू होने के पाँच वर्ष के पश्चात और तत्पश्चात प्रत्येक दस वर्ष के अंतराल पर राष्ट्रपति एक भाषा आयोग का गठन करेंगे। यह आयोग भाषा के प्रयोग से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर विचार करेगा। इसमें यह देखा जाएगा कि संघ के शासकीय कार्यों में हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग कैसे किया जाए और अंग्रेजी के प्रयोग पर कब और कैसे सीमाएँ निर्धारित की जाएँ। साथ ही विधायी कार्यों और न्यायालयों में प्रयुक्त भाषा के संदर्भ में भी यह आयोग सिफारिश करेगा। यह आयोग राष्ट्रपति को अपनी सिफारिशें देगा और राष्ट्रपति इन सिफारिशों पर विचार कर संसद की समिति से राय लेंगे। संसद की समिति 30 सदस्यों की होगी जिसमें 20 लोकसभा और 10 राज्यसभा के सदस्य होंगे। यह समिति भाषा आयोग की सिफारिशों की समीक्षा करेगी और अपनी राय राष्ट्रपति को देगी। इस प्रक्रिया से यह सुनिश्चित होता है कि भाषा नीति में संतुलन बना रहे और सभी भाषाई समुदायों के हितों का संरक्षण हो।

संविधान के अनुच्छेद 345 में राज्यों के लिए प्रावधान किया गया है कि वे अपने राज्य में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक को राजभाषा के रूप में स्वीकार कर सकते हैं। राज्य चाहे तो हिंदी को राजभाषा बना सकता है या अपनी क्षेत्रीय भाषा को। जब तक राज्य की विधान सभा किसी अन्य भाषा को राजभाषा घोषित नहीं करती, तब तक राज्य के शासकीय कार्यों में अंग्रेजी का प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रावधान का मुख्य उद्देश्य राज्यों को भाषाई स्वतंत्रता देना है ताकि वे अपने सांस्कृतिक और भाषाई संदर्भों के अनुसार निर्णय ले सकें। यह संघीय ढांचे की मजबूती का परिचायक है और क्षेत्रीय भाषाओं के सम्मान का संवैधानिक समर्थन भी।

अनुच्छेद 346 में राज्यों के बीच और राज्यों तथा संघ के बीच पत्राचार में प्रयुक्त भाषा का प्रावधान किया गया है। इसके अनुसार, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा राज्य और संघ के बीच पत्र-व्यवहार में वही भाषा प्रयोग की जाएगी जो संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए अधिकृत हो। इसका तात्पर्य है कि संघ और राज्यों के बीच अंग्रेजी या हिंदी का प्रयोग किया जा सकता है। यदि दो या अधिक राज्य आपसी सहमति से यह निर्णय लें कि उनके बीच पत्राचार की भाषा हिंदी होगी, तो वे ऐसा कर सकते हैं। यह प्रावधान प्रशासनिक सुविधा के लिए आवश्यक है, लेकिन इसमें भी राज्यों की स्वायत्तता का सम्मान रखा गया है।

संविधान के अनुच्छेद 347 में भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए एक महत्वपूर्ण प्रावधान किया गया है। यदि किसी राज्य में किसी भाषा को बोलने वाले पर्याप्त लोग यह मांग करते हैं कि उनकी भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए, तो राष्ट्रपति ऐसा निर्देश दे सकते हैं। इस निर्देश के अनुसार राज्य सरकार उस भाषा को राज्य के किसी विशेष भाग में या पूरे राज्य में शासकीय प्रयोजन के लिए मान्यता दे सकती है। यह प्रावधान भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करता है और उनकी भाषा तथा संस्कृति को संरक्षण प्रदान करता है। यह भारत की भाषाई विविधता को सहेजने की दिशा में एक संवेदनशील और प्रगतिशील कदम है।

अनुच्छेद 348 में न्यायालयों और विधायी प्रक्रिया में भाषा के प्रयोग का उल्लेख है। उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में सभी कार्यवाहियाँ अंग्रेजी में की जाती हैं। संसद और राज्य विधानमंडलों में प्रस्तुत किए जाने वाले विधेयकों, अधिनियमों, अध्यादेशों, आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों का प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी में होता है। हालांकि, किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की अनुमति से अपने राज्य के उच्च न्यायालय में हिंदी या किसी अन्य क्षेत्रीय भाषा के प्रयोग को अधिकृत कर सकता है। लेकिन यह व्यवस्था केवल न्यायालय की कार्यवाहियों तक सीमित होती है, निर्णयों, आदेशों और डिक्री पर यह लागू नहीं होती। यह प्रावधान विधि की एकरूपता बनाए रखने और न्यायिक प्रक्रिया में स्पष्टता के लिए आवश्यक है ताकि देशभर में एक समान न्यायिक प्रक्रिया बनी रहे।

अनुच्छेद 349 में यह व्यवस्था की गई है कि संविधान के लागू होने से पंद्रह वर्षों तक, संसद में भाषा से संबंधित कोई भी विधेयक राष्ट्रपति की पूर्व स्वीकृति के बिना प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। राष्ट्रपति भाषा आयोग और संसद की समिति की सिफारिशों पर विचार करने के बाद ही स्वीकृति देंगे। इस प्रावधान का उद्देश्य भाषा नीति में संतुलन बनाए रखना और किसी भी निर्णय को सोच-समझ कर लेना है ताकि किसी भी वर्ग के हितों की अनदेखी न हो।

अनुच्छेद 350 के अंतर्गत प्रत्येक नागरिक को यह अधिकार दिया गया है कि वह केंद्र या राज्य के किसी अधिकारी के समक्ष अपनी व्यथा उस भाषा में रख सकता है जो उस क्षेत्र में प्रचलित है। यह प्रावधान प्रशासनिक न्याय की गारंटी है और नागरिकों के भाषाई अधिकारों की रक्षा करता है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि भाषा किसी भी नागरिक के लिए प्रशासन से संवाद में बाधा न बने।

अनुच्छेद 350 (क) में प्राथमिक शिक्षा में मातृभाषा के प्रयोग पर बल दिया गया है। इसके अनुसार, प्रत्येक राज्य और स्थानीय प्राधिकरण का दायित्व है कि वे भाषाई अल्पसंख्यक समुदाय के बालकों को प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान करें। राष्ट्रपति आवश्यकतानुसार राज्यों को इस संबंध में निर्देश दे सकते हैं। मातृभाषा में शिक्षा बालक के बौद्धिक और भावनात्मक विकास के लिए आवश्यक है और यह प्रावधान भारतीय संविधान की भाषाई संवेदनशीलता को दर्शाता है।

अनुच्छेद 350 (ख) में भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अधिकारी के पद की व्यवस्था की गई है। राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त यह अधिकारी देश में भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा से संबंधित सभी विषयों की जाँच करता है और राष्ट्रपति को नियमित प्रतिवेदन प्रस्तुत करता है। राष्ट्रपति इन प्रतिवेदनों को संसद में रखते हैं और संबंधित राज्यों की सरकारों को भी भेजते हैं। इस व्यवस्था का उद्देश्य यह है कि भाषाई अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा सुनिश्चित हो और उनके साथ कोई अन्याय न हो।

अनुच्छेद 351 भारतीय संविधान की भाषा नीति का केन्द्रीय बिंदु है। इसके अनुसार, संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रचार और विकास करे ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके। हिंदी के विकास में अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों, शैली और पदों को आत्मसात करने की बात कही गई है। साथ ही, हिंदी के शब्द भंडार को समृद्ध करने के लिए मुख्यतः संस्कृत और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करने की भी व्यवस्था की गई है। इस अनुच्छेद का उद्देश्य हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में विकसित करना है, लेकिन अन्य भाषाओं के साथ उसका सामंजस्य और समावेश भी उतना ही आवश्यक है। हिंदी का विकास किसी भाषा के विरोध में न होकर सभी भाषाओं के सहयोग से हो, यही संविधान की मूल भावना है।

भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में उन भाषाओं का उल्लेख किया गया है जिन्हें विशेष मान्यता प्राप्त है। संविधान के प्रारंभ में आठवीं अनुसूची में 14 भाषाएँ थीं, जो समय के साथ बढ़कर 22 हो गई हैं। वर्तमान में इसमें असमिया, बांग्ला, गुजराती, हिंदी, कन्नड, कश्मीरी, कोंकणी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगु, उर्दू, सिंधी, डोगरी, बोडो, संथाली, मैथिली और नेपाली भाषाएँ शामिल हैं। इन भाषाओं के विकास और संरक्षण के लिए केंद्र सरकार विभिन्न योजनाएँ संचालित करती

है। यह प्रावधान भाषाई विविधता को मान्यता देने और उसे संरक्षित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

भारतीय संविधान ने संसदीय और विधायी कार्यों में भाषाओं के प्रयोग को अत्यंत संतुलित और विवेकपूर्ण रूप में विनियमित किया है। अनुच्छेद 120 के अंतर्गत यह व्यवस्था की गई है कि संसद में कार्य मुख्यतः हिंदी या अंग्रेज़ी में संपन्न होगा, किंतु लोकसभा के अध्यक्ष अथवा राज्यसभा के सभापति, आवश्यकता पड़ने पर, उस सदस्य को अपनी मातृभाषा में अभिव्यक्ति की अनुमति प्रदान कर सकते हैं, जो हिंदी या अंग्रेज़ी में अपने विचार स्पष्ट रूप से प्रकट करने में असमर्थ हो। इसी प्रकार, अनुच्छेद 210 राज्यों के विधान-मंडलों के लिए प्रावधान करता है कि वहाँ कार्य राज्य की राजभाषा या भाषाओं, हिंदी अथवा अंग्रेज़ी में किया जाएगा, तथा अध्यक्ष या सभापति के पास, सदस्य को अपनी मातृभाषा में बोलने की अनुमति देने का अधिकार होगा। संविधान के अनुसार, प्रारंभिक पंद्रह वर्षों के पश्चात अंग्रेज़ी के प्रयोग को समाप्त करने का विचार किया गया था। भाषाई विविधता और व्यावहारिक आवश्यकता को देखते हुए, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय और त्रिपुरा में यह अवधि पच्चीस वर्ष, तथा अरुणाचल प्रदेश, गोवा और मिज़ोरम में चालीस वर्ष निर्धारित की गई। इन संवैधानिक प्रावधानों का मूल उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि भारतीय लोकतंत्र में भाषाई सम्मान और प्रशासनिक सुगमता, दोनों का संतुलित संरक्षण हो।

संविधान के इन प्रावधानों से यह स्पष्ट होता है कि भारत की भाषा नीति संतुलन और समावेश पर आधारित है। इसमें न तो केवल एक भाषा को थोपने की प्रवृत्ति है और न ही किसी भाषा की उपेक्षा की गई है। संविधान ने हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया है, परंतु अन्य भारतीय भाषाओं के महत्व को भी समान रूप से स्वीकार किया है। राज्यों को अपनी भाषा नीति बनाने की स्वतंत्रता दी गई है और साथ ही न्यायालयों में अंग्रेजी के प्रयोग को भी बनाए रखा गया है ताकि विधि की स्पष्टता बनी रहे। भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं और मातृभाषा में शिक्षा की व्यवस्था भी की गई है।

जब भारतीय संविधान में भाषाओं से संबंधित प्रावधानों की चर्चा अपने निर्णायक

मोड़ पर पहुँची, तब 14 सितम्बर 1949 को नई दिल्ली स्थित संविधान सभा भवन में पूर्व राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने जो विचार रखे, वे आज भी हमारे भाषाई ढांचे की दिशा और मर्यादा तय करते हैं। हिंदी को राजभाषा घोषित किए जाने के इस ऐतिहासिक अवसर पर उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा—"हमें न केवल हिंदी का विकास करना है, बल्कि उसे क्षेत्रीय भाषाओं से समृद्ध भी करना है, क्योंकि इन भाषाओं में भारत की आत्मा बसती है," और आगे चेताया कि "कोई भी ऐसा प्रयास नहीं होना चाहिए, जिससे इन भाषाओं के अस्तित्व पर संकट आए।" उन्होंने यह भी कहा, "क्षेत्रीय भाषाओं को नष्ट होने देना, हमारी सांस्कृतिक विरासत के लिए अत्यंत हानिकारक होगा," और जोर देकर कहा कि "हिंदी और सभी भारतीय भाषाएं, एक-दूसरे की पूरक हैं।"

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का यह दृष्टिकोण केवल राजभाषा हिंदी को प्रतिष्ठा देने तक सीमित नहीं था, बल्कि उन्होंने भारत की सभी भाषाओं को एक साथ आगे बढ़ाने की भावना का प्रतिनिधित्व किया। उनके इन शब्दों में भारतीय संविधान की उसी आत्मा की झलक मिलती है जो अनुच्छेद 343 से 351 तक फैले भाषा संबंधी प्रावधानों में समावेशिता, संरक्षण और संवर्धन की भावना को पुष्ट करती है। उनके विचार आज भी हमें यह स्मरण कराते हैं कि भारत की एकता, उसकी भाषाई विविधता को सम्मान देने से ही मजबूत होगी।

विवेकानंद
सहायक महाप्रबंधक (रा.भा)

प्रस्तावना

भारत जैसे भाषाई विविधता से भरे देश में जहाँ एक ओर भाषाओं का संरक्षण आवश्यक है वहीं दूसरी ओर लोक व्यवहार में, शिक्षा, प्रशासन और रोजगार में इनका प्रयोग बढ़ाना भी ज़रूरी है। इस बात का भली-भाँति आभास हमारे देश के संविधान निर्माताओं को था। प्रशासन और शिक्षा में भाषा आधारित समावेशन की नींव संविधान सभा द्वारा रखी गई। संविधान में भाषाओं को शामिल करने की प्रक्रिया जो आगे चलकर आठवीं अनुसूची बनी, मुख्यतः ड्राफ्ट संविधान के अनुच्छेद 301-A के तहत संविधान सभा में चर्चा का विषय रही। आठवीं अनुसूची-राज्य सूची, केंद्र सूची अथवा समवर्ती सूची किसी का भी भाग न होकर एक अलग अनुसूची है।

भारत एक बहुभाषी, बहु-सांस्कृतिक और बहु-धार्मिक राष्ट्र है जहाँ जन-जन की पहचान उसकी भाषा, बोली और संस्कृति से जुड़ी होती है। भाषाएँ केवल संवाद का माध्यम नहीं होती, वे संस्कृति, परंपरा और पहचान की वाहक होती हैं। अतः इनका संरक्षण न केवल भाषाई, बल्कि राष्ट्रीय उत्तरदायित्व भी है। भारतीय संविधान निर्माताओं ने इस विविधता को मान्यता देते हुए आठवीं अनुसूची के माध्यम से भाषाओं के संरक्षण और संवर्धन का प्रावधान किया। यह अनुसूची न केवल भाषाओं को संवैधानिक दर्जा देती है, बल्कि उन्हें राष्ट्रीय पहचान भी प्रदान करती है। यह न केवल भाषाओं को एक मंच प्रदान करती है, बल्कि उनके विकास के लिए मार्ग भी प्रशस्त करती है।

आईए, इसके इतिहास पर एक दृष्टि डालते हैं –

भारतीय संविधान सभा की भाषा समिति को भारत की भाषाई नीति तय करने के लिए गठित किया गया था जो संविधान निर्माण की प्रक्रिया के दौरान एक अत्यंत महत्वपूर्ण उप-समिति थी। यह भारत के विभिन्न हिस्सों से आए नेताओं द्वारा भाषाई विविधता के हित की भावना से प्रेरित थी, ताकि भारत जैसे बहुभाषी लोकतंत्र में हर भाषा को सम्मान मिल सके। संविधान सभा की भाषा समिति में कई प्रमुख सदस्य शामिल थे, जिनके व्यापक दृष्टिकोण की भारत की भाषाई नीति को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका रही। डॉ. राजेन्द्र

प्रसाद, संविधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते, इस समिति की निगरानी करते थे। बी. जी. खेर एक सक्रिय सदस्य थे, जो भाषा के मुद्दों पर संतुलित विचार रखते थे। मौलाना अबुल कलाम आज़ाद भाषाई समरसता के प्रबल समर्थक थे और भारत की विविध भाषाओं के बीच एकता बनाए रखने पर बल देते थे। पुरुषोत्तम दास टंडन हिंदी को राजभाषा बनाने के प्रबल पक्षधर थे, वहीं टी. टी. कृष्णमाचारी ने दक्षिण भारतीय भाषाओं के अधिकारों की रक्षा और संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। सेठ गोविंद दास हिंदी और देवनागरी लिपि के पक्ष में दृढ़ता से खड़े थे। इसी तरह आर. वी. धुलेकर ने हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित किए जाने की माँग की, जिससे संविधान सभा में गहन बहस शुरू हुई। दूसरी ओर, एन. गोपालस्वामी आयंगार ने अंग्रेज़ी को एक सीमित अवधि तक राजकार्य के लिए अस्थायी रूप से बनाए रखने का पक्ष लिया। इन सभी विचार और दृष्टिकोण ने मिलकर भारत के संविधान में भाषा संबंधी अनुच्छेद तथा आठवीं अनुसूची के निर्माण में अहम भूमिका निभाई।

संविधान की भाषा समिति का कार्य देश को एकजुट रखने में बहुत महत्वपूर्ण रहा।

संविधान सभा में भाषाओं का प्रश्न अत्यंत संवेदनशील और व्यापक चर्चा का विषय था। संविधान सभा बहस के दौरान भाषाओं को लेकर जहाँ एक ओर हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने की मांग थी वहीं दूसरी ओर गैर-हिंदी भाषी क्षेत्रों की अपनी भाषाओं की रक्षा की भावना थी। भारत की भाषाई विविधता को देखते हुए यह तय करना चुनौतीपूर्ण था कि संविधान में किस भाषा को राजभाषा बनाया जाए, और अन्य भारतीय भाषाओं के साथ क्या व्यवहार किया जाए। अंततः, संतुलन, सहमति और संवेदनशीलता के साथ भाषाओं का निर्णय लिया गया जिससे भारत की भाषाई एकता और विविधता दोनों को सम्मान मिला।

आईए, संविधान सभा में भाषाओं के विषय पर कुछ प्रमुख नेताओं के विचार पर ग़ौर करते हैं -

"भारत की संस्कृति बहुभाषिक है। हिंदी का स्थान हो सकता है, परंतु सभी भारतीय भाषाओं का समान सम्मान होना चाहिए।" वे हिंदी के समर्थन में थे, लेकिन उर्दू और अन्य भाषाओं के संरक्षण के पक्षधर भी थे।

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद

"हम हिंदी का विरोध नहीं करते, लेकिन हम पर कोई भाषा थोपी नहीं जानी चाहिए।" वे संविधान में हिंदी को थोपने का विरोध कर रहे थे।

टी. टी. कृष्णामाचारी

"हमें हिंदी को केवल संपर्क भाषा नहीं, बल्कि राष्ट्रभाषा का दर्जा देना चाहिए।" वे संस्कृतनिष्ठ हिंदी के प्रबल समर्थक थे। उनका दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट था कि हिंदी ही भारत की प्राकृतिक राष्ट्रभाषा है।

पं. पुरुषोत्तमदास टंडन

"हिंदी जनमानस की भाषा है। इसे अपनाकर ही हम सच्चे अर्थों में भारतीय बन सकते हैं।" वे हिंदी को राष्ट्रीय एकता का माध्यम मानते थे।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (संविधान सभा के अध्यक्ष)

"हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि भाषा का निर्णय देश को विभाजित नहीं करे, अपितु एकजुट करे।" उन्होंने पूरे भाषाई विमर्श को संतुलित और निष्पक्ष रूप से संचालित किया।

बाबा साहब भीम राव अंबेडकर और पंडित जवाहरलाल नेहरू ने एकता और प्रशासनिक व्यावहारिकता पर जोर दिया।

बहस के बाद 1949 में संविधान सभा में एक ऐतिहासिक निर्णय हुआ:

हिंदी को संघ की राजभाषा बनाया गया। अंग्रेज़ी को अंतरिम रूप से 15 वर्षों तक सहायक भाषा के रूप में बनाए रखने का निर्णय लिया गया (अनुच्छेद 343)। अन्य भारतीय भाषाओं को आठवीं अनुसूची में स्थान मिला (14 भाषाएं मूल रूप से)।

भाषा समिति के कार्य पर आधारित प्रमुख प्रावधान जो संविधान के अनुच्छेद के रूप में आज हमारे सामने हैं -

अनुच्छेद 343	संघ की राजभाषा हिंदी होगी।
अनुच्छेद 344	भाषा आयोग और समिति की स्थापना की व्यवस्था, जो राजभाषा की प्रगति पर सुझाव देंगी।

अनुच्छेद 345–347 राज्यों में प्रयुक्त राज्य की भाषाओं से संबंधित प्रावधान।

अनुच्छेद 348–349 न्यायालयों एवं विधियों की भाषा से संबंधित नियम।

अनुच्छेद 350–350B भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा हेतु प्रावधान तथा उनके लिए विशेष अधिकारी।

अनुच्छेद 351 हिंदी भाषा के विकास और प्रसार के लिए केंद्र सरकार को निर्देश देना।

प्रमुख क्षेत्रीय भाषाओं को मान्यता देने की सिफारिश की गई जिससे आठवीं अनुसूची का जन्म हुआ।

आठवीं अनुसूची में प्रारंभ में 14 भाषाओं को शामिल किया गया था। वर्तमान में इसमें 22 अनुसूचित भाषाएँ हैं।

क्रम	भाषा	वर्ष	मूल/ संशोधन	लिपि	भाषा परिवार
1	असमिया	1950	मूल संविधान	असमिया	भारोपीय – इंडो आर्यन
2	बांग्ला	1950	मूल संविधान	बांग्ला	भारोपीय – इंडो आर्यन
3	गुजराती	1950	मूल संविधान	गुजराती	भारोपीय – इंडो आर्यन
4	हिंदी	1950	मूल संविधान	देवनागरी	भारोपीय – इंडो आर्यन
5	कन्नड	1950	मूल संविधान	कन्नड	द्रविड़ियन
6	कश्मीरी	1950	मूल संविधान	अरबी-फारसी, शारदा (सीमित)	भारोपीय – इंडो आर्यन
7	कोंकणी	1992	71वां संशोधन	देवनागरी, रोमन, कन्नड आदि	भारोपीय – इंडो आर्यन
8	मैथिली	2003	92वां संशोधन	देवनागरी	भारोपीय – इंडो आर्यन
9	मलयालम	1950	मूल संविधान	मलयालम	द्रविड़ियन
10	मणिपुरी	1992	71वां संशोधन	बंगाली, मीतै मयेक	तिब्बती-बर्मी
11	मराठी	1950	मूल संविधान	देवनागरी	भारोपीय – इंडो आर्यन

क्रम	भाषा	वर्ष	मूल/ संशोधन	लिपि	भाषा परिवार
12	नेपाली	1950	मूल संविधान	देवनागरी	भारोपीय – इंडो आर्यन
13	उड़िया	1950	मूल संविधान	उड़िया	भारोपीय – इंडो आर्यन
14	पंजाबी	1950	मूल संविधान	गुरमुखी	भारोपीय – इंडो आर्यन
15	संस्कृत	1950	मूल संविधान	देवनागरी	भारोपीय – इंडो आर्यन
16	संथाली	2003	92वां संशोधन	ओल चिकी, देवनागरी, बंगाली	ऑस्ट्रो-एशियाटिक
17	सिंधी	1967	21वां संशोधन	अरबी, देवनागरी	भारोपीय – इंडो आर्यन
18	तमिल	1950	मूल संविधान	तमिल	द्रविड़ियन
19	तेलुगु	1950	मूल संविधान	तेलुगु	द्रविड़ियन
20	बोडो	2003	92वां संशोधन	देवनागरी	तिब्बती-बर्मी
21	डोगरी	2003	92वां संशोधन	देवनागरी	भारोपीय – इंडो आर्यन
22	उर्दू	1950	मूल संविधान	अरबी-फारसी	भारोपीय – इंडो आर्यन

कुछ भाषाएँ एक से अधिक लिपियों में लिखी जाती हैं (जैसे कोंकणी, संथाली, सिंधी)।

संथाली के लिए ओल चिकी लिपि विशेष रूप से बनाई गई थी।

मणिपुरी की पारंपरिक लिपि मीतै मयेक अब पुनर्जीवित की जा रही है।

सिंधी और उर्दू भारत में आमतौर पर अरबी-फारसी लिपि में लिखी जाती हैं।

भाषा एक भावनात्मक और संवेदनशील मुद्दा था — विशेष रूप से हिंदी भाषी उत्तर भारत और गैर-हिंदी भाषी दक्षिण भारत के बीच। समिति के संतुलित दृष्टिकोण ने गंभीर भाषाई विभाजन को टालने में मदद की।

आठवीं अनुसूची में भाषा को शामिल किए जाने के प्रमुख लाभ

1. **आधिकारिक मान्यता और प्रतिष्ठा -** संबंधित भाषा को संवैधानिक दर्जा प्राप्त होता है। यह उस भाषा के बोलने वालों के लिए सांस्कृतिक और भाषाई गौरव का प्रतीक बनती है। शामिल भाषा को देशव्यापी स्वीकृति और वैधता प्राप्त होती है।

2. **संवर्धन और विकास -** अनुच्छेद 351 के अंतर्गत, सरकार उस भाषा के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए बाध्य होती है। इसके अंतर्गत निम्नलिखित सुविधाएं मिलती हैं जैसे कि भाषाई शोध और संरक्षण के लिए अनुदान, शैक्षणिक संसाधन, पाठ्यपुस्तकें और शब्दकोश तैयार करना, साहित्य, व्याकरण और अनुवाद परियोजनाओं को समर्थन एवं सहायता प्रदान करना।

3**. प्रतियोगी परीक्षाओं और सरकारी कार्यों में उपयोग**

भाषा को सिविल सेवा परीक्षा और अन्य केंद्रीय प्रतियोगी परीक्षाओं जैसे की नीट, इंजीनियरिंग आदि में उपयोग करने की अनुमति मिलती है। उम्मीदवार अपनी मातृभाषा में परीक्षा देकर समान अवसर प्राप्त कर सकते हैं।

मुख्य परीक्षाएं जिनमें भारतीय भाषाओं की अनुमति है:

संघ लोक सेवा आयोग- हिंदी सहित 22 भारतीय भाषाओं में निबंध, वैकल्पिक विषय और साक्षात्कार संभव। कर्मचारी चयन आयोग - अब कई परीक्षा प्रश्नपत्र 13+ भाषाओं में उपलब्ध कराए जा रहे हैं। बैंकिंग - प्राथमिक परीक्षा अब 12 क्षेत्रीय भाषाओं में भी उपलब्ध। सामान्य विश्वविद्यालय प्रवेश परीक्षा, नीट (चिकित्सा प्रवेश परीक्षा) और जेईई (इंजीनियरिंग प्रवेश परीक्षा) तीनों ही 13 भारतीय भाषाओं में आयोजित की जाती है।

4. **शिक्षा और प्रकाशन में माध्यम**

शैक्षणिक संस्थानों में उस भाषा में पाठ्यक्रम और शिक्षा की व्यवस्था को बढ़ावा मिलता है। सरकारी दस्तावेज, अधिसूचनाएँ और प्रकाशन उस भाषा में भी उपलब्ध कराए जाते हैं। भारतीय भाषाओं में उच्च शिक्षा को बढ़ाने हेतु भारतीय भाषा समिति का गठन https://bhartiyabhasha.education.gov.in किया गया है।

– बी. टेक पाठ्यक्रम अब 12+ भारतीय भाषाओं में उपलब्ध।

– पाठ्यपुस्तकों का अनुवाद (जैसे: हिंदी, तमिल, मराठी, बांग्ला)।

– बलु-भाषी लेक्चर वीडियो एमओओसी प्लेटफ़ॉर्म पर उपलब्ध है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा स्नातक व स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों में भारतीय भाषाओं में अध्यापन की अनुमति दी गई है और अनुवाद पोर्टल व ऑनलाइन कंटेंट का विकास किया जा रहा है।

5. **आधिकारिक मंचों पर प्रतिनिधित्व**

सरकारी चर्चाओं में बेहतर प्रतिनिधित्व मिलता है और केंद्र और राज्य स्तर पर भाषाई विरासत को संरक्षित और प्रोत्साहित करने का अवसर मिलता है।

6. **सांस्कृतिक पहचान**

पारंपरिक ज्ञान, मौखिक परंपराओं और साहित्य को संरक्षित करने में सहायक होती है और भाषाओं को हाशिए पर जाने से रोका जा सकता है और संकटग्रस्त भाषाओं को पुनर्जीवित किया जा सकता है।

7. **भाषा-विशिष्ट बोर्ड, अकादमी या संस्था**

आठवीं अनुसूची में शामिल किए जाने के बाद सरकारों द्वारा भाषा विकास बोर्ड अथवा अकादमी आदि स्थापित की जा सकती है। जैसे कि भारतीय भाषा परिषद, भाषा में विभिन्न स्थानों पर कार्यरत भारतीय भाषाओं के केंद्रीय संस्थान (https://ciil.org) जैसी संस्थाएं उस भाषा पर लक्षित कार्य करती हैं।

8. **डिजिटल और तकनीकी मंचों तक पहुँच**

सरकार द्वारा वित्तपोषित और विकसित भाषा टूल्स, जैसे अनुवाद सॉफ्टवेयर, कीबोर्ड लेआउट्स, और एआई आधारित संसाधन, आठवीं अनुसूची की भाषाओं में उपलब्ध कराए जाते हैं। भारत सरकार द्वारा आईएलडीसी आदि संस्थान इस महती कार्य में अपनी भूमिका निभा रहे हैं।

आठवीं अनुसूची की भाषाओं के विकास एवं प्रयोग की संभावनाओं के मद्देनज़र वर्तमान में कई क्षेत्रीय भाषाओं और बोलियों को भी इसमें शामिल किए जाने की माँग की जाती रही हैं। इनमें प्रमुख हैं भोजपुरी, राजस्थानी, गढ़वाली, मगही, अंगिका, तुलु, कोडवा आदि। इन भाषाओं के पक्षधर मानते हैं कि यदि इन्हें अनुसूची में स्थान नहीं दिया गया तो इनका अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है।

आठवीं अनुसूची की भाषाओं को तकनीकी रूप से सशक्त बनाना डिजिटल समावेशन, सांस्कृतिक संरक्षण, और भाषाई समानता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इन पहलों से न केवल भाषाओं को भविष्य में जीवंत बनाए रखा जा सकेगा, बल्कि तकनीकी विकास में भागीदारी भी सुनिश्चित की जा सकेगी। इस दिशा में भी कई प्रयास समय-समय पर विभिन्न स्तरों पर किए जाते रहे हैं।

भाषा संसाधन केंद्र - भारत सरकार ने भारतीय भाषा प्रौद्योगिकी पहल के अंतर्गत कई संस्थानों को भाषा संसाधन केंद्र के रूप में विकसित किया है। इनका उद्देश्य भाषाओं के लिए कॉर्पस डेवेलपमेंट, टूलकिट निर्माण, और डिजिटल लिप्यंतरण को बढ़ावा देना है। यह भारतीय भाषा प्रोसेसिंग कंसोर्टियम के अंतर्गत काम करते हैं।

भारतीय भाषा प्रौद्यौगिकी प्रसरण एवं विस्तारण केंद्र - इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (MeitY) के तहत यह केंद्र आठवीं अनुसूची की भाषाओं में तकनीकी संसाधनों के विकास के लिए महत्वपूर्ण है। यूनिकोड लिपि समर्थन, मशीन ट्रांसलेशन, स्पीच रिकग्निशन और सिंथेसिस, भाषाई ओसीआर (पाठ पहचान) टूल, भाषाई कीबोर्ड व फॉन्ट्स का विकास आदि इनके मुख्य कार्य हैं। टीडीआईएल पोर्टल पर इन भाषाओं के लिए सॉफ्टवेयर व डाटा उपलब्ध हैं। यह भारत के भाषाई विविधता को तकनीकी दुनिया से जोड़ने का प्रयास है। इससे शिक्षा, ई-गवर्नेंस, एप डेवलपमेंट, और डिजिटल साक्षरता में क्षेत्रीय भाषाओं की भूमिका बढ़ी है। यह भाषाओं के संरक्षण और प्रचार में मदद करता है।

भाषिणी– एआई आधारित राष्ट्रीय भाषा प्लेटफ़ॉर्म - डिजिटल इंडिया मिशन के अंतर्गत शुरू की गई भाषिणी पहल का उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं को एआई सक्षम भाषाई टेक्नोलॉजी से जोड़ना है। भाषा बाधा रहित भारत हेतु एआई मॉडल्स के ज़रिये अनुवाद, स्पीच-टू-टेक्स्ट, टेक्स्ट-टू-स्पीच, सभी 22 अनुसूचित भाषाओं में सरकारी सेवाओं की पहुँच इसका मुख्य उद्देश्य है।

यूनिकोड लिपि समर्थन- आठवीं अनुसूची की सभी भाषाओं को यूनिकोड में शामिल किया गया है ताकि डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म पर इन भाषाओं में: टाइपिंग, वेबसाइट निर्माण, ऐप इंटरफेस, मोबाइल डिवाइस सपोर्ट संभव हो सके।

भाषाई सर्च इंजन और ब्राउज़र सपोर्ट - गूगल, माइक्रोसॉफ्ट, मोज़िला, एन्ड्रॉयड, आईओएस आदि 22 भाषाओं में इंटरफ़ेस, वॉयस असिस्टेंट सपोर्ट (गूगल असिसटेंट,

अलेक्सा आदि) क्षेत्रीय भाषाओं में कंटेंट फिल्टरिंग और सुझाव आदि उपलब्ध कराए जाते हैं।

क्षेत्रीय भाषाओं के लिए नैचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग - भारतीय भाषाओं के लिए एनएलपी टूल्स विकसित किए गए हैं जैसे कि पार्ट ऑफ स्पीच टैगिंग, लैमैटाइजेशन, सेंटिमेंट एनालिसिस, नाम पहचान, भाषाई मॉडल जैसे बीईआरटी, इंडिक बीईआरटी, आदि।

शिक्षा व ई-लर्निंग प्लेटफ़ॉर्म – दिशा, स्वयं, ई- पाठशाला जैसे पोर्टल अब आठवीं अनुसूची की भाषाओं में सामग्री प्रदान कर रहे हैं। एआईसीटीई ने तकनीकी शिक्षा के लिए क्षेत्रीय भाषाओं में पाठ्यक्रम शुरू किए हैं।

मोबाइल ऐप्स और टूल्स – गूगल ट्रांसलेट अब लगभग सभी अनुसूचित भाषाओं को सपोर्ट करता है। इंडिक की-बोर्ड जैसे इनपुट टूल भाषाई ओसीआर और वॉयस टाइपिंग ऐप्स भी भारतीय भाषाओं को समर्थन देते हैं।

डिजिटल साक्षरता मिशन में भाषाई समावेशन -ग्रामीण और दूरदराज क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता में स्थानीय भाषाओं का समावेश किया गया। प्रधानमंत्री ग्रामीण डिजिटल साक्षरता अभियान इसका उदाहरण है। भारत की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषाओं और अन्य प्रमुख भाषाओं के लिए डिजिटल संसाधनों, उपकरणों और तकनीकी डाटा को एकत्र करना, विकसित करना और उपलब्ध कराने में कई स्तरों पर प्रयास जारी हैं।

इनस्क्रिप्ट की-बोर्ड भारत की भाषाई विविधता को तकनीकी एकता में बदलने का प्रयास है-

यह ऐसा कीबोर्ड है जिसके माध्यम से किसी भी भारतीय भाषा में दक्षता के साथ एक ही लेआउट के ज़रिए टाइपिंग संभव है। यह पहल डिजिटल भारत को भाषाई समावेशिता और प्रौद्योगिकीय समानता की ओर ले जाती है। इनस्क्रिप्ट की-बोर्ड भारत सरकार द्वारा विकसित एक मानकीकृत टाइपिंग लेआउट है, जो सभी भारतीय भाषाओं के लिए एकसमान कुंजी विन्यास प्रदान करता है। इसका उद्देश्य है "एक भारत, एक की-बोर्ड" - यानी कि उपयोगकर्ता को हर भाषा के लिए अलग-अलग टाइपिंग शैली सीखने की आवश्यकता नहीं होगी।

इनस्क्रिप्ट की-बोर्ड का विकास 1986 में भारतीय लिपियों की यूनिकोड में डिजिटल प्रयास के रूप में शुरू किया गया था। वर्तमान में विंडोज, मैक, लिनक्स, एंड्रॉइड, आईओएस, वेब टूल्स आदि पर यह उपलब्ध है। यहाँ देवनागरी, बांग्ला, गुजराती, गुरमुखी, मलयालम, तमिल, तेलुगु, कन्नड, उड़िया, संस्कृत आदि लिपियाँ उपलब्ध हैं।

इसका उद्देश्य है कि सभी भारतीय भाषाओं के लिए एक समान टाइपिंग अनुभव हो, सरल और तेज़ टाइपिंग के लिए कुंजी संरचना में एकरूपता, आधिकारिक संचार और ई-गवर्नेंस में क्षेत्रीय भाषाओं को बढ़ावा देना, डिजिटल भारत मिशन के तहत भाषाई समावेशन करना आदि। शिक्षण अनुकूल होने के साथ इसे स्कूलों/कॉलेजों में सिखाने योग्य मानकीकृत तरीका अपनाया जा सकता है जो भारत की भाषाई विविधता को और मजबूत बनाएगा।

संसदीय राजभाषा समिति - हिंदी एवं आठवीं अनुसूची की भाषाओं के संदर्भ में संसदीय राजभाषा समिति ने समय-समय पर कई सिफारिशें की हैं, जिनका उद्देश्य राजभाषा हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के प्रयोग, प्रचार और संवर्धन को सुनिश्चित करना है। इन सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रपति द्वारा आदेश भी जारी किए गए हैं, जो प्रशासनिक अमल में लाए जाते हैं। प्रशासनिक कामकाज में भारतीय भाषाओं के उपयोग को बढ़ाने हेतु समिति ने सुझाव दिया कि केंद्र और राज्यों में आठवीं अनुसूची की भाषाओं में पत्राचार, फॉर्म और सेवाएँ आदि उपलब्ध कराया जाना।

2. कंप्यूटर और डिजिटल सेवाओं में क्षेत्रीय भाषाओं का समावेशन करते हुए सभी अनुसूचित भाषाओं के लिए इनस्क्रिप्ट की-बोर्ड, ओसीआर, स्पीच टूल्स आदि विकसित कर उनका उपयोग बढ़ाना।

3. अदालतों में अनुवादित दस्तावेज़ एवं स्थानीय भाषाओं में फैसलों की उपलब्धता सुनिश्चित किया जाना।

4. शिक्षा में मातृभाषा का प्रयोग - प्राथमिक से उच्च शिक्षा तक आठवीं अनुसूची की भाषाओं को शिक्षण माध्यम बनाने की सिफारिश। इंजीनियरिंग और मेडिकल शिक्षा भी मातृभाषाओं में उपलब्ध कराने हेतु भी निर्देश दिए गए हैं।

5. सभी सरकारी वेबसाइट और मोबाइल एप्स क्षेत्रीय भाषाओं में डिजिटल इंडिया के अंतर्गत सभी सरकारी पोर्टल और एप्लिकेशन 22 अनुसूचित भाषाओं में उपलब्धता सुनिश्चित कराने हेतु भी निर्देश समय-समय पर जारी किए गए हैं।

भारत सरकार ने हाल के वर्षों में नई शिक्षा नीति के माध्यम से उच्च शिक्षा और प्रतियोगी परीक्षाओं में भारतीय भाषाओं विशेषतः आठवीं अनुसूची में शामिल भाषाओं के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण नीतिगत और व्यावहारिक कदम उठाए हैं। इसका उद्देश्य यह है कि छात्रों को मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करने और प्रतियोगी परीक्षाओं में भाग लेने का समान अवसर प्रदान करना है।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग - यह भारत सरकार का एक संवैधानिक निकाय है, जिसकी स्थापना 1961 में की गई थी। इसका मुख्य कार्य है – वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक और शैक्षिक शब्दों का भारतीय भाषाओं में निर्माण, विकास, समन्वयन और प्रचार-प्रसार करना। उच्च शिक्षा, विज्ञान, प्रशासन आदि क्षेत्रों में प्रयुक्त शब्दों का मानकीकरण करना, वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों की शब्दावली का निर्माण करना, अन्य भारतीय भाषाओं में हिंदी के माध्यम से शब्दों का प्रसार और अनुवाद, शिक्षण संस्थानों को भारतीय भाषाओं में शिक्षण सामग्री आदि उपलब्ध कराना है।

शब्दावली आयोग ने आठवीं अनुसूची की भाषाओं में तकनीकी शब्दों को विकसित कर शिक्षा, प्रशासन और विज्ञान के क्षेत्र में मातृभाषा का सशक्त उपयोग सुनिश्चित किया है। https://cstt.education.gov.in शब्दावली आयोग भारतीय भाषाओं के सशक्तिकरण की रीढ़ है। यह न केवल हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक व प्रशासनिक संप्रेषण को संभव बनाता है, बल्कि भाषाई समावेशन, शिक्षा का लोकतंत्रीकरण और राष्ट्र की सांस्कृतिक विविधता को सम्मान देने का कार्य करता है।

यूनियन बैंक के द्वारा ''भाषा सौहार्द इन्द्रधनुष" कार्यक्रम के माध्यम से स्टाफ सदस्यों को विभिन्न भारतीय भाषाओं का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने हेतु प्रशिक्षण चलाया जाता हैं। हम कह सकते हैं कि भारत को अपनी भाषाई धरोहर पर गर्व है और उसे सहेजना हम सबका कर्तव्य है।

अनुक्रमणिका

क्रम संख्या	विषय	लेखक का नाम	पृष्ठ संख्या
1.	हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का सह-अस्तित्व	अम्बरीष कुमार सिंह	1
2.	असमिया भाषा और संस्कृति: सुंदरता, साहित्य और संगीत की धरोहर	प्रभाकर पाल	6
3.	बांग्ला भाषा की उत्पत्ति एवं उसका विकास	अमित महतो	10
4.	गुजराती भाषा का इतिहास एवं विकास	उपासना सिरसैया	18
5.	ओड़िया साहित्य – इतिहास, प्रमुख लेखक	प्रीति साव	23
6.	उर्दू: ग़ज़ल, शायरी और सौंदर्य-बोध की भाषा	जफ़र रिज़वी	29
7.	कन्नड भाषा की उत्पत्ति एवं विकास	प्रशांत एन. कित्तली	33
8.	तमिल: प्राचीन सभ्यता और गौरव की भाषा	तमिळरसी एस	37
9.	तेलुगु भाषा की उत्पति एवं विकास	पी विवेक सुधा	43
10.	पंजाबी भाषा की उत्पति एवं विकास	रेणु बाला	48
11.	कश्मीरी भाषा: एक सांस्कृतिक और भाषाई धरोहर	अंकित महाजन	53
12.	मराठी भाषा का इतिहास एवं विकास	मेघना अवचट	57
13.	मलयालम भाषा और साहित्य की उत्पत्ति एवं विकास	कला सी एस	63
14.	संस्कृत भाषा: ज्ञान और दर्शन की मूलाधार	हिमाँशु शर्मा	69

क्रम संख्या	विषय	लेखक का नाम	पृष्ठ संख्या
15.	हिंदी भाषा: राष्ट्र की आधिकारिक अभिव्यक्ति	विकास तिवाड़ी	74
16.	सिंधी एक सांस्कृतिक पहचान	मनाली वधारिया	79
17.	कोंकणी भाषा: एक अवलोकन	युवराज भोवर	84
18.	नेपाली भाषा और हिंदी भाषा में व्याकरण के दृष्टिकोण से विश्लेषण	गृज नन्दन गुप्ता	88
19.	मणिपुरी (मैतेई) भाषा की उत्पत्ति और विकास	ख़ुमनथेम बेंकिन देवी	94
20.	पहाड़ी अंचल की वाणी: डोगरी भाषा	साहिल प्रोच	97
21.	बोडो भाषा: उत्तर-पूर्वी भारत की भाषाई पहचान	पौलुस मोसाहारी	101
22.	सहज, सरस और सुरीली - मैथिली	सावन सौरभ	106
23.	संथाली भाषा का सफर और साहित्य का विकास	बेबी रिंकी पुरती	114
24.	भाषा विकास संबंधी सरकारी प्रयास	सुधीर भोला कृष्णा प्रसाद	119
25.	भाषा सेतु की भूमिका में ई-टूल्स	आदर्श कुमार सिंह	124
26.	भाषा सौहार्द इंद्रधनुष: शब्द और संबंध	देवकांत पवार	130
27.	बैंकिंग में स्थानीय भाषा का महत्व	पूजा वर्मा	133
28.	ग्राहक सेवा में भाषा से विश्वास	कृष्ण कुमार यादव	139
29.	लुप्त होती क्षेत्रीय भाषाएं	सुनील दत्त	144
30.	डिजिटल उत्पादों में क्षेत्रीय भाषा एवं सुगम्यता	अर्पित जैन	150
31.	भारतीय भाषाओं पर एआई का प्रभाव	गायत्री रवि किरण	159

हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का सह- अस्तित्व

'कोस-कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी' ऐसी कहावत वाले देश में भाषाओं की बहुलता एक सामान्य विषय है। उनके मध्य परस्पर सौहार्द भी स्पष्ट दिखता है। कभी कभार छिटपुट विवाद भी रहता है। किंतु वर्तमान में भाषाई दृष्टि से आकलन करें तब हम पायेंगे कि देश के विभिन्न हिस्सों में हिंदी भाषा की पिटाई ध्यानाकर्षण का एक आसान साधन बनता जा रहा है। देश के विभिन्न प्रांतों में ये घटनाएं अक्सर सुनने और देखने को मिल रही हैं जिसमें स्थानीय भाषा को आधार बनाकर हिंदी की पिटाई हो रही होती है। वस्तुतः यह नई बात नहीं है, हमारे देश में भाषा संबंधी विवाद रहा है और रहेगा। जिस देश में हजारों भाषाएं और बोलियों का अस्तित्व होगा वहाँ इस तरह की घटनाएं भी होंगी। अपनी-अपनी मातृभाषा के प्रति लगाव स्वाभाविक और औचित्यपूर्ण है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी भाषा पर गर्व होना चाहिए और उस भाषा के संवर्धन के लिए उसे आजीवन प्रयास करते रहना चाहिए। साथ ही भाषाई सह-अस्तित्व को भी महत्व देना सीखना चाहिए जो इस देश की एकता और अखंडता का अविभाज्य घटक है। हमारे देश के लोकतंत्र की यह विशेषता है कि कोई भी व्यक्ति किसी को भी चुनौती दे सकता है चाहे वह कितना भी शक्तिशाली हो। यह विशेषता भाषाई स्तर पर भी लागू होती है। एक भाषा को देश की राजभाषा घोषित करने के लिए कई घटकों में से एक घटक यह भी था कि देश की बड़ी जनसंख्या इसका प्रयोग करती है। आज भी यही सच्चाई है, भारतीय समाज के एक वर्ग द्वारा अंग्रेजीकरण के पुरजोर अभियान के बावजूद लगभग साठ करोड़ देशवासी इस भाषा को बोलते हैं। यह दिगर बात है कि इस जनबल के बावजूद भी इस भाषा का गला यदा-कदा धर ही लिया जाता है। अबतक के भाषा-विरोधी अभियानों पर गौर करें तो यह दिखता है कि स्थानीय नौकरियों एवं स्थानीय चुनावों के परिणामों में विशेष और प्रभावी हस्तक्षेप के कारण इसे कोपभाजन का शिकार होना पड़ता है। वर्तमान में यह नई शिक्षा नीति में भाषाई प्रावधानों के कारण भी कटघरे में है। इस पूरी प्रक्रिया में अच्छी बात यह है कि देश में यह घटना कहीं भी हो रही हो, इसके साठ करोड़ बोलने वाले कभी प्रतिक्रिया नहीं देते हैं। यहाँ तक कि एक बड़ा वर्ग है जिसमें इतर भाषी भी हैं जो इस भाषा को खाते-पीते और ओढ़ते-बिछाते हैं लेकिन इसके अपमान पर चुप ही रहते हैं। यह सहिष्णुता

और भाषाई सह- अस्तित्व का अद्वितीय उदाहरण है। यह हमारे जनतंत्र की ताकत है कि देश के संविधान निर्माताओं ने जिस भाषा को देश की राजभाषा कहा वह आज की नव-अवधारणा वाली भाषा अस्मिताओं की राजनीति से कोसों दूर है। इसके बोलने वाले कभी और कहीं भी किसी भी भारतीय भाषा से इसकी तुलना नहीं करते, नहीं कहते कि हमारी भाषा महान है। हिंद महासागर से लेकर हिमालय तक और पूर्वी कछार से लेकर पश्चिम में कच्छ तक इसके प्रयोगकर्ताओं में कोई दंभ नहीं दिखता है। वे विषम भाषाई परिस्थिति एवं परिवेश में भी इसके साथ यह सोचकर खड़े रहते हैं कि भाषाई विकलांगता की लाचारी और बेबसी के बावजूद भी उनकी रोटी और भूख को सुन और समझ लिया जाएगा। उनकी यही अवस्था है जो हिंदी को विशेष बनाती है और इस भावना को प्रबलता देती है कि हिंदी से किसी भी भारतीय भाषा का टकराव नहीं है, यह समस्त भारतीय भाषाओं को अपने साथ लेकर चलने में समर्थ और सक्षम है। यहाँ संविधान के अनुच्छेद 351 का उल्लेख करना उपयुक्त होगा, जिसमें यह अपेक्षा की गई है कि, ".....संघ हिंदी को इस प्रकार विकसित करेगा कि वह देश की मिलीजुली संस्कृति को अभिव्यक्त कर सके। संघ से यह भी अपेक्षा है कि जहां तक संभव हो, भारतीय भाषाओं के शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियों से हिंदी को समृद्ध किया जाए.....।"

संविधान प्रदत्त इस जिम्मेवारी को निभाने में हिंदी सतत लगी हुई है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि हिंदी ने कन्नड़, तेलगु, तमिल, बांग्ला, गुजराती, मराठी से सैकड़ों शब्द ग्रहण किए हैं। आज दक्षिण भारत की अधिकांश फिल्में हिंदी में डब हो रही हैं जाहिर है कुछ ऐसे शब्द जरूर रहेंगे जिनको हिंदी में व्यक्त नहीं किया जा सकता। दक्षिण भारतीय भाषाओं के ऐसे शब्द हिंदी भाषियों की जुबान पर चढेंगे, लोकप्रियता पाएंगे और कालांतर में हिंदी भाषा की शब्दावली को समृद्ध करेंगे। परिणामस्वरूप विभिन्न भारतीय भाषाओँ से समृद्ध हिंदी स्वतः इस देश की संपर्क भाषा के रूप में विकसित होगी। उदाहरणस्वरूप 'छाता' बांग्ला भाषा का शब्द है। हिंदी ने उसे अपनाया और पूरे भारत में यह सभी भाषा-भाषियों के बीच इसी रूप में प्रचलित है। इसी प्रकार 'हड़ताल' गुजराती भाषा का शब्द है किंतु आज पूरे देश में विभिन्न भाषा-भाषी प्रयोग कर रहे हैं, इसका श्रेय भी हिंदी को ही जाता है। मुंबई में एक शब्द प्रयुक्त होता है 'चाल' अर्थात 'छोटा कमरा', यह शब्द मलयालम का है हिंदी भाषियों ने इसे लपक लिया और भारत के कोने – कोने में पहुँचा दिया। आज भारत में जहाँ भी मजदूर वर्ग रहता है और उसका निवास एक छोटा

कमरा है वह उसे 'चाल' ही कहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि हिंदी के माध्यम से अन्य भारतीय भाषाएं भी देश के विभिन्न हिस्सों तक पहुँच रही हैं।

हिंदी समेत देश की कई भाषाओं में एक मुहावरा है-'तू डाल-डाल, मैं पात-पात'। तेलुगु में भी यह मुहावरा है। उसका हिंदी अनुवाद होता है-'तू मेघा-मेघा, मैं तारा-तारा'। विभिन्न भाषाओं में प्रचलित ऐसे समार्थी मुहावरों को हिंदी में अपनाकर देश के विभिन्न हिस्सों तक आसानी से पहुँचाया जा सकता है। इससे भारतीय भाषाओं के मध्य परस्पर सम्मान बढ़ेगा और सह-अस्तित्व की भावना प्रबल होगी।

मातृभाषा की उन्नति के बिना किसी भी समाज की उन्नति संभव नहीं है अतः वर्तमान सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भारतीय भाषाओं में शिक्षा पर बल दिया है। यह आवश्यक है कि समस्त देशवासी इस शिक्षा नीति को भाषाई अस्मिता से उपर उठकर देखें। इसमें कोई शक नहीं कि भारत कि अन्य सभी भाषाएँ हिंदी से प्राचीन हैं, उनकी एक सुदीर्घ परंपरा है, वे शास्त्रीय भाषाएँ हैं। वहीं हिंदी की सबसे बड़ी शक्ति इसकी वैज्ञानिकता, मौलिकता, सरलता और स्वीकार्यता है। हिंदी की विशेषता है कि इसमें जो बोला जाता है, वही लिखा जाता है। हिंदी एक सर्वसुलभ, सहज ग्रहणीय भाषा है और इसका स्वरूप समावेशी है। हिंदी आधुनिक भी है और पुरातन भी, यूँ कि इसका इतिहास खँगालें तब यह यह अधिकतम 1000 से 1500 वर्ष पुरानी दिखती है वहीं इसकी लिपि देवनागरी है जो संस्कृत जैसी प्राचीनतम भाषा की लिपि है। हिंदी के ये अद्वितीय गुण हैं जो इसे मात्र एक भाषा के स्तर से ऊपर उठाकर एक संस्कृति होने का सम्मान दिलाते हैं।

देश ने हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया है। अतः राजभाषा हिंदी के माध्यम से देश की जनता की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक अपेक्षाओं को पूरा करने वाली सरकारी योजनाओं को समाज के आखिरी सिरे तक पहुंचाना सरकारी तंत्र का प्रमुख कर्तव्य है। यह सरकारी तंत्र और उसकी भाषा की सफलता की कसौटी भी है, साथ ही संविधान निर्माताओं का सपना भी है।

यदि हम चाहते हैं कि हमारा जनतंत्र निरंतर प्रगतिशील रहे और सशक्त बने तब हमें संघ के कामकाज में हिंदी और राज्यों के कामकाज में उनके प्रांतों की राजभाषाओं का प्रयोग करना होगा। हिंदी आज सशक्त है, आज का बाजार हिंदी के दबाव में है, आज देश का राजनितिक वातावरण हिंदी के प्रभाव में है, हिंदी को वर्तमान स्वरूप तक पहुंचाने

में देश के सभी प्रदेशों का महत्वपूर्ण योगदान है। भारत की सभी भाषाएं समृद्ध हैं। सभी भाषाओं का अपना साहित्य, शब्दावली, अभिव्यक्ति और संस्कृति है। साथ ही इन सभी भाषाओं में भारतीयता की एक आंतरिक शक्ति भी है। यही शक्ति इन भाषाओं के सह-अस्तित्व का सबसे बड़ा कारण है।

हिंदी की सेवा अनेक हिंदीतरभाषियों ने भी की है। महात्मा गांधी ने कहा था कि हिंदी भारतीय चिंतन-धारा का स्वाभाविक विकास-क्रम है और इसलिए हिंदी भाषा का प्रश्न उनके लिए स्वराज्य का प्रश्न था। महात्मा गाँधी गुजराती थे इनके अतिरिक्त सुब्रह्मण्य भारती, सुमति अय्यर और पी. जयरामन तमिलभाषी, मोटूरि सत्यनारायण, भीमसेन निर्मल, बाल शौरि रेड्डी और यार्लगड्डा लक्ष्मी प्रसाद तेलुगुभाषी, जी. गोपीनाथन, एन चंद्रशेखरन नायर, एनई विश्वनाथ अय्यर मलयालम भाषी, एवं इसी क्रम में बीवी कारंत और नारायण दत्त जैसे कन्नड़भाषियों ने भी हिंदी की जो सेवा की है उसे हमें याद रखना चाहिए। अनेक मराठी भाषियों जैसे माधव राव सप्रे, बाबूराव विष्णु पराड़कर, प्रभाकर माचवे, चंद्रकांत वांडिवडेकर, सखाराम गणेश देउस्कर, लक्ष्मण नारायण गर्दे, राहुल बारपुते ने हिंदी की अनन्य सेवा की है। वहीं राजा राममोहन राय, नलिनी मोहन सान्याल, सुनीति कुमार, श्याम सुंदर सेन, अमृतलाल चक्रवर्ती, चिंतामणि घोष, शारदा चरण मित्र, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, और रवींद्रनाथ टैगोर जैसे बांग्लाभाषियों ने भी हिंदी की खूब सेवा की है। रवींद्रनाथ टैगोर ने विश्वभारती में हिंदी भवन की स्थापना करके आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को उसका प्रभारी नियुक्त किया था। इन मनीषियों के दिखाए मार्ग पर आज भी इतर भाषा-भाषियों की एक बड़ी जमात हिंदी भाषा को आज भी समृद्ध कर रही है।

हिंदी ने जहाँ राष्ट्रीय एकता का मार्ग प्रशस्त किया वहीं उसने इस धारणा को भी प्रबलता दी कि भारत का विकास और राष्ट्रीय एकता की रक्षा प्रादेशिक भाषाओं के पूर्ण विकास से ही संभव है। सहयोग और समभाव के लक्ष्य की प्राप्ति हिंदी के माध्यम से ही संभव होती रही है और भविष्य में होती रहेगी। विविधता और बहुभाषिकता भारत की अनन्य विशेषता है। विगत कई दशकों से विभिन्न भारतीय भाषाओं के साथ हिंदी का सहज संबंध विकसित हुआ है। हिंदी और भारतीय भाषाओं का पारस्परिक आदान-प्रदान संगठित एवं योजनाबद्ध तरीके से बढ़ा है, इसे और बढ़ाने की आवश्यकता है।

हिंदी और भारतीय भाषाओं के बीच पारस्परिक भाषाई और सांस्कृतिक साझेदारी

विकसित होने पर देशवासियों के बीच तालमेल और बेहतर होगा। हमें निजी और क्षेत्रीय अस्मिता से उपर उठकर राष्ट्रीय अस्मिता को महत्व देना होगा। भारतीय भाषाओं के बीच सुगम संबंध की समझ विकसित हो इसके लिए उपयुक्त वातावरण के निर्माण के लिए संकल्पित होना होगा। इसके साथ ही हिंदी और भारतीय भाषाओं के बीच अन्योन्याश्रित संबंध विकसित हो इस हेतु शोध व संधान भी करना होगा। हिंदी के अखिल भारतीय बोध के विस्तार के लिए साठ करोड़ हिंदी भाषियों को हिंदीतर भाषाओं के प्रति उन्मुख, उदार और सहिष्णु बना रहना होगा ..... और यह ध्यान रहे कि देश की सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनितिक एकता की धुरी, देश की भाषाओं के मध्य अन्योनाश्रय संबंध ही है और कुछ नहीं.....।

अम्बरीष कुमार सिंह

असमिया भाषा और संस्कृति: सुंदरता, साहित्य और संगीत की धरोहर

भारत के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र को प्राकृतिक सुंदरता की भूमि माना जाता है, और असम राज्य, जो इस क्षेत्र का हिस्सा है, एक समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर, जीवंत परंपराओं और एक ऐसी भाषा का घर है जो यहां के लोगों की आत्मा को व्यक्त करती है। असमिया भाषा केवल एक संवाद का माध्यम नहीं है, बल्कि असम की पहचान का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो इसकी सदियों पुरानी परंपराओं, साहित्यिक रचनाओं और सांस्कृतिक जीवंतता को संरक्षित करती है। आइए हम असमिया भाषा, इसके विकास, इसकी सांस्कृतिक धरोहर की समृद्धि और असमिया साहित्य, संगीत, नृत्य आदि में इसके महत्वपूर्ण योगदान का गहन अध्ययन करें।

ऐतिहासिक दृष्टि से असमिया भाषा की जड़ें प्राचीन काल तक फैली हुई हैं, और इसका उद्गम क्षेत्र की "प्राकृत" भाषाओं से है। असमिया की प्रारंभिक रूपरेखा "मगधी प्राकृत" से उत्पन्न हुई थी, जो प्राचीन भारतीय उपमहाद्वीप में छठी सदी ईसा पूर्व के आसपास बोली जाती थी। असमिया अन्य इंडो-आर्यन भाषाओं की तरह इन प्राचीन भाषाओं से विकसित हुई। प्राकृत से असमिया के शास्त्रीय रूप में परिवर्तन 7वीं से 10वीं सदी के बीच हुआ, और इस दौरान क्षेत्रीय भाषाई और सांस्कृतिक प्रभावों का समावेश हुआ था।

12वीं सदी तक, असमिया भाषा एक विशिष्ट रूप में विकसित हो चुकी थी, जो धार्मिक सुधार आंदोलनों से प्रभावित थी। मध्यकाल में यह भाषा उस रूप में विकसित हुई जिसे हम आज पहचानते हैं। इसके इस स्वरूप पर संस्कृत और क्षेत्रीय भाषाओं का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है।

हालांकि असमिया मुख्य रूप से असम के ब्रह्मपुत्र घाटी में बोली जाती है, इसका प्रभाव सदियों से आसपास के क्षेत्रों तक फैला है। असमिया का प्रभाव आज भी अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड और पश्चिम बंगाल तथा बांग्लादेश के उन समुदायों में देखा जा सकता है जहां असमिया बोलने वाले प्रवासी समुदाय बस गए हैं। 2011 की भारतीय जनगणना के

अनुसार असमिया बोलने वालों की संख्या एक करोड़ चालीस लाख से अधिक है, जो इसे भारत में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में 32वें स्थान पर प्रतिष्ठित करता है।

असमिया केवल संवाद का एक माध्यम नहीं है, बल्कि यह असम के लोगों की पहचान को भी व्यक्त करती है। यह भाषा क्षेत्र के इतिहास, सांस्कृतिक धरोहर और लोगों की परंपराओं, रीति-रिवाजों, और जीवन शैली से गहरे रूप से जुड़ी हुई है। असमिया का विकास सांस्कृतिक आदान-प्रदान, व्यापार और धार्मिक सुधारों के शताब्दियों पुराने इतिहास से प्रभावित हुआ है। असम आंदोलन (1970 और 1980 के दशक) जैसे राजनीतिक संघर्षों के बावजूद, असमिया भाषा का अस्तित्व और विकास इस बात का प्रमाण है कि यह भाषा असम के लोगों के लिए कितनी महत्वपूर्ण है।

लेखन की दृष्टि से असमिया लिपि एक सुंदर और अद्वितीय घटक है, जो असमिया भाषा के साथ-साथ क्षेत्र की संस्कृति और धरोहर से गहरे रूप से जुड़ी हुई है। यह प्राचीन "ब्राह्मी" लिपि से उत्पन्न हुई है और बांग्ला लिपि से कुछ समानताएँ साझा करती है, हालांकि असमिया लिपि में विशिष्ट भेद हैं। यह लिपि विशेष रूप से बौद्ध धर्म के प्रसार और 15वीं सदी में नव-वैष्णव आंदोलन के धार्मिक साहित्य के साथ विकसित हुई थी।

असमिया लिपि एक "अबुगिडा" प्रणाली है, जिसका अर्थ है कि प्रत्येक अक्षर एक व्यंजन को दर्शाता है जिसमें एक अंतर्निहित स्वर ध्वनि होती है, और स्वर को उच्चारण चिह्नों से बदला जा सकता है। असमिया लिपि अपनी गोलाकार, वक्राकार रूपरेखा के लिए प्रसिद्ध है, जो लेखन को एक कलात्मक रूप देती है। अक्षरों का गोलाकार रूप निरंतरता और प्रवाह का अहसास कराता है, जैसे असम की जीवन रेखा, ब्रह्मपुत्र नदी, जो असम के हृदय से बहती है।

असमिया ने डिजिटल युग में अपनी उपस्थिति स्थापित की है। यूनिकोड मानकों ने यह सुनिश्चित किया है कि असमिया लिपि को डिजिटल संचार में, जैसे वेबसाइट्स, सोशल मीडिया और मोबाइल ऐप्स में उपयोग किया जा सके। इस डिजिटल अनुकूलन ने असमिया भाषा और संस्कृति को वैश्विक मंचों पर संरक्षित और बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

असमिया का व्याकरण इंडो-आर्यन भाषाओं के सामान्य ढांचे पर आधारित है, जिसमें कर्ता-कर्म-क्रिया वाक्य रचना क्रम का पालन किया जाता है। असमिया का एक अद्वितीय गुण इसकी संज्ञा रूपांतरण प्रणाली है। संज्ञाएँ असमिया में मामले (जैसे, कर्ता, कर्म, उद्देश्य, आदि) और संख्याओं के आधार पर बदलती हैं। क्रियाएँ भी काल, दृष्टि, रूप, और विषय के लिंग के अनुसार संयुगमित होती हैं। असमिया के व्याकरण में औपचारिक और अनौपचारिक सर्वनामों के बीच भेद भी महत्वपूर्ण है, जो असमिया समाज में सम्मान और सामजिक संरचनाओं को दर्शाता है।

असमिया को अक्सर एक सुरमई भाषा के रूप में वर्णित किया जाता है, जो इसकी ध्वन्यात्मक संरचना के कारण है। इस भाषा में महाप्राण ध्वनियाँ और नासिकीय स्वर होते हैं, जो इसके बोलने में एक संगीतात्मक लय प्रदान करते हैं। भाषाविज्ञानी और संगीतज्ञों ने असमिया के स्वाभाविक लय को पहचाना है, जो इसकी काव्यात्मक और गीतात्मक अभिव्यक्तियों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। असमिया का ध्वनि तंत्र इसके साहित्य और संगीत धरोहर में महत्वपूर्ण योगदान देता है, जो इसे पारंपरिक लोक संगीत और धार्मिक भक्ति गीतों के लिए उपयुक्त बनाता है।

साहित्यिक दृष्टि से असमिया साहित्य की जड़ें मध्यकालीन कवियों के कार्यों में पाई जाती हैं, जिनमें श्रीमंत शंकरदेव (1449-1568) एक प्रमुख नाम है। श्रीमंत शंकरदेव ने न केवल नव-वैष्णव आंदोलन की नींव रखी, बल्कि असमिया में धार्मिक भजन और नाटकों की रचना की, जो असमिया साहित्यिक परंपरा की शुरुआत माने जाते हैं।

शंकरदेव के साहित्यिक योगदान में "बॉर्गीत" का निर्माण था, जो एक प्रकार का भक्ति संगीत है, जिसे असमिया में रचा गया। ये गीत धार्मिक समारोहों और मंदिरों में गाए जाते थे और नव-वैष्णव आंदोलन के लिए महत्वपूर्ण थे।

19वीं सदी में असमिया साहित्य में एक नवजागरण हुआ, जिसमें लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ, हेमचंद्र बरुआ और रुद्र सिंह जैसे लेखकों ने योगदान दिया। लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ को "आधुनिक असमिया साहित्य के पिता" के रूप में जाना जाता है, जिन्होंने असमिया गद्य और कविता को सामाजिक सुधार, राष्ट्रीयता और पहचान जैसे नए विषयों से समृद्ध किया।

असम की संगीत धरोहर इसके इतिहास जितना ही समृद्ध और विविध है। शास्त्रीय रचनाओं से लेकर लोक धुनों तक, संगीत हमेशा असम की सांस्कृतिक पहचान का एक अभिन्न हिस्सा रहा है। श्रीमंत शंकरदेव द्वारा रचित "बॉर्गीत" आज भी असमिया धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन का अहम हिस्सा है।

इन सभी बातों से यह स्पष्ट है कि असमिया भाषा केवल संवाद का एक माध्यम नहीं है, बल्कि यह क्षेत्र के लंबे इतिहास, समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर और लगातार जीवंत रचनात्मकता का जीवित प्रमाण है। असमिया साहित्य, संगीत, लोक गीत, और धार्मिक परंपराएँ आज भी असमिया लोगों को उनके अतीत से जोड़ती हैं, और भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनी हुई हैं।

प्रभाकर पाल

बांग्ला भाषा की उत्पत्ति एवं उसका विकास

बंगाली या बांग्ला, बंगाल की भाषा है। यह भारत में दूसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। यह भारतीय राज्यों मूलतः पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा और असम राज्य के बराक घाटी क्षेत्र की आधिकारिक भाषा है। बंगाली भाषा यूरोप, उत्तरी अमेरिका, मध्य पूर्व और अन्य क्षेत्रों में बंगाली प्रवासियों द्वारा भी बोली जाती है। भाषाई परिवार की दृष्टि से यह हिन्द यूरोपीय भाषा परिवार का सदस्य है। इसकी उत्पत्ति लगभग 1000-1500 साल पहले संस्कृत और मगधी प्राकृत से हुई है। बांग्ला साहित्य अपने सहस्राब्दी पुराने साहित्यिक इतिहास के साथ, बंगाली पुनर्जागरण के दौरान बड़े पैमाने पर विकसित हुआ और यह एशिया में सबसे विपुल और विविध साहित्यिक परंपराओं में से एक है। बांग्ला भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में सन 1950 में शामिल किया गया था। उस समय 14 भाषाओं को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया गया था और बांग्ला भाषा उनमें से एक थी।

19वीं सदी और 20वीं सदी की शुरुआत में बंगाली के मानकीकरण के दौरान, बंगाल का सांस्कृतिक केंद्र कोलकाता था, जो अंग्रेजों द्वारा स्थापित एक शहर है। आज पश्चिम बंगाल में बांग्ला भाषा को मानक रूप में स्वीकार किया जाता है। 3 अक्तूबर 2024 को भारत सरकार द्वारा बांग्ला को शास्त्रीय भाषा का दर्जा दिया गया। भारत की 2011 की जनगणना के अनुसार, बांग्ला भाषा हिंदी, कश्मीरी, गुजराती और मीतई (मणिपुरी) के बाद भारत में दूसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली और पाँचवीं सबसे तेज़ी से बढ़ने वाली भाषा है।

बांग्ला भाषा की उत्पत्ति

भारत की अन्य प्रादेशिक भाषाओं की तरह बांग्ला भाषा का भी उत्पत्तिकाल सन् 1000 ई. (11वीं शताब्दी) के आस पास माना जा सकता है। अपभ्रंश से पृथक् रूप ग्रहण करने के बाद से ही उसमें गीतों और पदों की रचनाएँ होने लगी थी। जैसे-जैसे यह भाषा जनता के भावों और विचारों को अभिव्यक्त करने का साधन बनती गई, उसमें विविध

रचनाओं, काव्यग्रंथों तथा दर्शन, धर्म आदि विषय कृतियों का समावेश होता गया, यहाँ तक कि आज भारतीय भाषाओं में उसे यथेष्ट ऊँचा स्थान प्राप्त हो गया है।

बांग्ला भाषा को उत्पत्ति के आधार पर तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है: प्राचीन बांग्ला, मध्य बांग्ला और आधुनिक बांग्ला।

प्राचीन बांग्ला (950 से 1200 ई. तक)

प्राचीन बांग्ला भाषा लगभग 650 ईस्वी पूर्व की है जब पुजारियों और विद्वानों ने बंगाल में साहित्यिक कार्यों में संस्कृत का व्यापक रूप से उपयोग किया था। दरअसल, इस समय में बांग्ला साहित्य के निशान बहुत कम हैं। अब तक पाया गया सबसे पुराना ग्रंथ चर्यापद है। यह बौद्ध धर्म पर आधारित रहस्योद्घाटन की रहस्यमय कविताओं का एक संग्रह है। माना जाता है कि इसकी रचना 8वीं और 12वीं शताब्दी के बीच हुई थी।

प्राचीन बांग्ला के साहित्य एवं साहित्यकार

भारत के अन्य विद्वानों की तरह बंगाल के भी विद्वान् संस्कृत की रचनाओं को ही विशेष महत्व देते थे। उनकी दृष्टि में वही "अमर भारती" का पद सुशोभित कर सकती थी। बोलचाल की भाषा को वे परिवर्तनशील और अस्थाई मानते थे। किन्तु जनसाधारण तो अपने विचारों और भावों को प्रकट करने के लिए उसी भाषा को पसन्द कर सकते थे जो उनके हृदय के अधिक निकट हो। उसी भाषा में वे उपदेश और शिक्षा ग्रहण कर सकते थे। प्राचीन बंगाल में इस तरह की दो भाषाएँ प्रचलित थीं-एक तो स्थानीय भाषा, जिसे हम प्राचीन बांग्ला कह सकते हैं और दूसरी अखिल भारतीय जन साहित्यिक भाषा, जो सामान्यतः समूचे उत्तर भारत में समझी जा सकती थी। इसे नागर या शौरसेनी अपभ्रंश कह सकते हैं जो मोटे तौर से पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब तथा राजस्थान की भाषा थी।

12वीं शताब्दी के अन्त तक प्राचीन बांग्ला में यथेष्ट साहित्य तैयार हो चुका था जिससे उस समय के एक बंगाली कवि ने यह गर्वोक्ति की थी कि " जैसे लोग गंगा में स्नान करने से पवित्र हो जाते हैं, वैसे ही वे 'बंगाल वाणी' में स्नात होकर पवित्र हो सकते हैं।"

गीतगोविंद के रचयिता जयदेव बंगाल के हिंदू राजा लक्ष्मण सेन (लगभग 1180 ई.) के शासनकाल में विद्यमान थे। राधा और कृष्ण के प्रेम का वर्णन करनेवाले इस सुन्दर काव्य में 24 गीत हैं जो अतुकान्त न होकर, सबके सब तुकान्त हैं। संस्कृत में प्रायः तुकान्त

नहीं मिलता। यह तो अपभ्रंश या नवोदित भारतीय-आर्य भाषाओं की विशेषता है। कुछ विद्वानों का मत है कि इन पदों की रचना मूलतः प्राचीन बांग्ला में की गई थी और फिर उनमें थोड़ा परिवर्तन कर संस्कृत के अनुरूप बना दिया गया। इस तरह जयदेव पुरातन बंगाल के प्रसिद्ध कवि माने जा सकते हैं जिन्होंने संस्कृत के अतिरिक्त संभवतः प्राचीन बांग्ला में भी रचना की।

मध्यकालीन बांग्ला (1200 से 1800 ई. तक)

14वीं शताब्दी के दौरान, मुस्लिम आक्रमणों ने बंगाल की सल्तनत की स्थापना की। सल्तनत ने बंगाली को क्षेत्र की आधिकारिक अदालती भाषा घोषित किया और यह जल्द ही बंगाल की स्थानीय भाषा बन गई। हालाँकि, बंगाली भाषा का यह संस्करण, जिसे मध्य बंगाली के नाम से जाना जाता है, आधुनिक बांग्ला से बहुत अलग था। 16वीं शताब्दी में मुगलों ने बंगाल पर कब्ज़ा कर लिया। वे अपने साथ जो समृद्ध फ़ारसी भाषा लाए थे, उसने भाषा को प्रभावित करना शुरू कर दिया।

मध्यकालीन बांग्ला के साहित्य एवं साहित्यकार

इसी समय बंगाली मुसलमान लेखकों ने अरबी और फारसी की प्रेम तथा धर्म कथाएँ बांग्ला में प्रस्तुत करने का प्रयत्न आरम्भ किया। इन कवियों ने उस समय के उपलब्ध बांग्ला साहित्य का ही नहीं वरन् संस्कृत, अरबी तथा फारसी के ग्रंथों का भी अनुशीलन किया। उन्होंने अवधी या कोशली से मिलती जुलती एक और भाषा 'गोहारी' भी सीखी। इसी तरह पूर्वी हिंदी के क्षेत्र से जो सूफी मुसलमान पूर्वी बंगाल पहुँचे, वे अपने साथ नागरी वर्णमाला भी लेते गए। सिलहट के मुसलमान कवि बहुत दिनों तक इसी "सिलेटी नागरी" लिपि में बांग्ला लिखते रहे। उस समय के कुछ मुसलमान कवि निम्नानुसार हैं- दौलत काज़ी, जिसने "लोरचंदा" या "सती मैना" शीर्षक प्रेमकाव्य लिखा; कुरेशी मागन ठाकुर इन्होंने "चंद्रावती" की रचना की; मुहम्मद खाँ, इनकी दो रचनाएँ (मौतुलहुसेन तथा केयामतनामा) प्रसिद्ध हैं; तथा अब्दुल नबी जिसने बड़ी सुंदर शैली में "आमीर हामज़ा" का प्रणयन किया। इनके अलावा, 17वीं सदी के एक और प्रसिद्ध मुसलिम कवि आलाओल हैं जिनकी कृति "पद्मावती" (1651) यथेष्ट लोकप्रिय रही।

17वीं सदी के तीन हिंदू कवि - काशीरामदास, जिन्होंने महाभारत का अनुवाद बांग्ला

पद्य में किया; उनके बड़े भाई कृष्णकिंकर, जिन्होंने श्रीकृष्णविलास की रचना की तथा जगन्नाथमंगल के लेखक गदाधर।

18वीं सदी के कुछ प्रसिद्ध कवि निम्नानुसार हैं - रामप्रसाद सेन जिनके द्वारा दुर्गा देवी पर लिखे गीत आज भी लोकप्रिय हैं; भारतचंद्र, जिनका "अन्नदामंगल" (या कालिकामंगल) काव्य बांग्ला की एक परिष्कृत रचना है; राजा जयनारायण, जिन्होंने पद्मपुराण के काशीखंड का बांग्ला में अनुवाद किया, जिसमें उस समय के बनारस का बहुत ही मनोरंजक विवरण है।

बांग्ला गद्य के कुछ नमूने सन् 1550 के बाद पत्रों तथा दस्तावेजों के रूप में उपलब्ध हैं। कैथलिक धर्म संबंधी कई रचनाएँ पुर्तगाली तथा अन्य पादरियों द्वारा प्रस्तुत की गईं और 1778 में नथेनियल ब्रासी हलहद ने बांग्ला व्याकरण तैयार कर प्रकाशित किया। 1799 में फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना के बाद बाइबल के अनुवाद तथा बांग्ला गद्य में अन्य ग्रंथ तैयार कराने का उपक्रम किया गया।

आधुनिक बांग्ला (1800 से 1950 ई. तक)

आधुनिक बंगाली भाषा ने 1757 में प्लासी की लड़ाई के समय बंगाल के नादिया क्षेत्र में बोली जाने वाली बोली से आकार लिया था। आधुनिक बांग्ला शब्दावली मगधी प्राकृत और पाली से विरासत में मिले शब्दों पर आधारित है, हालाँकि, भाषा को औपचारिक और आकस्मिक किस्मों में विभाजित किया गया था जिन्हें "शुद्धो भाषा" और "चोलिटो भाषा" के रूप में जाना जाता है। इसमें मुख्य रूप से मगधी प्राकृत और पाली का शब्दावली आधार शामिल है, लेकिन अन्य भाषाओं के शब्द भी शामिल हैं।

आधुनिक बांग्ला के साहित्य एवं साहित्यकार

19वीं सदी में अंग्रेजी भाषा के प्रसार और संस्कृत के नवीन अध्ययन से बांग्ला के लेखकों में नए जागरण और उत्साह की लहर सी दौड़ गई। एक ओर जहाँ कंपनी सरकार के अधिकारी बांग्ला सीखने के इच्छुक अंग्रेज कर्मचारियों के लिए बांग्ला की पाठ्यपुस्तकें तैयार करा रहे थे और बेपतिस्त मिशन के पादरी कृत्तिवासीय रामायण का प्रकाशन तथा बाइबल आदि का बांग्ला अनुवाद प्रस्तुत कराने का प्रयत्न कर रहे थे, वहाँ दूसरी

ओर बंगाली लेखक भी गद्य-ग्रंथलेखन की ओर ध्यान देने लगे थे। श्री रामराम बसु ने राजा प्रतापादित्य की जीवनी लिखी और मृत्युंजय विद्यालंकार ने बांग्ला में "पुरुष परीक्षा" लिखी। 1818 में "समाचार दर्पण" नामक साप्ताहिक समाचार पत्र के प्रकाशन से बांग्ला पत्रकारिता की भी नींव पड़ी।

राजा राममोहन राय ने भारतीयों के "आधुनिक" बनने पर बल दिया। उन्होंने ब्रह्मसमाज की स्थापना की। उन्होंने कतिपय उपनिषदों का बांग्ला अनुवाद तैयार किया। इन्होंने बांग्ला व्याकरण की रचना की तथा अपने धार्मिक तथा सामाजिक विचारों के प्रचारार्थ बांग्ला और अंग्रेजी, दोनों में छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ लिखीं। इसी समय राजा राधाकांत देव ने "शब्दकल्पद्रुम" नामक संस्कृत कोष तैयार किया और भवानीचरण बनर्जी ने कलकतिया समाज पर व्यंग्यात्मक रचनाएँ प्रस्तुत कीं।

प्रारंभिक गद्यलेखकों की भाषा, प्रचलित संस्कृत शब्दों के प्रयोग के कारण, कुछ कठिन थी किंतु 1850 के लगभग अधिक सरल और प्रभावपूर्ण शैली का प्रचलन आरंभ हो गया। ईश्वरचंद्र विद्यासागर, प्यारीचंद मित्र आदि का इसमें विशेष सहयोग रहा। विद्यासागर ने अंग्रेजी तथा संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद बांग्ला में किया और गद्य की सुंदर, सरल शैली का विकास किया। प्यारीचंद मित्र ने सन 1858 में "आलालेर घरेर दुलाल" नामक सामाजिक उपन्यास की रचना की। अक्षयकुमार दत्त ने विविध विषयों पर कई निबंध लिखे। इसी क्रम में अन्य गद्यलेखक जैसे राजनारायण बसु, ताराशंकर तर्करत्न (जिन्होंने "कादंबरी" का संक्षिप्त रूपांतर बांग्ला में प्रस्तुत किया) तथा तारकनाथ गांगुली (जिन्होंने प्रथम यथार्थवादी सामाजिक उपन्यास "स्वर्णलता" प्रकाशित किया) अधिक प्रसिद्ध हुए।

आधुनिक बांग्ला के सर्वप्रसिद्ध उपन्यासकार शरत चंद्र चटर्जी (1876-1938) माने जाते हैं। सरल और सुंदर भाषा में लिखे गए इनके कुछ उपन्यास निम्नानुसार हैं - श्रीकांत, गृहदाह, पल्ली समाज, देना पावना, देवदास, चंद्रनाथ, चरित्रहीन, शेष प्रश्न आदि।

रवींद्रनाथ ठाकुर के आगमन के पूर्व बंकिमचंद्र चट्टोपध्याय बांग्ला के सर्वश्रेष्ठ लेखक माने जाते हैं। उनका साहित्यिक जीवन अंग्रेजी में लिखित "राजमोहन की स्त्री" नामक उपन्यास (1864) से आरंभ होता है। बांग्ला में पहला उपन्यास उन्होंने दुर्गेशनंदिनी (1865) के नाम से लिखा। इसके बाद उन्होंने एक दर्जन से अधिक सामाजिक तथा

ऐतिहासिक उपन्यास लिखे। इनके कारण बांग्ला साहित्य में उन्हें स्थायी स्थान प्राप्त हो गया और आधुनिक भारत के विचारशील लेखकों तथा चिंतकों में उनकी गणना होने लगी। 1872 में उन्होंने "बंगदर्शन" नामक साहित्यिक पत्र निकाला जिसने बांग्ला साहित्य को नया मोड़ दिया। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों में राजसिंह, सीताराम, तथा चंद्रशेखर मुख्य हैं। सामाजिक उपन्यासों में "विषवृक्ष" तथा "कृष्णकांतेर विल का स्थान ऊँचा है। उनका "कपालकुंडला" शुद्ध प्रेम और कल्पना का उत्कृष्ट नमूना माना जा सकता है। "आनंदमठ" प्रसिद्ध राजनीतिक उपन्यास है जिसका "वंदेमातरम्" गीत चिरकाल तक भारत का राष्ट्रीयगान माना जाता रहा और आज भी इस रूप में इसका समादर है। उनके उपन्यासों तथा अन्य रचनाओं का भारत की प्राय: सभी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

एक और प्रसिद्ध व्यक्ति जिसे भारत के पुनर्जागरण में मुख्य स्थान प्राप्त हैं, स्वामी विवेकानंद हैं। भारत की गरीब जनता की सेवा ही उनका लक्ष्य था। उन्होंने अमरीका और यूरोप जाकर अपने प्रभावकारी भाषणों द्वारा हिंदू धर्म का ऐसा विशद विवेचन उपस्थित किया कि उसे पश्चिमी देशों में अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त हो गई। बांग्ला तथा अंग्रेजी, दोनों के वे प्रभावशाली लेखक थे। रंगलाल बंदोपाध्याय ने राजपूतों की वीरगाथाओं के आधार पर "पद्मिनी" (1858), कर्मदेवी (1862) तथा सूरसुंदरी (1868) की रचना की। कालिदास के "कुमारसंभव" का बांग्ला अनुवाद भी उन्होंने प्रस्तुत किया।

दीनबंधु मित्र ने कई सुखांत नाटक लिखे। उनके एक नाटक नीलदर्पण (1860) में निलहे गोरों के उत्पीड़न का मार्मिक चित्रण हुआ था जिससे इस प्रथा की बुराइयाँ दूर करने में सहायता मिली।

राजा राजेंद्रलाल मित्र (1822-91) इतिहासकार और प्रथम बंगाली पुरातत्वज्ञ थे। भूदेव मुखोपाध्याय (1825-94) शिक्षाशास्त्री, गद्यलेखक और पत्रकार थे। कालीप्रसन्न सिंह कट्टर हिंदू समाज के एक और प्रगतिशील लेखक थे। उन्होंने महाभारत का बांग्ला गद्य में तथा संस्कृत के दो नाटकों का भी अनुवाद किया। उन्होंने कलकत्ते की बोलचाल की बांग्ला में "हुतोम पेंचार नक्शा" नामक रचना प्रस्तुत की जिसमें उस समय के कलकतिया समाज का अच्छा चित्रण किया गया था। बांग्ला के प्रतिष्ठित साहित्य में इसकी गणना है। हेमचंद बंदोपाध्याय (1838-1903) ने शेक्सपियर के दो नाटकों 'रोमियो और जूलियट'

तथा 'टेंपेस्ट' का बांग्ला में अनुवाद किया। 'मेघनादवध' से प्रोत्साहित होकर उन्होंने "वृत्तसंहार" नामक महाकाव्य की रचना की। नवीनचंद्र सेन (1847- 1909) ने कुरुक्षेत्र, रैवतक तथा प्रभास नाटक बनाए तथा बुद्ध, ईसा और चैतन्य के जीवन पर अमिताभ, ख्रीष्ट तथा अमृताभ नामक लंबी कविताएँ लिखीं। पलासीर युद्ध तथा रंगमती और भानुमती के भी लेखक वही थे। पाँच खंडों में अपनी जीवनी "आमार जीवन" भी उन्होंने लिखी।

रमेशचंद्र दत्त ने ऋग्वेद का बांग्ला अनुवाद किया। वे भारतीय अर्थशास्त्र के भी लेखक थे तथा उन्होंने कई उपन्यास भी लिखे- जैसे राजपूत जीवनसंध्या, महाराष्ट्र जीवनसंध्या, माधवी कंकण, संसार तथा समाज। इनके समसामयिक गिरीशचंद्र घोष बांग्ला के महान नाटककार थे। उन्होंने 90 नाटकों का सृजन किया, जिनमें से कुछ हैं - बिल्वमंगल, प्रफुल्ल, पांडव गौरव, बुद्धदेवचरित, चैतन्य लीला, सिराजुद्दौला, अशोक, हारानिधि, शंकराचार्य, शास्ति की शांति। शेक्सपियर के मेकबेथ नाटक का बांग्ला अनुवाद भी उन्होंने किया। अमृतलाल बसु भी गिरीशचंद्र घोष की तरह अभिनेता नाटककार थे। हास्य रस से पूर्ण उनके नाटक तथा प्रहसन बांग्ला भाषियों में काफी लोकप्रिय हैं। वे बंगाल के मोलिए कहलाते थे, जिस तरह गिरीशचंद्र बंगाली शेक्सपियर माने जाते थे।

हास्यरस के दो और बांग्ला लेखक भी इसी समय के ही हैं - त्रैलोक्यनाथ मुखोपाध्याय (1847-1919), उपन्यासकार तथा लघुकथा लेखक और इंद्रनाथ बंदोपाध्याय (1849-1911), निबंधलेखक तथा व्यंग्यकार।

लिपि

बांग्ला लिखने के लिए उपयोग की जाने वाली लिपि को **'बंगाली लिपि'** के रूप में जाना जाता है, जो बाएँ से दाएँ लिखी जाती है। ब्राह्मी लिपि से इसकी उत्पत्ती हुई और अरबी तथा फारसी जैसी अन्य लिपियों से प्रभावित हुई है। यह पूर्वी नागरी लिपि का एक परिमार्जित रूप है जिसे बांग्ला भाषा, असमिया या विष्णुप्रिया मणिपुरी लिखने के लिए प्रयोग किया जाता है। पूर्वी नागरी लिपि का सम्बन्ध ब्राह्मी लिपि है। आधुनिक बांग्ला लिपि को चार्ल्स विल्किंस द्वारा 1778 में आधार दिया गया, जब उन्होंने इस लिपि के लिए पहली बार टाइपसेट का प्रयोग किया।

हम संक्षेप में कह सकते हैं कि, बांग्ला साहित्य अपनी प्राचीनता, साहित्यिक विधाओं

की विविधता, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रतिबिंब, महान साहित्यकारों के योगदान, और सांस्कृतिक महत्व के लिए जाना जाता है। रवींद्रनाथ टैगोर, बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय, काजी नजरूल इस्लाम, शरत चंद्र चट्टोपाध्याय, शरत चंद्र चटर्जी और विभूतिभूषण बंद्योपाध्याय जैसे महान साहित्यकारों ने बांग्ला साहित्य को समृद्ध किया है। इनकी रचनाएं न केवल बंगाल में बल्कि पूरे भारत और दुनिया भर में लोकप्रिय है। बांग्ला साहित्य बंगाल क्षेत्र के लोगों के जीवन, संघर्ष, प्रेम, और अनुभवों को दर्शाता है। यह समाज और संस्कृति का एक दर्पण है। बांग्ला साहित्य ने सामाजिक न्याय, सुधार और राष्ट्रीयता के मुद्दों को उठाया है।

अमित महतो

गुजराती भाषा का इतिहास एवं विकास

गुजराती भाषा की उत्पत्ति एक समृद्ध ऐतिहासिक और भाषाई विकास की कहानी है। यह भाषा इंडो-आर्यन भाषा परिवार की एक प्रमुख शाखा है और भारत के पश्चिमी राज्य गुजरात की प्रमुख भाषा है। इसकी उत्पत्ति और विकास का संक्षिप्त विवरण कुछ इस प्रकार है:

गुजराती भाषा की उत्पत्ति: संस्कृत → प्राकृत → अपभ्रंश → पुरानी गुजराती → आधुनिक गुजराती की क्रमिक प्रक्रिया से हुई। यह भाषा न केवल गुजरात की सांस्कृतिक पहचान का प्रतीक है, बल्कि उसका साहित्यिक और ऐतिहासिक योगदान भी अद्वितीय है।

1. **संस्कृत से प्रारंभ:** गुजराती भाषा की जड़ें संस्कृत में हैं, जो प्राचीन भारत की धार्मिक और शास्त्रीय भाषा थी। संस्कृत से प्राकृत और फिर अपभ्रंश भाषाओं का विकास हुआ।

2. **अपभ्रंश भाषा का दौर (6वीं – 12वीं शताब्दी):** गुजराती भाषा का प्रारंभिक रूप "गुर्जर अपभ्रंश" था, जिसे "शौरसेनी अपभ्रंश" से निकला हुआ माना जाता है। इस काल में साहित्यिक रचनाएँ जैन मुनियों द्वारा लिखी गईं।

3. **पुरानी गुजराती (12वीं – 16वीं शताब्दी):** यह वह काल था जब गुजराती भाषा ने एक स्वतंत्र भाषा का रूप लेना शुरू किया। सबसे प्रसिद्ध रचनाकार नेमिनाथ और हेमचंद्राचार्य थे।

4. **मध्य गुजराती (16वीं – 19वीं शताब्दी):** मुग़ल और बाद में अंग्रेज़ी शासन के दौरान गुजराती भाषा पर फारसी और अंग्रेज़ी का प्रभाव पड़ा।भक्तिकाल में गुजराती साहित्य को विशेष ऊँचाई मिली — खासकर नरसिंह मेहता, अक्षरदास, प्रेमानंद जैसे कवियों के माध्यम से।

5. **आधुनिक गुजराती (19वीं शताब्दी से वर्तमान):** 19वीं शताब्दी में गुजराती भाषा को मानकीकरण मिला। महात्मा गांधी, नर्मद, कन्हैयालाल मुणशी जैसे लेखकों ने आधुनिक गुजराती गद्य को समृद्ध किया। आज गुजराती भाषा साहित्य, शिक्षा, मीडिया और प्रशासन में प्रमुखता से प्रयोग में आती है।

गुजराती भाषा की लिपि:

इसकी लिपि का विकास भाषा के इतिहास जितना ही महत्वपूर्ण पहलू है। गुजराती लिपि का विकास ब्राह्मी लिपि से हुआ है और समय के साथ इसमें कई परिवर्तन और सुधार हुए हैं। ब्राह्मी लिपि से शुरू होकर गुजराती लिपि ने देवनागरी से स्वतंत्र रूप प्राप्त किया। नीचे इसका विस्तृत विवरण प्रस्तुत है:

1. **प्रारंभिक लिपियाँ:**

- ब्राह्मी लिपि (तीसरी सदी ईसा पूर्व):गुजराती लिपि की सबसे प्राचीन जड़ें ब्राह्मी लिपि में हैं, जो पूरे भारत की अनेक लिपियों की जननी मानी जाती है।
- गुप्त लिपि (चौथी–छठी सदी):ब्राह्मी से विकसित गुप्त लिपि ने बाद में नागरी लिपि और फिर देवनागरी लिपि को जन्म दिया।

2. **नागरी / देवनागरी लिपि (8वीं–12वीं सदी):** गुजराती भाषा का प्रारंभिक लेखन देवनागरी लिपि में हुआ करता था। जैन मुनियों और विद्वानों ने अपने ग्रंथ इसी लिपि में लिखे।

3. **गुजराती लिपि का निर्माण (13वीं–15वीं सदी):** धीरे-धीरे गुजराती लिपि की एक स्वतंत्र शैली बनी, जिसमें विशेषतः "ष" और "श्र" जैसे वर्ण हटने लगे। इस नई लिपि को प्रारंभ में महाजनी लिपि या व्यवसायिक लेखन शैली भी कहा गया, क्योंकि व्यापारी वर्ग इसी लिपि का प्रयोग करता था

4. **आधुनिक गुजराती लिपि (19वीं सदी से):**19वीं सदी में जब छपाई और मुद्रण प्रारंभ हुआ, तब गुजराती लिपि का मानकीकरण हुआ। 1860 के आसपास अहमदाबाद में छपे समाचार पत्रों और पुस्तकों ने आज की गुजराती लिपि को स्थापित किया।

गुजराती लिपि देवनागरी जैसी दिखती है, लेकिन इसमें शिरोरेखा (ऊपर की लाइन) नहीं होती। इसमें कुल 34 व्यंजन, 13 स्वर, और कुछ संयुक्ताक्षर होते हैं। लिपि बाएं से दाएं लिखी जाती है। डिजिटल युग में गुजराती लिपि के लिए यूनिकोड का समर्थन है। अब इंटरनेट, मोबाइल, और कम्प्यूटर पर आसानी से गुजराती टाइप और प्रकाशित की जाती है। सरकारी और शैक्षणिक स्तर पर गुजराती लिपि का प्रयोग बढ़ा है।

गुजराती भाषा की उपबोलियाँ इस भाषा की सांस्कृतिक और भौगोलिक विविधता को दर्शाती हैं। गुजरात राज्य और उसके आसपास के क्षेत्रों में बोली जाने वाली गुजराती

की उपभाषाएं कई प्रकार की हैं, जो उच्चारण, शब्दावली, व्याकरण और लहजे में भिन्नता रखती हैं। ये उपबोलियाँ गुजराती भाषा को सांस्कृतिक गहराई और स्थानीय विविधता प्रदान करती हैं। लोकगीत, कहावतें और कहानियाँ इन बोलियों में अधिक प्रभावी होती हैं। भाषा के विकास और साहित्यिक विविधता में इनका बड़ा योगदान है।

मुख्य गुजराती उपबोलियाँ:

- **सौराष्ट्र या कथियावाड़ी :** सौराष्ट्र (राजकोट, जूनागढ़, भावनगर, आदि)में बोली जाने वाली इस बोली की विशेषता यह है कि इसमें मारवाड़ी और सिंधी का प्रभाव देखने को मिलता है। कुछ शब्द वाक्य के अंत में "जे" या "ने" जैसे प्रत्ययों का प्रयोग होता है।
- **चरोतरी :** उत्तर-दक्षिण चारोतर क्षेत्र (आणंद, खेड़ा, वडोदरा के कुछ हिस्से) में बोली जाती है इसकी विशेषता यह है कि यह बोली मानक गुजराती के अधिक निकट है। इसे साहित्यिक लेखन में भी अपनाया गया है।
- **गामड़ी:** मध्य गुजरात (गोधरा, दाहोद, पंचमहल) में बोली जाती है, देहाती रंग लिए हुए यह बोली ग्राम्य संस्कृति की झलक देती है।
- **कच्छी:** कच्छ जिले में बोली जाती है। इसकी विशेषता है कि यह गुजराती से मिलती-जुलती लेकिन स्वतंत्र पहचान वाली बोली है। इसमें सिंधी, पंजाबी और राजस्थानी शब्दों का भी प्रभाव है।
- **सुरती/दक्षिणी गुजराती:** सूरत, नवसारी, वलसाड में बोली जाती है। इसकी विशेषता इसका मीठा उच्चारण है, और पारसी तथा मुसलमान समुदाय के शब्दों का प्रयोग किया जाता है।
- **पारसी गुजराती:** मुख्यतः सूरत और मुंबई में बोली जाती है। इसकी विशेषता यह है कि यह पारसी समुदाय द्वारा बोली जाने वाली गुजराती, जिसमें फ़ारसी और उर्दू शब्दों का मिश्रण होता है।
- **अहिराणी या दांगरी:** दक्षिण गुजरात के आदिवासी क्षेत्रों में बोली जाती है। इसकी विशेषता है कि यह आदिवासी बोलियों और गुजराती का मिश्रण है।
- **सौराष्ट्र तमिल गुजराती क्षेत्र:** तमिलनाडु में बसे सौराष्ट्र प्रवासी द्वारा बोले जानी वाली इस भाषा की विशेषता है कि यह गुजराती की पुरानी शैली और तमिल मिश्रित बोली। आज भी तमिलनाडु के मदुरै, सेलम आदि में बोली जाती है।

गुजराती और हिंदी बारहखड़ी में समानता

गुजराती और हिंदी दोनों इंडो-आर्यन भाषाएं हैं और इनकी लिपियाँ भिन्न होते हुए भी व्याकरणिक संरचना और उच्चारण प्रणाली में कई समानताएँ हैं। बारहखड़ी, जो कि स्वर और व्यंजन के मेल से बनने वाले अक्षरों की श्रृंखला है, इन दोनों भाषाओं में बहुत हद तक समान है। दोनों भाषाओं में व्यंजन को स्वर के साथ जोड़कर अक्षर बनाए जाते हैं – यही "बारहखड़ी" है।

समानता: दोनों में संयोजन का तरीका और स्वर के आधार पर परिवर्तन लगभग समान है।

अंतर: केवल लिपि की रेखाएं, अक्षर की आकृति और कुछ ध्वनि-सूक्ष्म भेद हैं।

गुजराती साहित्यकारों का योगदान

गुजराती साहित्य का इतिहास अत्यंत समृद्ध और विविधतापूर्ण रहा है, जिसमें अनेक साहित्यकारों ने अपने लेखन से समाज, संस्कृति, धर्म और मानवता को नई दृष्टि दी है। इन साहित्यकारों ने न केवल गुजराती भाषा को सशक्त और परिपक्व बनाया, बल्कि भारतीय साहित्य की धरोहर को भी समृद्ध किया। गुजराती साहित्यकारों ने भाषा को केवल साहित्य की अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं बनाया, बल्कि उसे समाज, संस्कृति, धर्म और विचारधारा से जोड़ा। उन्होंने गुजराती को "लोक से लेकर साहित्यिक मंच" तक स्थापित किया और आज यह भाषा विश्व के अनेक देशों में प्रवासी भारतीयों द्वारा बोली और पढ़ी जाती है। कुछ प्रमुख गुजराती साहित्यकार निम्नलिखित है –

हेमचंद्राचार्य (11वीं–12वीं शताब्दी) जैन धर्मगुरु और बहुभाषी विद्वान थे। उन्होंने संस्कृत और अपभ्रंश दोनों में कई रचनाएँ कीं और गुजराती भाषा के व्याकरण को एक ढाँचा देने का कार्य किया। उनके "सिद्ध-हेम व्याकरण" को भाषा-विकास का आधार माना जाता है।

नरसिंह मेहता (15वीं शताब्दी) को 'गुजराती कविता का जनक' माना जाता है। वे भक्ति आंदोलन के प्रमुख कवि थे जिन्होंने सामाजिक समरसता, भगवान की भक्ति और करुणा जैसे विषयों पर कविताएं लिखीं। उनका प्रसिद्ध भजन "वैष्णव जन तो तेने कहिए" गांधीजी का प्रिय भजन था।

प्रेमानंद (17वीं शताब्दी) आख्यान काव्य के सबसे प्रमुख कवि थे। उन्होंने पौराणिक कथाओं और लोककथाओं को काव्य रूप में प्रस्तुत किया। उनकी रचनाएँ जनमानस के बीच अत्यंत लोकप्रिय रहीं और उन्होंने कथा साहित्य को नया आयाम दिया।

नर्मद (1833–1886) आधुनिक गुजराती साहित्य के अग्रदूत थे। उन्होंने आत्मकथा, निबंध, सामाजिक लेखन और काव्य में लेखन किया। "मारी हकीकत" गुजराती भाषा की पहली आत्मकथा मानी जाती है। वे राष्ट्रीय चेतना के समर्थक थे और गुजराती भाषा की प्रतिष्ठा के लिए निरंतर प्रयासरत रहे।

कन्हैयालाल मुणशी (1887–1971) ने ऐतिहासिक उपन्यासों, नाटकों और निबंधों के माध्यम से गुजराती साहित्य को समृद्ध किया। वे स्वतंत्रता संग्राम में भी सक्रिय रहे और गुजराती साहित्य को राष्ट्रवाद से जोड़ने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही।

झवेरचंद मेघाणी (1896–1947) लोककवि और स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे। उन्होंने गुजराती लोकगीतों, लोककथाओं और जन-जीवन की संवेदनाओं को साहित्य का हिस्सा बनाया। उन्हें 'राष्ट्रीय शायर' की उपाधि मिली। उनकी लेखनी में लोक और राष्ट्र का अनूठा संगम देखने को मिलता है।

उमाशंकर जोशी (1911–1988)जोशीजी आधुनिक गुजराती कविता के प्रमुख स्तंभों में से एक थे। उन्होंने मानवतावाद, शांति, और समाज की गूढ़ संवेदनाओं को स्वर दिया। उनका काव्य संग्रह "निषेध" बहुप्रशंसित हैं।

रघुवीर चौधरी (1938–वर्तमान) समकालीन गुजराती साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। उनके उपन्यासों, नाटकों और आलोचनात्मक लेखों में सामाजिक यथार्थ, राजनीति और अस्तित्ववाद का गहरा विश्लेषण मिलता है। उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

उपासना सिरसैया

ओड़िया साहित्य – इतिहास, प्रमुख लेखक

उड़िया भारत के ओड़ीशा राज्य या उत्कल प्रांत की आधिकारिक भाषा है। यह भाषा ओड़ीशा के अतिरिक्त झारखंड, पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़ और आंध्र प्रदेश राज्यों में अलसंख्यक आबादी द्वारा भी बोली जाती है। उड़िया में लिखे गए ग्रंथ लगभग हज़ार वर्ष पुराने हैं। उड़िया साहित्य प्राचीन गौरव से उतार चढ़ाव की एक मिसाल है। उड़िया साहित्य भारत की प्रमुख साहित्यिक परम्पराओं में से एक है, जिसकी जड़ें प्राचीन संस्कृत, धर्म, लोकथाओं और ऐतिहासिक परम्पराओं में गहराई से जुड़ी है। साथ ही, यह भाषा भारत के समृद्ध भाषाई और सांस्कृतिक विरासत का भी एक महत्वपूर्ण अंग है। उड़िया साहित्य ने ओड़ीशा की लोक संस्कृति, रीति-रिवाज, परम्पराओं और विश्वासों को संजोने और उसे आगे बढ़ाने का काम किया है।

उड़िया साहित्य एक भारतीय पाठ है जो मुख्य रूप से ओड़ीशा राज्य से उत्पन्न हुआ है। यह भारतीय आर्य भाषाओं में से ही एक है। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार उड़िया भाषा की उत्पत्ति आर्य, द्रविड़ और मुंडारी भाषाओं के मेल से हुई है। यद्यपि इसकी लिपि की बात करें तो इसकी उत्पत्ति अन्य भारतीय भाषाओं की लिपियों के समान ही ब्राह्मणी से ही हुई है। इसकी लिपि नागरी लिपि से मेल खाती है। उड़िया लिपि गोलाकार है। इसका मुख्य कारण सबसे पहले इसे तालपत्र पर लोहे की कलम से लिखा जाता था लेकिन सीधी रेखा खींचने के कारण पत्ता कट जाया करता था जिसके कारण इसे बाद में गोल घुमाकर लिखना शुरू किया गया और यही इसका वर्तमान रूप बन गया।

वर्तमान उड़िया शब्दावली या भाषा मुख्य रूप से संस्कृत, तत्सम तत्वों वाले तद्भव शब्दों से बनी है, साथ ही इसमें देशज, अंग्रेजी, हिंदुस्तानी (हिंदी और उर्दू का मिश्रण) भी शामिल है। भारतीय इतिहास में 14वीं शताब्दी का काल उड़िया साहित्य के लिए काफी रचनात्मक रहा है। उड़िया, बांग्ला और असमिया सभी पूर्वी मागधी अपभ्रंश से उद्‌त हुई हैं, इन्हें बहन भाषा भी कहा जाता है।

उड़िया साहित्य में मुख्य रूप से जगन्नाथ संस्कृति, त्यौहार, लोककथाएँ, लोकगीत सबका चित्रण किया गया है। उड़िया साहित्य का इतिहास यह प्रमाण देता है कि उड़िया

एक स्वतंत्र, समृद्ध और पुरातन भाषा है। भारत में बहुत कम ऐसी भाषाएँ है जिसे आठवीं अनुसूची में स्थान दिया गया है उनमें उड़िया भाषा भी ऐसी है जिसे वर्ष 1950 में शामिल किया गया है। उड़िया भाषा को वर्ष 2014 में शास्त्रीय भाषा का दर्जा दिया गया है। शास्त्रीय भाषा का दर्जा पानी वाली यह छठी भारतीय भाषा बन गई है।

उड़िया साहित्य केवल साहित्यिक दृष्टि ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक और भाषाई दृष्टि से भी अत्यंत विशिष्ट है। यह एक जीवंत और प्रगतिशील साहित्यिक परंपरा है जिसने ओड़ीशा की आत्मा को शब्दों में ढालने के साथ भारतीय साहित्य को भी समृद्ध किया है।

उड़िया साहित्य का विकास एक विस्तृत और ऐतिहासिक प्रक्रिया है जो प्राचीन धार्मिक रचनाओं से लेकर आधुनिक सामाजिक और वैश्विक चेतना तक फैली हुई है। उड़िया साहित्य का विकास समयानुकुल रूप से बदलते समाज और चेतना क प्रतिबिम्ब है। यह साहित्य प्राचीनता और भक्ति का प्रतिनिधि रहा है, आधुनिकता और सामाजिक यथार्थ का उद्घोषक होने के साथ-साथ यह आज के युग में वैश्विक सोच के साथ भी तालमेल बैठा रहा है।

उड़िया भाषा ओडरी प्रकृति और अर्ध मागधी का वंशज है। 16वीं और 17वीं शताब्दी के दौरान उड़िया साहित्य संस्कृत के जादू के दायरे में आया और 17वीं एवं 18वीं शताब्दी के दौरान, इसने दृष्टिकोण की एक नई रेखा का अनुसरण किया। काल और प्रकृति के अनुसार उड़िया साहित्य के इतिहास के प्रमुख कालखंडों को कई भागों में बांटा गया है -

1. आदिकाल (1050-1550) :- इस युग को सरलादास युग के नाम से भी जाना जाता है, यदि सरलादास को उड़िया साहित्य के आदि काल का प्रतिनिधि लेखक कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उन्हें **उड़िया भाषा के आदिकवि** के रूप में भी सम्मान प्राप्त है। वस्तुतः सरलादास ही उड़िया साहित्य की प्रथम जातीय कवि है। सरलादास को उड़िया भाषा में प्रथम महाकाव्यकर माना जाता है। उनका साहित्य आज भी ओड़ीसा में धार्मिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से पढ़ा जाता है। उन्होंने उड़िया भाषा को धार्मिक साहित्य की भाषा बनने में मदद की और समाज के उस वर्ग को आवज दी जिसे साहित्य से दूर रखा गया था। उन्होंने धार्मिक ग्रन्थों को जनभाषा में सरलता से प्रस्तुत किया और उड़िया साहित्य की मजबूत नींव रखी। इन्होंने संस्कृत महाभारत का उड़िया अनुवाद

न करके उसका लोकप्रचलित, भावनात्मक और कल्पनात्मक रूपान्तरण किया। इसमें उन्होंने सामाजिक मुद्दों, नैतिक शिक्षा और जनता के दृष्टिकोण को जोड़ते हुए कथा को नया रूप दिया।

सरलादास जी ने संस्कृत के स्थान पर लोकभाषा उड़िया में लिखा जिसके कारण साहित्य आसानी से आम जन तक पंहुच पाया। इन्होने अपने लेखन में सामाजिक समरसता और धर्मों की एकता के संबंध में भी उल्लेख किया है। उनकी साहित्यिक शैली सहज, प्रवाहपूर्ण, भावनात्मक और लोकगीतों से प्रेरित है। सरलादास की तीन कृतियाँ उपलब्ध हैं, पहली विलंका रामायण जिसमें रामायण की एक अनोखी काव्यात्मक प्रस्तुति है इसमें रावण को प्रमुख पात्र के रूप में चित्रित किया गया है। दूसरी महाभारत, इसमें सरलादास जी ने सामाजिक मुद्दों, नैतिक शिक्षा और जनता के दृष्टिकोण को जोड़ते हुए कथा को नया रूप दिया। तीसरी चंडीपुराण इसमें देवी दुर्गा और महिषासुर की कथा पर आधारित पौराणिक काव्य है। सरला दास एक क्रांतिकारी कवि थे, जिन्होंने ओड़ीया को एक शास्त्रीय साहित्यिक भाषा के रूप में स्थापित किया। उनकी रचनाएँ लोक-जीवन, इतिहास, धर्म और संस्कृति का सहज मिलाजुला रूप है।

वास्तव में उड़िया साहित्य की शुरुआत बौद्ध साहित्य से होती है। "बौद्ध गान ओ दोहा" को उड़िया का पूर्व रूप माना जाता है। बौद्ध साहित्य के बाद ही वत्सादास, सरलादास तथा बलरामदास का नाम आता है। इनमें वत्सादास (मुख्य कृति पार्वती विवाह) को उड़िया साहित्य का आदि कवि माना जाता है परंतु आदिकाल में सरलादास और बलरामदास (मुख्य कृति भगवतगीता, अमरकोष, उदातगीता, वारमासी) जैसे कवि काफी लोकप्रिय एवं महाकवि माने गए।

2. मध्ययुग (1550-1850) - मध्ययुग को दो भागों में बांटा गया है पहला पूर्वमध्ययुग अथवा भक्तियुग या धार्मिक युग या पंचसखा युग तथा दूसरा उत्तरमध्ययुग अथवा रीतियुग या उपेंद्रभंज युग।

i. **पूर्वमध्ययुग -** पंचसखाओं के नाम से प्रसिद्ध पूर्वमध्ययुग में साहित्य की प्रधानता है। इन पंचसखाओं में - बलरामदास, जगन्नाथदास, यशोवंतदास, अनंतदास और अच्युतानंददास शामिल है। इन पंचसखाओं कवियों ने अनेक ग्रंथ लिखे जिनमें से कुछ तो मुद्रित हैं, कुछ अमुद्रित और कुछ अप्राप्य रह गए।

ii. **रीतियुग** - रीतियुग में हिंदी काव्य की रचनाओं की तरह पौराणिक और काल्पनिक दोनों प्रकार की रचनाएँ उपलब्ध है। दरबारी वर्णन एवं व्यापक नायिकाओं के वर्णन को ही काव्य का आधार बनाया गया। नायिकाओं में सीता और राधा का नखशिख वर्णन किया गया है। इस युग का काव्य, शब्दालंकार, क्लिष्ट शब्दावली और श्रृंगार रस से पूर्ण है। इस युग को उपेंद्रभंज युग भी कहा जाता है क्योंकि इन्होंने इस युग को पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया। उपेंद्रभंज के पूर्व के कवि धनंजय भंज (प्रमुख कृति रघुनाथविलास काव्य, त्रिपुरसुंदरी, मदनमंजरी, अनंगरेखा, इच्छावती, रत्नपरीक्षा, अश्व और गजपरीक्षा आदि), दिनकृष्णदास (प्रमुख कृति 'रसकल्लोल', 'नामरत्नगीता', 'रसविनोद', 'नावकेलि', 'अलंकारकेलि', 'आर्तत्राण', 'चौतिशा' आदि) है।

3. आधुनिक युग या स्वतंत्र्य काल (1850 से वर्तमान) – ओड़ीसा राज्य पर मुख्य रूप से मुगलों एवं मराठों का शासन था। अंग्रेजों के आगमन के बाद एक ओर जहां राजनीतिक क्षेत्र में परिवर्तन हुआ वहीं दूसरी ओर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में भी बदलाव आया। भारत के अन्य राज्यों की तरह ओड़ीसा में भी शुरुआत में अंग्रेजी भाषा की ओर लोगों का रुझान बढ़ा किन्तु यह स्थिति बहुत ज्यादा दिनों तक नहीं रही। परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए युग पुरुष राधानाथ राय ने उड़िया साहित्य को एक नई दिशा दी जिससे इस युग को राधानाथ युग के नाम से भी जाना जाने लगा। किसी भी साहित्य में उस समय की परिस्थितियाँ स्पष्ट उभर कर सामने आती है। ऐसे में ओड़ीसा में हुए नवजागरण के समय जिन साहित्यकारों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई उनको परिस्थितियों ने भी प्रभावित किया था। तत्कालीन जागरूक लेखकों ने सामाजिक बुराइयों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया तथा उसे दूर करने का प्रयत्न किया। राधानाथ राय तथा फकीर मोहन सेनापति इनमें अग्रणी रहे। आधुनिक युग में ऐसे कई लेखक आए जिन्होंने नए युग के निर्माण के लिए कदम उठाए। उन लेखकों के नाम पर युग का नाम भी रखा गया।

i. **राधानाथ युग –** साहित्यिक दृष्टि से राधानाथ युग आधुनिक उड़िया साहित्य का आरंभिक युग है। राधानाथ इस युग के प्रमुख और प्रभावशाली साहित्यकार माने जाते है। इस युग में कविता साहित्य का प्रमुख रूप बनी रही। राधानाथ राय की रचनाओं में भारतीय गौरवशाली इतिहास, पौराणिक प्रसंग और राष्ट्रीय चेतना को प्रमुखता दी गई। इन्होंने संस्कृत के मेघदूत तुलसी पदावली का उड़िया में

अनुवाद किया। इन्होंने गद्द और पद्द द्वारा उड़िया साहित्य को समृद्ध किया। इस युग में इनकी प्रमुख रचनाएँ शिवाजी की उत्साहवाणी, महापात्र, इतालवी युवा तथा विवेकी आदि है।

ii. **सत्यवादी युग -** 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ से शुरु इस युग का नाम उड़िया मासिक पत्रिका सत्यवादी के नाम पर पड़ा। इस युग में उड़िया निबंध, जीवनी, नाटक, कहानियाँ और संपादकीय लेखों का विशेष विकास हुआ। सत्यवादी युग उड़िया साहित्य का राष्ट्रवादी और समाज सुधारवादी युग था। इस युग के मुख्य कवि गोपबंधु दास है। उनकी प्रमुख रचनाएँ धम्मपद, वंदीर, आत्मकथा, अवकाश चिंता आदि द्वारा राष्ट्रियता को बढ़ावा दिया। नीलकंठ दास, गोदावरीश मिश्र, भगवती चरण पटनायक, आचार्य हरिहर दास, कृष्णचंद्र गजपति आदि इस युग के प्रमुख कवि हैं।

iii. **सबुज युग –** सबुज युग सत्यवादी युग के बाद बीसवीं शताब्दी के तीसरे और चौथे दशक के बीच पाँच कवियों द्वारा चलाया जाने वाला एक आंदोलन है। इन पाँच कवियों में अंदाशंकर रा, अनंत पटनायक, नबा कृष्ण चौधरी, कृष्णप्रसाद ब्रह्मचारी, हरिहर महापात्र, शरच्चंद्र मुखर्जी, कालिंदीचरण पाणिग्रही तथा बैकुंठनाथ पट्टनायक। इन पाँच लेखकों ने मिलकर काव्य तथा गद्द रचनाएँ की। कुल मिलाकर सबूज युग उड़िया साहित्य का वह काल था जिसमें साहित्य का रोमांटिक और सौंदर्यवादी पक्ष उजागर हुआ। इस युग ने साहित्य को आधुनिक रूप दिया और भविष्य के साहित्यिक आंदोलनों के लिए आधार तैयार किया।

iv. **प्रगति युग –** लगभग 1947 ई. से 1964 ई. में शुरू यह युग उड़िया साहित्य में सामाजिक चेतना, यथार्थ और परिवर्तन की प्रेरणा से भरा युग है। यह युग आज भी साहित्य को सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ने के लिए प्रेरणादायक है। इस युग की रचनाओं में सामाजिक यथार्थ, क्रांतिकारी विचारधारा, जन-साहित्य, नाटकीय और कथा साहित्य में बदलाव तथा नारी और दलित चेतना का आरंभ आदि शामिल है। इस युग के प्रमुख रचनाकार सच्चीदानन्द राउत राय, गोपीनाथ महान्ति, गोपालचन्द्र प्रह्लाद, सूर्यनाथ सिंह, प्रतिभा राय (प्रारम्भिक लेखन), नित्यानंद गोदावरीश महापात्र हैं।

इस काल में साहित्य मुख्य रूप से शीलालेखों और धार्मिक ग्रन्थों में पाया जाता है। इस काल में धार्मिक और पौराणिक साहित्य की रचना अधिक हुई है। उड़िया की सर्वप्रथम कहानी रेवती 1898 में लिखी गई जिसमें सामाजिक अंधविश्वास, कुसंस्कर,, दक़ियानुसी विचार, जर्जर परंपरा का विरोध है। साथ ही नारी शिक्षा के प्रति प्रबल आग्रह है।

उड़िया भाषा भारत की प्रमुख भाषाओं में से एक है। किन्तु स्वतंत्र भाषा के रूप में विकसित होने में इसे काफी समय लग गया। फकीर मोहन सेनापति, राधानाथ राय, मधुसूदन राव जैसे विद्वानों के प्रयास से स्वतंत्र भाषा होने के साथ-साथ इसमें समृद्ध साहित्यिक रचनाएँ भी हुई। फकीर मोहन से लेकर गोपी नाथ मोहंती ने उड़िया भाषा को अमूल्य निधियाँ प्रदान की है। उड़िया भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं है बल्कि ओड़ीशा की सांस्कृतिक, साहित्यिक और ऐतिहासिक पहचान का वाहक भी है।

प्रीति साव

उर्दू: ग़ज़ल, शायरी और सौंदर्य-बोध की भाषा

उर्दू भाषा, भारतीय उपमहाद्वीप की संस्कृति और इतिहास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह अपनी मिठास भरी ध्वनियों के लिए जानी जाती है। जो बोलने और सुनने में बड़ी ही सुखद मालूम होती हैं। हिंदवी, ज़बान-ए-हिंद, गुजरी, दक्कनी, ज़बान-ए-दिल्ली, ज़बान-ए-उर्दू-ए-मुअल्ला, हिंदुस्तानी और रेख्ता जैसे कई नामों से लोकप्रिय उर्दू भाषा का जन्म 13वीं शताब्दी में भारत में ही हुआ है। व्याकरण और ध्वनि-विज्ञान में हिंदी से समानता रखने वाली इस भाषा का शब्दकोश अरबी, फ़ारसी, तुर्की, ब्रज और संस्कृत शब्दों की मदद से विकसित हुआ। पंद्रहवीं सदी में इसमें कई परिवर्तनों का समावेश हुआ। इन बदलावों को अपने अंदर समेटे हुए उर्दू भाषा समृद्ध होती गई। आइए जानते है उर्दू की कहानी।

यदि गौर किया जाए तो उर्दू हमारे सामान्य बोलचाल में रच-बस गई है यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि उर्दू को हिंदी के बिना और हिंदी को उर्दू के बिना, नहीं बोला जा सकता। दोनों ही भाषाएँ एक-दूसरे की पूरक हैं।

जनाब अहमद वसी के शेर से अपनी बात मुकम्मल कर दूँ कि

"वो करे बात तो हर लफ्ज से ख़ुश्बू आए
ऐसी बोली वही बोले जिसे उर्दू आए"

देखा जाए तो उर्दू की उत्पत्ति हिंदी से ही हुई है इसलिए इसे कभी हिंदी की बहन के रूप में तो कभी अल्पकालिक भाषा के रूप में संदर्भित किया जाता रहा क्योंकि दोनों का व्याकरण समान है। इसे भी इंडो- यूरोपियन भाषा के रूप में वर्गीकृत किया गया है। यह नस्तालीक लिपि में लिखी जाती है। लेखन पद्धति के अनुसार यह अरबी भाषा के समान ही है, इस भाषा को कभी "लिंगुआ फ्रैंका" के रूप में परोसा गया था। यह शुरू में ब्रिटिश भारत के सिर्फ उत्तर – पश्चिम और उत्तरी हिस्से में संचालित की गई थी परन्तु कालांतर में लगभग सभी हिंदी प्रदेशों में फैल गई। इसका साहित्य काफी समृद्ध माना जाता है पहले उर्दू कवि अमीर खुसरो ने मुख्य रूप से लोकगीत, दोहा और विभिन्न प्रकार की हिंदवी पहेलियों की रचना कर इस भाषा को और समृद्ध किया। उर्दू का साहित्य भारतीय संस्कृति और इस्लामी संस्कृति के बीच वास्तविक संश्लेषण को दर्शाता है। उर्दू संस्कृति

मुख्य रूप से, बहुभाषी भारत के वास्तविक मिश्रित संस्कृति विकास का प्रतिनिधित्व करती है। जनाब जावेद सबा का वो शेर याद आता है कि

"एक ही फूल से सब फूलों की खुश्बू आए
और ये जादू उसे आए जिसे उर्दू आए"

उर्दू भारतवर्ष की आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में से एक है। इसका विकास मध्ययुग में उत्तरी भारत के उस क्षेत्र में हुआ जिसमें आज पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दिल्ली और पूर्वी पंजाब सम्मिलित हैं। इसका आधार प्राकृत और अपभ्रंश थी जिसे शौरसेनी कहते थे और जिससे खड़ीबोली, ब्रजभाषा, हरियाणवी और पंजाबी आदि ने जन्म लिया था। साहित्यिक इतिहास से पता चलता है कि उर्दू भाषा में शायरी का आरंभ दक्कन की गोलकोंडा रियासत के समय में ही हो गया था, जो 1527 में बहमनी सल्तनत के पतन के बाद एक स्वतंत्र राज्य के रूप में स्थापित हुई थी। इसका गद्य साहित्य, शायरी से भी पहले से मौजूद था। उर्दू भाषा और साहित्य के विकास में शायरों के साथ सूफ़ियों का भी बड़ा योगदान रहा। दक्कन पर मुग़लों के आक्रमण तक इसका विकास जारी रहा। इसके बाद यह जबान अलग-अलग इलाक़ों में नई-नई सूरतों में फली-फूली। बहमनी राज्य के पतन के पश्चात्जब दक्षिण में पाँच राज्य बने तो उर्दू को उन्नति करने का और मौका मिला। जनता से संपर्क रखने के लिए बादशाहों ने भी उर्दू को ही मुख्य स्थान दिया। गोलकुंडा और बीजापुर में साहित्य और कला कौशल की उन्नति हुई। हिंदी खड़ी बोली और उर्दू का विकास एक साथ माना जाता सकता है। जनता ने हिंदी और उर्दू को एक साथ अपनाया। जनाब मुनव्वर राणा का एक शेर याद आता है कि

"लिपट जाता हूँ माँ से और मौसी मुस्कुराती है
मैं उर्दू में ग़जल कहता हूँ हिंदी मुस्कुराती है"

उर्दू का मूल आधार तो खड़ी बोली ही है किंतु दूसरे क्षेत्रों की बोलियों का प्रभाव भी उस पर पड़ता रहा। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि आरंभ में इसको बोलने वाली या तो बाजार की जनता थी अथवा वे सूफी-फकीर थे जो देश के विभिन्न भागों में घूम-घूमकर अपने विचारों का प्रचार करते थे। इसी कारण इस भाषा के लिए कई नामों का प्रयोग हुआ है। अमीर खुसरो ने उसको 'हिंदी', 'हिंदवी' अथवा 'ज़बाने देहलवी' कहा था; दक्षिण में पहुँची तो 'दकिनी' या 'दक्खिनी' कहलाई, गुजरात में 'गुजरी' (गुजराती उर्दू) कही गई; दक्षिण के कुछ लेखकों ने उसे 'ज़बाने-अहले-हिंदुस्तान' (उत्तरी भारत के लोगों की भाषा) भी

कहा। जब कविता और विशेष रूप से गजल के लिए इस भाषा का प्रयोग होने लगा तो इसे 'रेख्ता' (मिली-जुली बोली) कहा गया। बाद में इसी को 'ज़बाने उर्दू', 'उर्दू-ए-मुअल्ला' या केवल 'उर्दू' कहा जाने लगा। यूरोपीय लेखकों ने इसे साधारणत: 'हिंदुस्तानी' कहा है और कुछ अंग्रेज लेखकों ने इसको 'मूस' के नाम से भी संबोधित किया है। उद्गम की दृष्टि से उर्दू वही है जो हिंदी है; देखने में केवल इतना ही अंतर मालूम देता है कि उर्दू में अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग कुछ अधिक होता है। इसकी लिपि देवनागरी से भिन्न है और कुछ मुहावरों के प्रयोग ने इसकी शैली और ढाँचे को बदल दिया है। परंतु साहित्यिक परंपराएँ और रूप, सभी तत्व एक ही साँचे में ढले हुए हैं।

उर्दू मुहब्बत की ज़ुबान कही जाती है। इसमें लिखे गए काव्य को पढ़कर इस बात को और भी गहराई से महसूस किया जा सकता है जिस प्रकार हिंदी काव्य में मात्रिक और वर्णिक छंद होते हैं, मात्रिक छंदों में दोहा, रोला, गीतिका, कुंडलिया, सोरठा और वर्णिक छन्द होते हैं उसी प्रकार उर्दू में भी काव्य की किस्में होती हैं जैसे गज़ल, नज्म, रूबाई आदि। ग़ज़ल में एक मतला (शुरू की दो पंक्तियां), एक मक़ता (आख़िरी दो पंक्तियां) और कुछ शेर होते हैं, मतले के दोनों मिसरे हमक़ाफ़िया होते हैं तथा हर शेर में, दूसरा मिसरा हमक़ाफ़िया और पहला मिसरा आज़ाद होता है। मक़ता में शायर का तख़ल्लुस (लिखने के लिए प्रयुक्त नाम) होता है। ग़ज़ल का प्रत्येक शेर, अपने आप में पूर्ण अर्थ लिए होता है, आपस में विषयैकता नहीं होनी चाहिए।

रुबाई अरबी शब्द रूबा से निकला है। जिसका अर्थ होता है चार। रूबाई में चार मिसरे होते हैं जिसकी पहली दो और अंतिम पंक्ति का काफ़िया मिलना चाहिए यदि तीसरी पंक्ति का तुकांत भी मिलता है तो कोई गलती नहीं मानी जाती है। नज्म हिंदी के गीतों का एक रूप है जिसमें अलग-अलग बंध होते हैं तथा किसी भी विषय पर हो सकते हैं।

20 वीं सदी की शुरुआत होते ही क्लासिक साहित्य आहिस्ता-आहिस्ता गायब हो गया। इस प्रकार जो लोग उर्दू लिपि नहीं जानते थे उनके लिए उर्दू भाषा और इसकी समृद्ध साहित्यिक विरासत को समझना और पढ़ना मुश्किल हो गया। उर्दू की लेखन शैली हिंदी या अन्य किसी भाषा से थोड़ी भिन्न मालूम पड़ती है जहाँ अधिकतर भाषाएँ बाँए से दाँए की ओर लिखी जाती है वहीं उर्दू दाएँ से बाएँ लिखी जाती है। उर्दू वर्णमाला में 38 मूल अक्षर होते हैं कुछ विद्वान इनकी संख्या 39 भी मानते हैं। उर्दू में लघु स्वरों के चिन्ह नहीं होते हैं लेकिन उन्हें ; ज़बर (अ ध्वनि के लिए), जेर (इ ध्वनि के लिए) और पेश (उ ध्वनि के

लिए) के माध्यम से दर्शाया जाता है हैं। उर्दू में कुछ ध्वनियों का अंग्रेजी या रोमन वर्णमाला में लिखी गई अन्य भाषाओं में कोई समकक्ष नहीं है। इस कारण से रोमन अक्षरों का उपयोग करके उर्दू शब्दों का सही उच्चारण व्यक्त करना अक्सर मुश्किल होता है। उर्दू एक मिलवा लिपि है। जब कोई अक्षर दूसरे अक्षर से जोड़ा जाता है तो उसका लघु रूप लिखा जाता है। जब अक्षरों से शब्द बनाए जाते हैं तो अधिकतर अक्षरों के लघु रूप लिखे जाते हैं। जब उर्दू लिखी जाती है तो हमेशा यह ज़रूरी नहीं है कि शब्दों में सभी मात्राएँ लगाई जाए, आस-पास के कथानक या संदर्भ को देखते हुए इसमें शब्दों का अनुमान या उच्चारण करना पड़ता है।

भारत की 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में उर्दू बोलने वालों की अनुमानित संख्या पॉंच करोड़ सतहत्तर लाख बताई गई है जिसमें उतर प्रदेश में सबसे ज्यादा उसके बाद बिहार, आंध्रा, महराष्ट्र और कर्नाटक में बोली जाती है। सामूहिक तौर पर इन राज्यों में उर्दू बोलने वालों की 85 प्रतिशत आबादी रहती है। दिल्ली अब भी उर्दू साहित्य और प्रकाशन का बड़ा केन्द्र माना जाता है। इसे संविधान की आठवीं सूची में शामिल होने का गौरव भी प्राप्त है।

ज़फर रिज़वी

कन्नड भाषा की उत्पत्ति एवं विकास

हमारा देश मूलरूप से एक बहुभाषी देश है, विभिन्न प्रांतों में विभिन्न भाषाएँ-बोलियों का प्रयोग अनादि काल से प्रचलन में है। कन्नड भाषा, द्रविड़ भाषा परिवार की भाषा है, और इसकी उत्पत्ति का स्रोत प्रोटो-द्रविड़ भाषाओं से है। यह लगभग 2,500 वर्ष पूर्व से अस्तित्व में है, और लिखित रूप में लगभग 1,900 वर्षों से है। कन्नड में संस्कृत के भी कई शब्द पाए जाते हैं।

उत्पत्ति:

कन्नड भाषा, जो द्रविड़ भाषा परिवार से है, उत्पत्ति प्रोटो-द्रविड़ भाषाओं से मानी जाती है। कुछ विद्वानों के अनुसार, कन्नड, संस्कृत शब्द "कर्नाट" का तद्भव रूप है। इसके शुरुआती अभिलेखों में सातवाहनों के शासन के दौरान तेलंगाना तांबे की प्लेटें शामिल हैं। 5वीं शताब्दी ई. में लिखे गए शिलालेखों से कन्नड लिपि के शुरुआती रूपों का पता चलता है। चालुक्य काल (लगभग 6वीं-8वीं शताब्दी) के दौरान, कन्नड ने तेजी से विकास किया और एक विशिष्ट साहित्यिक परंपरा के रूप में स्थापित हुई।

विकास:

कन्नड भाषा का विकास विभिन्न बोलियों में हुआ, जिससे अंततः तेलुगु और मलयालम जैसी अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का विकास हुआ। कन्नड लिपि, 5वीं शताब्दी की कदंब लिपि से विकसित हुई है। कन्नड साहित्य में 9वीं शताब्दी के राष्ट्रकूट साम्राज्य के दौरान, **कविराजमार्ग** जैसे शास्त्रीय महाकाव्यों का उदय हुआ। मध्यकाल में, "पम्पा भारत" और "जैमिनी भारत" जैसे महाकाव्यों की रचना की गई। हरिदास साहित्य, जो भक्ति गीतों का एक संग्रह है, कन्नड साहित्य का एक महत्वपूर्ण पहलू है। आधुनिक कन्नड साहित्य में, पत्र-पत्रिकाओं और विभिन्न साहित्यिक विधाओं का विकास हुआ।

विशेषताएं:

कन्नड भाषा में 3 लिंग हैं - पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंग। इसमें दो संख्याएँ हैं

- एकवचन और बहुवचन। कन्नड में लगभग 20 बोलियाँ हैं। कन्नड को 2008 में शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्रदान किया गया।

कन्नड भाषा की विकासगाथा को निम्नलिखित रूप से वर्गीकृत किया जाता है:

1. हलेगन्नड़ा: कन्नड साहित्य के विकास की दसवीं सदी से बारहवीं सदी की अवधि को "हलेगन्नड़ा"**(पुरातन कन्नड)** के नाम से जाना जाता है। इस अवधि के दौरान रचित साहित्य पर जैन धर्म का प्रभाव स्पष्ट है, इस अवधि के दौरान रचित साहित्य को "आदिकाव्य" भी कहा जाता है।

इस अवधि के प्रमुख कवि हैं पंपा (902-975) पंपा कवि की रचना **"विक्रमार्जुन विजय"** या **"पंपा भारत"** आज भी एक महान कृति के रूप में प्रख्यात है। इनकी अन्य कृति आदि पुराण की रचना के कारण कन्नड भाषा की काव्य परंपरा के दिग्गजों में इनकी गिनती होती है।"**पंपा भारत"** संस्कृत महा भारत का कन्नड रूपांतरण है, जिसमें विश्व मानवतावाद एवं गंभीर लेखन शैली के कारण इसे कन्नड भाषा में प्रमुख रचना मानी जाती है। इस कृति में एक पंक्ति इस तरह है- **"मानवकुला तानोंदे वलं"** अर्थात्, समस्त मानव कुल एक ही है- इस तरह पंपा महा कवि विश्व मानवतावाद के मंत्र का जाप करने वालों में से एक है। जो "वसुदैव कुटुम्बकम" की परिकल्पना को साकार करती है।

इस युग के दूसरे कविमान्य है पोन्ना (939-966) और रन्ना (949) इनकी महान कृति है **"अजीत तीर्थंकर पुराण"** और **"गधा युद्ध"** या "साहस भीम विजय" यह कृति महा भारत के सिंहावलोकन की दृष्टि से महा भारत युद्ध के अंतिम चरण में आनेवाली कथा को लेकर वर्णन होने के बावजूद भी सिंहावलोकन क्रम में समग्र महा भारत का विश्लेषण करती है। छंद की दृष्टि से चम्पू काव्य शैली में इसकी रचना की गई है। चम्पू काव्य का अर्थ है गद्य और पद्य मिश्रित रचना। जिसमें एक पंक्ति आती है

//नीरवलगिर्धमं बेवर्दम उरगपथाकम्//

अर्थात् महाभारत के अंत में दुर्योधन वैशंपाय सरोवर में गुप्त रूप से छिपकर बैठे थे, तभी भीम ने उनको युद्ध के लिए ललकारता है, तब दुर्योधन स्वयं पानी में होकर भी पसीना-पसीना हो जाता है।

2. **नडुगन्नडा:** नडुगन्नड साहित्य में नए साहित्य के अनेक प्रकार सामने आते हैं। इसमें प्रमुख रगले, सांगत्य एवं देशी हैं। इस काल के प्रमुख लेखकों में से एक हरिहरा और राघवांक हैं। उन्होंने अपनी विशिष्ट शैली में कन्नड साहित्य को विकसित किया तथा अधिक साहित्य की रचना की।

हरिहर ने अपने विशिष्ट साहित्यिक शैली में शैव और वीरशैव रचनाओं के माध्यम से विशिष्ट कृतियों की रचना की। राघवांक ने अपनी छह रचनाओं के माध्यम से छंदों को लोकप्रिय बनाया। उनकी कृति हरिश्चंद्र काव्य, एक पौराणिक काव्य, हरिश्चंद्र के जीवन पर एक टिप्पणी है। यह कृति अपने प्रबल मानवतावादी विचारों के लिए भी प्रसिद्ध है।

इस काल के एक अन्य प्रसिद्ध जैन कवि जन्ना हैं। उन्होंने अपनी कृतियां यशोधरा चरित्र और अनंतनाथ पुराणों के माध्यम से जैन परंपरा के बारे में लिखा।

कन्नड भाषा पर आधारित कृति केशिराज जी का **"शब्दमणिदर्पण"** भी इसी काल की एक कृति है।

3. **आधुनिक कन्नड –** कन्नड, अंग्रेजी शासन के शुरुआती चरणों के दौरान ज्यादा प्रकाश में नहीं आई। 19वीं शताब्दी के अंत और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में इसका एक नया जन्म हुआ। इससे आधुनिक कन्नड कविता का विकास हुआ। इस चरण के दौरान, बी.एम. श्री, कुवेम्पु, बेंद्रे और शिवराम कारंत जैसे महान लेखक प्रकाश में आए। इस अवधि की शैलियाँ रोमांटिक अंग्रेजी कविता और नाटकों से प्रभावित थीं। यह विकास बी.एम. श्री ने अपनी अंग्रेजी कविताओं की पुस्तक के साथ किया।

कई कुशल कन्नड लेखकों ने, विशेष रूप से शिक्षण पेशे में, अपनी मातृभाषा में लेखन के महत्व को देखा और कन्नड के विकास में योगदान दिया।

इसका एक उदाहरण कुवेम्पु हैं – जिन्होंने अपने एक ब्रिटीश शिक्षक के जरिए कन्नड में लेखन का महत्व जाना और आगे चल कर राष्ट्र कवि की उपाधि प्राप्त की। उनका प्रकृति के प्रति प्रेम, मनुकुल के विकास में आस्था और प्रकृति एवं ईश्वर के सम्मिश्रण देखने वाला कवि का मन, उनको कन्नड साहित्य लोक के एक अत्युन्नत कवि के रूप में स्थापित किया हैं। उनकी सबसे प्रसिद्ध काव्य कृति श्री रामायणदर्शनम है जिसके लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया गया था। एक अन्य महत्वपूर्ण लेखक शिवराम कारंत हैं -

अत्यंत बुद्धिमान, गहन भक्ति और गहन सरोकार के लेखक हैं। उनकी सशक्त और गहन साहित्यिक कृतियों में प्रसिद्ध हैं – **चोमन दुडी, बेट्टद जीवा, वैमनसुगल सुलीयल्ली, मरली मन्निगे और मूकज्जिय कनसुगलु** आदि प्रमुख रचनाएँ हैं। इनके अलावा द.रा. बेंद्रे, गीरिश कार्नाड, वी.कृ.गोकाक, आदि महाना साहित्यकारों ने कन्नड साहित्य लोक को श्रीमंत बनाया।

इस तरह कन्नड भाषा एक सशक्त एवं समृद्ध साहित्यिक पृष्टभूमि की भारतीय भाषाओं के इतिहास में अपनी छाप छोड़ती है और साहित्यिक रचना में सृजनशीलता तथा साहित्य के सभी प्रकारों में उदात्त विचारों को मनुष्य के उद्धार हेतु मार्गदर्शन करती है।

प्रशांत एन. कित्तली

तमिल: प्राचीन सभ्यता और गौरव की भाषा

"தமிழுக்கும் அமுதென்று பேர்; அந்தத் தமிழ் இன்பத் தமிழ் எங்கள் உயிருக்கு நேர்...."

"तमिलुक्कु अमुदेंहु पेयर: अंद तमिल इन्ब तमिल एंग उयिरिक्कु नेरू..."

तमिल का दुसरा नाम अमृत है। ऐसी प्यारी तमिल हमारी जीवन के समान प्यारी है।

इस कविता में, तमिल भाषा को अमृत के रूप में सराहा गया है और इसे तमिलों द्वारा उनके जीवन से भी अधिक सम्मानित किया जाता है।

तमिल एक द्रविड़ भाषा है जिसे दक्षिण एशिया के तमिल लोगों द्वारा बोला जाता है। यह विश्व की सबसे लंबे समय तक जीवित रहने वाली शास्त्रीय भाषाओं में से एक है, जिसका अस्तित्व 300 ईसा पूर्व से है। तमिल को 2004 में केंद्रीय सरकार द्वारा भारत की पहली शास्त्रीय भाषा के रूप में मान्यता दी गई थी।

दक्षिण भारत में प्रारंभिक समुद्री व्यापारियों के लिए तमिल एक संपर्क भाषा जैसी थी, और तमिल अभिलेख भारतीय उपमहाद्वीप के बाहर भी पाए गए हैं, जैसे कि इंडोनेशिया, थाईलैंड और मिस्र में। इस भाषा का सुव्यवस्थित प्रलेखित इतिहास है जिसमें संगम साहित्य जैसे साहित्यिक कार्य और 2,000 से अधिक कविताएँ शामिल हैं। तमिल लिपि तमिल ब्राह्मी से विकसित हुई, और इसके बाद, वर्तमान लिपि के मानकीकरण तक वटेलुत्तु का प्रयोग किया गया।। इस भाषा की एक विशिष्ट व्याकरणिक संरचना है। जिसमें संयुक्त रूप वाले रूपविज्ञान होते हैं जो जटिल शब्द गठन की अनुमति देते हैं।

ऐतिहासिक उत्पत्ति

तमिल, अन्य द्रविड़ भाषाओं की तरह, अंततः प्रोटो-द्रविड़ भाषा से व्युत्पन्न होती है, जिसे सबसे अधिक संभावना तीसरी सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व के आस पास बोला जाता था, संभवतः निम्न गोदावरी नदी बेसिन के आसपास के क्षेत्र में। सामग्री के प्रमाणों से संकेत मिलता है कि प्रोटो-द्रविड़ बोलने वाले उन संस्कृतियों से संबंधित थे जो दक्षिण भारत के नवपाषाण जटिलताओं से जुड़ी थीं, लेकिन इसे हड़प्पा सभ्यता से भी जोड़ा गया है।

विद्वानों ने इस भाषा के प्रमाणित इतिहास को तीन अवधियों में वर्गीकृत किया है: पुरानी तमिल (300 ईसा पूर्व–700 ईस्वी), मध्य तमिल (700–1600) और आधुनिक तमिल (1600–वर्तमान)।

ब्राह्मी लिपि

भारत में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा पाए गए लगभग 1,00,000 अभिलेखों में से लगभग 60,000 तमिलनाडु में हैं। इनमें से अधिकांश तमिल में हैं, जबकि लगभग 5 प्रतिशत अन्य भाषाओं में हैं।

2004 में, आदिचनल्लुर में कम से कम 696 ईसा पूर्व की तारीख की मिट्टी के बर्तन में दफनाए गए कई कंकाल पाए गए। इनमें से कुछ बर्तनों में तमिल ब्राह्मी लिपि में लेखन था, और कुछ में तमिल मूल के कंकाल थे। 2017 और 2018 के बीच, कीष़डी में 5,820 वस्तुएं पाई गईं। इन्हें फ्लोरिडा के मियामी में बीटा एनालिटिक भेजा गया था, जहाँ इन्हें एक्सेलेरेटर मास स्पेक्ट्रोमीट्री (एएमएस) डेटिंग के लिए भेजा गया। एक नमूने में तमिल-ब्राह्मी अभिलेख पाए गए, जिसे लगभग 580 ईसा पूर्व की तारीख का बताया गया।

पुरानी तमिल

मंगलम, मदुरै जिले, तमिल नाडु में मंगलम तमिल ब्राह्मी शिलालेख, तमिल संगम काल (लगभग 400 ईसा पूर्व – लगभग 200 ईस्वी) की तारीख।

पुरानी तमिल वह काल है जब तमिल भाषा तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व से 8वीं शताब्दी ईस्वी तक प्रचलन में थी। पुरानी तमिल का पहला रिकॉर्ड् 300 ईसा पूर्व से 700 ईस्वी तक का संक्षिप्त शिलालेख हैं। ये शिलालेख एक प्रकार की ब्राह्मी लिपि में लिखे गए हैं जिसे तमिल-ब्राह्मी कहते हैं। पुरानी तमिल में सबसे पहले लंबा पाठ **तोल्काप्पियम** है, जो तमिल व्याकरण और काव्यशास्त्र पर एक प्रारंभिक काम है, जिसकी सबसे पुरानी परतें दुसरी शताब्दी ईसा पूर्व के अंत तक की हो सकती हैं। पुरानी तमिल में कई साहित्यिक कृतियां भी प्राप्त हुई हैं। इनमें 2,381 कविताओं का एक संग्रह शामिल है जिसे संगम साहित्य कहा जाता है। ये कविताएं आमतौर पर पहली शताब्दी ईसा पूर्व और 5वीं शताब्दी ईस्वी के बीच की मानी जाती हैं।

मध्य तमिल

चोला काल के दौरान पत्थर में वट्टेलुट् लिपि में मध्य तमिल शिलालेख लगभग 1000 ईस्वी में तमिलनाडु के तंजावुर में बृहदेश्वर मंदिर में पाए जाते हैं।

पुरानी तमिल का मध्य तमिल में विकास, जिसे सामान्यतः 8वीं सदी तक पूर्ण माना जाता है, कई ध्वन्यात्मक और व्याकरणात्मक परिवर्तनों द्वारा विशेषता प्राप्त करता है। ध्वन्यात्मक दृष्टिकोण से, सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन थे- ध्वनि आयताम (ஃ) का लगभग गायब होना, आल्वियोलर और दांतों के नेंसल का विलय, और आल्वियोलर विस्फोटक का एक रोतिक में परिवर्तन। व्याकरण में, सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन वर्तमान काल का उद्भव था। वर्तमान काल क्रिया किल (கில்) से विकसित हुआ, जिसका अर्थ है; 'संभव होना' या 'होना'। पुरानी तमिल में, यह क्रिया का उपयोग एक पहलू मार्कर के रूप में किया गया था ताकि यह इंगित किया जा सके कि एक क्रिया सूक्ष्म-टिकाऊ थी, गैर-निरंतर या गैर-स्थायी, आमतौर पर एक समय मार्कर जैसे इन् (ன்) के संयोजन में। मध्य तमिल में, इस उपयोग ने वर्तमान काल के संकेतक – 'किंरा' (கின்ற) - में विकास किया, जिसने पुराने पहलू और समय संकेतकों को मिलाया।

आधुनिक तमिल

नन्नूल आधुनिक साहित्यिक तमिल के लिए मानक व्याकरण है, जो 13वीं शताब्दी के मध्य तमिल पर आधारित है, न कि आधुनिक तमिल पर। इसके विपरीत, बोलचाल की तमिल में कई परिवर्तन दिखते हैं। उदाहरण के लिए, क्रियाओं का नकारात्मक संयोजन, आधुनिक तमिल में उपयोग में नहीं रहा है - इसके बजाय, नकारात्मकता को या तो रूपात्मक या व्याकरणिक रूप से व्यक्त किया जाता है। आधुनिक तमिल में कई ध्वनि परिवर्तन भी होते हैं, विशेष रूप से, आरंभिक और मध्य स्थितियों में उच्च स्वर को नीचे लाने की प्रवृत्ति, और प्लोसीव्स और एक प्लोसीव और रोथिक के बीच स्वर का गायब होना।

यूरोपीय भाषाओं के साथ संपर्क ने लिखित और बोल-चाल की तमिल को प्रभावित किया। साहित्यिक तमिल में हुए परिवर्तनों में यूरोपीय-शैली के विराम चिह्नों का उपयोग और ऐसे व्यंजन समूहों का उपयोग शामिल है जो मध्य तमिल में नहीं थे। साहित्यिक

तमिल की विश्लेषणात्मक संरचना में भी परिवर्तन आया है, नए आस्पेक्टुअल सहायक और अधिक जटिल वाक्य संरचनाओं के समावेश के साथ, एक अधिक कठोर शब्द क्रम का उदय हुआ है जो अंग्रेजी की व्याकरणिक तर्क संरचना के समान है।

1578 में, पुर्तगाली ईसाई मिशनरियों ने पुरानी तमिल लिपि में एक तमिल प्रार्थना पुस्तक प्रकाशित की जिसका नाम था तंबिरान वणक्कम, इस प्रकार तमिल को सबसे पहले प्रकाशित और छापी गई भारतीय भाषा के रूप में मान्यता मिली। मद्रास विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित तमिल शब्दकोश, भारतीय भाषाओं में प्रकाशित होने वाले सबसे पहले शब्दकोशों में से एक था।

भौगोलिक वितरण

तमिल भाषा तमिलनाडु, पुदुचेरी (भारत में) और श्रीलंका के उत्तरी और पूर्वी प्रांतों में रहने वाले अधिकांश लोगों की प्राथमिक भाषा है। यह भाषा भारत के कुछ अन्य राज्यों में अल्प संख्यक समूहों के बीच बोली जाती है, जिनमें कर्नाटक, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, केरल, महाराष्ट्र, गुजरात, दिल्ली, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह शामिल हैं और श्रीलंका के कुछ क्षेत्रों में, जैसे कोलंबो और पहाड़ी क्षेत्र। तमिल या इसकी बोलियाँ केरल राज्य में 12वीं सदी ईस्वी तक प्रशासन, साहित्य और सामान्य उपयोग की प्रमुख भाषा के रूप में व्यापक रूप से प्रयोग की गईं। तमिल का उपयोग 12वीं सदी ईस्वी तक आंध्र प्रदेश के चित्तूर और नेल्लोर जिलों में पाए जाने वाले शिलालेखों में भी किया गया था। 10वीं से 14वीं सदी में दक्षिण कर्नाटक के जिलों जैसे कोलार, मैसूर, मांड्या और बेंगलूरु में शिलालेखों के लिए तमिल का उपयोग किया गया।

वर्तमान में, मलेशिया, सिंगापुर, फिलिपीन्स, मॉरिशस, दक्षिण अफ्रीका, इंडोनेशिया, थाईलैंड, बर्मा, ब्रुनेई, और वियतनाम में उपनिवेशी युग के प्रवासियों से उत्पन्न बड़ी तमिल-भाषी जनसंख्या मौजूद हैं। मलेशिया में तमिल एक शैक्षणिक भाषा के रूप में उपयोग की जाती है। कराची, पाकिस्तान में पाकिस्तानी तमिल बोलने वालों का एक बड़ा समुदाय है, जिसमें तमिल-भाषी हिंदू, ईसाई और मुसलमान शामिल हैं - जिनमें कुछ श्रीलंका से तमिल-भाषी शरणार्थी भी हैं। कराची के मद्रासी पारा कॉलोनी में लगभग 100 तमिल हिंदू परिवार हैं। वे उर्दू, पंजाब और सिंधी के साथ-साथ ठेट तमिल बोलते हैं। रे रियूनियन, गयाना, फिजी, सुरिनाम, और त्रिनिदाद और टोबैगो में कई लोगों की तमिल उत्पत्ति है, लेकिन केवल एक छोटी संख्या के लोग इस भाषा को बोलते हैं। रेयूनियन में, जहाँ फ्रांस

द्वारा तमिल भाषा को सीखने और सार्वजनिक स्थान पर उपयोग करने की अनुमति नहीं थी, अब छात्रों और वयस्कों द्वारा इसे फिर से सीखा जा रहा है। तमिल भाषा भी श्रीलंका और भारत से आए प्रवासियों द्वारा केनडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, संयुक्त अरब अमीरात, यूनाइटेड किंगडम, दक्षिण अफ्रीका, और ऑस्ट्रेलिया में बोली जाती है।

औपचारिक स्थिति

तमिल भारतीय राज्य तमिलनाडु की आधिकारिक भाषा है और यह भारत के संविधान की VIII अनुसूची के तहत 22 भाषाओं में से एक है। यह केंद्र शासित प्रदेश पुदुचेरी तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह की आधिकारिक भाषाओं में से एक है। तमिल, सिंगापुर की भी एक आधिकारिक भाषा है। तमिल सिंहला के साथ श्रीलंका की एक आधिकारिक और राष्ट्रीय भाषा है।

इसके अतिरिक्त, अक्तूबर 2004 में भारत सरकार द्वारा शास्त्रीय भाषाओं के लिए कानूनी दर्जा बनाने के साथ और कई तमिल संघों द्वारा समर्थित एक राजनीतिक अभियान के बाद, तमिल भारत की पहली कानूनी मान्यता प्राप्त शास्त्रीय भाषा बन गई। यह मान्यता भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति, अब्दुल कलाम, जो स्वयं एक तमिल थे, द्वारा 6 जून 2004 को भारतीय संसद के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में प्रदान की गई।

शिक्षा

मलेशिया में, 543 प्राथमिक शिक्षा सरकारी स्कूल उपलब्ध हैं जो पूरी तरह से तमिल माध्यम के रूप में संचालित होते हैं। तमिल-माध्यम स्कूलों की स्थापना म्यांमार में 200 साल पहले वहां बसे तमिलों द्वारा पूरी तरह से तमिल भाषा में शिक्षा प्रदान करने के लिए की जा रही है। केनडा में कुछ स्थानीय स्कूल बोर्डों और प्रमुख विश्वविद्यालयों में तमिल भाषा एक पाठ्यक्रम के रूप में उपलब्ध है और जनवरी के महीने को केनडा के संसद द्वारा "तमिल धरोहर माह" घोषित किया गया है। तमिल को दक्षिण अफ्रीका के संविधान के अनुच्छेद 6(बी), अध्याय 1 के तहत विशेष सुरक्षा की स्थिति प्राप्त है और इसे क्वाज़ुलु-नटाल प्रांत के स्कूलों में एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता है। हाल ही में, इसे फ्रांसीसी विदेशी विभाग रेयूनियन के स्कूलों में अध्ययन के विषय के रूप में लागू किया गया है।

क्षेत्र-विशिष्ट भिन्नताएं

तमिल बोलियों में मुख्यतः एक-दूसरे से इस तथ्य द्वारा भिन्न होती हैं कि उन्होंने प्राचीन

तमिल से विकसित होने के दौरान विभिन्न ध्वन्यात्मक परिवर्तनों और ध्वनि परिवर्तनों का अनुभव किया है। हालांकि तमिल बोलियों की शब्दावली में महत्वपूर्ण भिन्नताएं नहीं हैं, कुछ अपवाद हैं। श्रीलंका में बोली जाने वाली बोलियां कई शब्दों और व्याकरणिक रूपों को बनाए रखती हैं जो भारत में रोज़मर्रा के उपयोग में नहीं हैं और कई अन्य शब्दों का उपयोग थोड़े अलग तरीके से करती हैं। तमिल बोलियों में भारत में केंद्रीय तमिल बोली, कोंगू तमिल, मद्रास तमिल, मदुरै तमिल, नेल्लई तमिल, कुमरी तमिल; श्रीलंका में बत्तिकलोआ तमिल बोली, जाफना तमिल बोली, नेगोंबो तमिल बोली; और मलेशिया में मलेशियन तमिल शामिल हैं।

तमिळरसी एस

तेलुगु भाषा की उत्पति एवं विकास

भाषा संवाद और विचारों को व्यक्त करने का एक माध्यम है। यह मानव समाज के लिए संचार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान और ज्ञान को संरक्षित करने का एक महत्वपूर्ण साधन है। भाषाएं वाक्य, शब्द और ध्वनियों के संयोजन से काम करती हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी व्याकरण और शब्दावली होती है। भाषाएं कई रूपों में हो सकती हैं, जैसे बोलचाल, लिखित, सांकेतिक या इशारों के माध्यम से। भारत की 22 अधिकृत भाषाओं में से एक भाषा तेलुगु है। तेलुगू भाषा भारतीय उपमहाद्वीप की दक्षिण-पश्चिम भारत (आंध्र प्रदेश और तेलंगाना राज्य) में बोली जानी वाली भाषा है। यह भाषा अन्य भारतीय भाषाओं के साथ संबन्धित है, जैसे कि तमिल, कन्नड और मलयालम। "तेलुगु" भाषा द्रविड भाषाओं में से एक भाषा है। यह दक्षिण भारतीय भाग में सबसे ज्यादा बोली जानी वाली भाषाओं में से एक है। इसकी उत्पत्ति और विकास के बारे में विभिन्न सिद्धांत हैं, लेकिन सामान्य रूप से मान्यता है कि तेलुगु भाषा का उद्भव और विकास महाभारत काल से हुआ है।

इसका साहित्य लगभग एक हजार वर्ष प्राचीन है। तेलुगु भाषा के लिए "तैने-तेलुगु" पदबंद प्रचलन में है, जिसका मतलब है- शहद जैसी तेलुगु। इससे यह संकेत मिलता है कि तेलुगु अपनी मधुरता और सुंदर शैली के कारण लोकप्रिय रही है। इस भाषा की मधुरता के कारण इसको "इटालियन ऑफ द ईस्ट" भी कहा जाता है। विजयनगर के राजा श्री कृष्ण देव राय ने कहा था कि "देश भाष लंदु तेलुगु लेस्स" अर्थात भारत की भाषाओं में तेलुगु भाषा श्रेष्ठ है। तेलुगु भाषा सामाजिक, सांस्कृतिक और प्रशासनिक व्यवहार के लिए अनेक भाषाओं को आत्मसात करते हुए समृद्ध और व्यवहारिक बनती गई है।

भाषा की उत्पति

तेलुगु एक ऐसी भाषा है जिसकी जड़ें प्रोटो द्रविडियन में हैं। 15वीं ई. पू और 1000 ईसा पूर्व के तेलुगु प्रोटो-द्रविड़ भाषा से अलग होकर स्वतंत्र रूप लेकर आगे बढ़ती गई। चालुक्य, काकतीय और विजयनगर साम्राज्य के संरक्षण में तेलुगु भाषा फली-फूली।

तेलुगु भाषा का नामकरण

प्राचीन काल में तेलुगु भाषा 'तेनुगु' (Tenugu) के नाम से जानी जाती थी। यह शब्द संभवतः द्रविड़ मूल (प्रोटो –द्रविडियन) के शब्द 'तेन' (दक्षिण) से निकला है। क्रमश:

दक्षिण की भाषा-तेनुगु से 'तेलुगु' बनी। मौर्य और सातवाहन काल (लगभग 200 ई.पू. – 300 ई.) में इस क्षेत्र और इसकी भाषा को 'आंध्र' कहा जाता था। आंध्र जाति, जो कि एक प्राचीन समुदाय थी, ने इस क्षेत्र में शासन किया और तभी से इस क्षेत्र को "आंध्र प्रदेश" कहा जाने लगा। संस्कृत ग्रंथों में भी 'आंध्र भाषा' और 'आंध्र लोग' का उल्लेख है।

एक प्रचलित मान्यता के अनुसार, तेलुगु शब्द की उत्पत्ति **'त्रिलिंग'** से मानी जाती है: त्रि (तीन) + लिंग (शिवलिंग) → त्रिलिंग → तेलुगु इस मान्यता के अनुसार, तेलुगु भाषा का नाम उन **तीन प्रमुख शिवालयों** के आधार पर पड़ा जो इस क्षेत्र की सीमाओं को चिह्नित करते हैं: आंध्र प्रदेश राज्य के पूर्वी गोदावरी जिले में स्थित द्राक्षाराम, तेलंगाना राज्य में करीमनगर जिले में स्थित कालेश्वरम और आंध्र प्रदेश राज्य में कर्नूल जिले में प्रशस्त श्रीशैलम। त्रिलिङ्ग शब्द का प्रयोग सबसे पहले तेलुगु के आदिकवि नन्नय भट्ट के महाभारत में मिलता है।

तेलुगु लिपि ब्राह्मी से विकसित हुई और इसमें 56 वर्ण होते हैं। सबसे पुराना ज्ञात तेलुगु शिलालेख 575 ई. में, रेनाडु (Kadapa) से मिला था, जिसे रेनाटी शिलालेख कहते हैं। इसकी लिपि 575 ई.पू. के आस पास से मिलती है। कन्नड भाषा की लिपि से तेलुगु लिपि का सबंध रहा है।

तेलुगु का विकास

प्रागैतिहासिक युग (600 ई. पू. से 200 ई. पू.) - तेलुगु भाषा के लिए यह समय प्रारंभिक काल है। तेलुगु की जड़ें प्राचीन द्रविड़ भाषाओं में हैं। इस कालावधि में यह अन्य द्रविड भाषाओं से स्वतंत्र हो रही थी। शब्द संरचना और मौखिक परंपराओं में तेलुगु के संकेत पाए जाते हैं। ब्राह्मी लिपि में कुछ अभिलेख (जैसे सातवाहन युग) में तेलुगु के प्रारंभिक शब्द मिले हैं। तेलुगु साहित्य मुख्य रूप से दरबारों से संबंधित शिलालेख और कविताओं में मिलता है।

पुरानी तेलुगु (200 ई. पू. से सन् 1000 ई.)- यह काल तेलुगु भाषा की पहचान और लिपिबद्धता का प्रारंभिक युग है। संस्कृत और प्राकृत का इस समय पर गहरा प्रभाव था। तेलुगु ने अपनी स्वतंत्र व्याकरणिक पहचान बनानी शुरू की। धार्मिक अनुष्ठानों, शिलालेखों और राजकीय घोषणाओं में इसका प्रयोग बढ़ा।

मध्य युग 1000 ई. से 1600 ई. को तेलुगु साहित्य और काव्य के उत्कर्ष का युग माना जाता है। नन्नय भट्टारक (11वीं सदी), ने महाभारत का अनुवाद तेलुगु में कवित्रयम

(नन्नय, तिक्कन, एर्राप्रगडा) ने किया और तेलुगु को एक साहित्यिक भाषा के रूप में स्थापित किया। 11 वीं शताब्दी के कवि "नन्नय्या" है, जिन्हें "आदि कवि" के रूप में जाना जाता है। उन्होंने संस्कृत महाभारत का तेलुगु में अनुवाद शुरू किया, जिसे आंध्र महाभारतम" कहा जाता है। तेलुगु में संस्कृत के शब्दों और शैलियों का व्यापक समावेश हुआ। तेलुगु पर इस अवस्था में संस्कृत और प्राकृत का प्रभाव पड़ा। तेलुगु ने अपनी स्वतंत्र व्याकरणिक पहचान बनानी शुरू की। राजाओं के दरबार में तेलुगु को राजभाषा का दर्जा मिलने लगा। काव्य, नाटक और शास्त्रीय साहित्य का व्यापक विकास हुआ। दरबार से जुड़कर और दरबार से अलग रहकर साहित्य लिखा जाता था।

आधुनिक युग (1600ई. से अब तक)- भक्ति आंदोलन के प्रभाव से तेलुगु पद्य और कीर्तन की परंपरा विकसित हुई। त्यागराजु, अन्नमाचार्य, रामदासु, वीर ब्रह्मम् जैसे संत कवियों ने संगीत और भक्ति को एक साथ जोड़कर लोकभाषा में रचनाएँ कीं। शतकम,यक्षगान,द्विपदम आदि तेलुगु साहित्य की लोकप्रिय विधाएं हैं। मुसलमान और यूरोपीय प्रभाव भी भाषा में दिखने लगा। इस युग में तेलुगु भाषा ने और सरल रूप लिया तथा आधुनिक व्याकरण और शैली का विकास हुआ। 19वीं सदी में ईसाई मिशनरियों ने पहली बार तेलुगु को मुद्रित रूप में प्रस्तुत किया। स्वतंत्रता संग्राम और सामाजिक सुधार आंदोलनों ने भाषा को जनचेतना से जोड़ा। कंदुकूरी वीरेसलिंगम ने सामाजिक सुधार और आधुनिक लेखन की नींव रखी। गिडुगु वेंकट राममूर्ति तेलुगु भाषा और साहित्य के भाषाशास्त्री और समाज सुधारक थे। उन्हें 'व्यवहृत भाषा आंदोलन' के लिए जाना जाता है, जिसने तेलुगु भाषा की अभिव्यक्ति और शिक्षण की दिशा ही बदल दी। इनकी स्मृति में आंध्र और तेलंगाना सरकार प्रत्यक वर्ष अगस्त 29 को तेलुगु भाषा दिवस के रूप में मनाती है। उन्हें "आधुनिक तेलुगु भाषा का जनक" कहा जाता है। तेलुगु आंध्र प्रदेश और तेलंगाना राज्यों की राजभाषा है। 20वीं सदी में तेलुगु फिल्में, गद्य साहित्य और पत्रकारिता ने इसे और लोकप्रिय बनाया। इन राज्यों के अतिरिक्त तमिलनाडु, छत्तीसगढ़, ओड़ीशा, तमिलनाडु, कर्नाटक में भी तेलुगु भाषा-भाषी है। इसके अतिरिक्त अमेरिका,लंदन,मलेशिया, अरब जैसे देशों में प्रवासी तेलुगु भाषी हैं।

मानक तेलुगु का विकास:

आंध्र प्रदेश की स्थापना (1956) के बाद, मानक तेलुगु को तय करने की प्रक्रिया तेज हुई। तेलुगु भाषा वर्तमान में आंध्र और तेलंगाना में राजभाषा के रूप में है। शिक्षा, प्रशासन, साहित्य, मीडिया आदि में व्यवहृत है। ब्रिटिश शासन के समय से प्रकाशन प्रक्रिया के

कारण लिपि में स्थायित्व आया। दोनों तेलुगु राज्यों में अनेक बोलियां हैं, जिससे कि मानक तेलुगु में गुंटूर, कडपा, नेल्लोर की तेलुगु को मानक रूप में माना गया है। पाठ्यपुस्तकों, समाचार-पत्रों और सरकारी दस्तावेज़ों में यही गद्य मानक रूप में प्रयोग होता है। लेकिन लोक संस्कृति को अक्षुण्ण रखने के लिए क्षेत्रीय बोलियों का पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से प्रचार किया जा रहा है तेलुगु यूनीकोड समर्थित लिपि है, जिससे डिजिटल माध्यम में प्रयोग सरल हुआ।

तेलुगु अकादमी (स्थापित 1968) को यह ज़िम्मेदारी दी गई कि वह एकरूप शब्दावली, व्याकरण, पाठ्यपुस्तकें,शब्द कोश बनाए। व्याकरण के क्षेत्र में पिंगली सूरन्न और अप्पा कवि की रचनाएँ मानक मानी जाती हैं। ऑनलाइन शिक्षा,सरकारी वेबसाइट, समाचार चैनल, फिल्म सबटाइटल्स, औपचारिक अनुवाद में भी तेलुगु का प्रयोग बढ़ रहा है। सोशल मीडिया और यूट्यूब जैसे माध्यमों पर क्षेत्रीय बोलियों का प्रभाव बढ़ा है, लेकिन शैक्षिक और प्रशासनिक स्तर पर अब भी मानक तेलुगु ही प्रमुख है।

तेलुगु उप-बोलियाँ

आंध्र प्रदेश और तेलंगाना को मिलाकर तेलुगु भाषा में कुल चार बोलियाँ मिलती हैं। तटीय आंध्र में विजयवाडा, गुंटूर, जिले के क्षेत्र आते हैं। उच्चारण में साफ़गोई और स्पष्टता मानक तेलुगु से बहुत मिलता-जुलता रूप कई विद्वानों और लेखकों ने यहीं की बोली को अपनाया। पूर्व और पश्चिम गोदावरी जिले में बोली जानेवाली तेलुगु बोलियों को क्षेत्र की अन्य बोलियों के रूप में जाना जाता है। उत्तर तटीय के अंतर्गत विशाखापट्टणम, श्रीकाकुलम क्षेत्र हैं। रायलसीमा क्षेत्र में कडपा, कर्नूल, चित्तूर, अनंतपुर आते हैं। इस क्षेत्र की तेलुगु में कन्नड और तमिल शब्द भरपूर मात्रा में मिलते हैं। यह बोली भक्ति साहित्य में मिलती है।

तेलंगाना राज्य क्षेत्र में हैदराबाद, करीमनगर, वरंगल, निजामाबाद आदि आते हैं। इसमें उर्दू के शब्द अधिक मिलते हैं। निजामाबाद और अदिलाबाद महाराष्ट्र से जुड़े होने के कारण कुछ मराठी के शब्द भी देखने को मिलते हैं। लोक प्रचलित शब्द का प्रयोग अधिक होता है। तेलंगाना की विशिष्ट संस्कृति को विकसित करने के लिए मानक तेलुगु के साथ तेलंगाना की बोली उप-बोलियों का प्रचार किया जा रहा है। फिल्मों में भी अब पूर्ण रूप से इस क्षेत्र की तेलंगाना बोली के संवाद प्रचुर मात्रा में मिल रहे हैं।

मुख्य रूप से प्राथमिक शिक्षा में छात्रों को मातृभाषा के प्रति प्रेम जागने की आवश्यकता है। कक्षाओं में तेलुगु भाषा और तेलुगु प्रांत के त्यौहारों से जुड़े कार्यक्रमों का आयोजन करते हुए, उन्हें तेलुगु भाषा से जोड़ने की कोशिश करनी चाहिए। भाषा से दूर होने का अर्थ है, अपनी संस्कृति से दूर जाना। इसलिए सांस्कृतिक, साहित्यिक और अन्य सृजनात्मक कार्यों के आयोजन द्वारा तेलुगु भाषा का विकास किया जा सकता है।

तकनीकी युग और वैज्ञानिक विषयों के प्रति रुझान के कारण भाषाओं का विकास रुक सा गया है। लोग मातृभाषा या उससे जुड़े किसी भी प्रक्रिया से खुद को दूर रख रहे हैं। ऐसे में भाषाओं का विकास अवरुद्ध हो जाता है। कहीं ना कहीं नई पीढ़ी पीढ़ी तेलुगु से दूर जा रही है। यह समस्या केवल तेलुगू की ही,नहीं भारत की सभी क्षेत्रीय भाषाओं की है।

जब तक भाषा जीवंत है तब तक उस देश का सांस्कृतिक, सामाजिक आर्थिक विकास निश्चित है। क्योंकि भाषा नहीं होगी तो अभिव्यक्त करने के लिए और ज्ञान प्राप्त करने का साधन भी नहीं रहेगा।

भाषा और संस्कृति एक दूसरे पर आधारित है। भाषा जीवंत रहने पर उस भाषा से संबधित संस्कृति भी जीवंत रहेगी। भाषा को बचाकर रखने का जितना दायित्व सरकार का है, उतना ही दायित्व उस भाषा से जुडे प्रत्येक व्यक्ति का भी है। आज कल सोशल मीडिया में जैसे कि ट्विटर आदि में प्रमुख व्यक्तित्व तेलुगु भाषा में ट्वीट कर रहे हैं। यह भाषा के विकास में एक आशावह पढ़ाव है। दैनिक जीवन में अधिक से अधिक मातृ भाषा का प्रयोग करने पर भाषा को जीवित रख सकते है।

हमें कभी नहीं भूलना है कि भाषा के संरक्षण का अर्थ हमारी संस्कृति की रक्षा करना है।

पी विवेक सुधा

पंजाबी भाषा की उत्पति एवं विकास

पंजाबी भाषा हिन्द-आर्य भाषा है। यह भारत के 22 आधिकारिक भाषाओं में से एक है और दुनिया भर में लगभग 130 मिलियन लोगों द्वारा बोली जाती है और यह दुनिया की दसवीं सबसे अधिक बोली जाने वाला भाषा है। केनडा में यह तीसरी सबसे अधिक बोले जाने वाली भाषा है। इस भाषा का उपयोग सिख धार्मिक ग्रंथों में भी किया जाता रहा है विशेष रूप से गुरु ग्रंथ साहिब में और इसे गुरुमुखी लिपि में लिखा गया हैं।

पंजाबी भाषा की उत्पति

पंजाबी एक इंडो-आर्यन भाषा है जिसकी जड़ें इंडो-यूरोपीय परिवार में हैं। यह इंडो-ईरानी भाषाओं, विशेष रूप से प्रोटो-इंडो-ईरानी शाखा से उभरी और आगे चलकर प्रोटो-इंडो-आर्यन नामक भाषा में विकसित हुई। यह भाषा पंजाब क्षेत्र में बोली जाती है जो अब भारत और पाकिस्तान के बीच विभाजित है और दुनिया भर में पंजाबी प्रवासी समुदायों द्वारा भी बोली जाती है।

प्राचीन उत्पत्ति: पंजाबी भाषा की उत्पत्ति दक्षिण एशिया की प्राचीन प्राकृत भाषाओं से जुड़ी है, जो लगभग 600 ईसा पूर्व में विकसित हुई थी। समय के साथ, ये प्राकृत भाषाएँ अपभ्रंश में विकसित हुईं, जो एक पुल भाषा थी जिसने अंततः 7वीं10-वीं शताब्दी ईस्वी के आसपास पंजाबी को जन्म दिया। पंजाबी संस्कृत और फ़ारसी दोनों से प्रभावित रही है, विशेष रूप से पंजाब क्षेत्र में फ़ारसी शासन के दौरान।

"पंजाब" नाम अपने आप में एक फ़ारसी शब्द है जिसका अर्थ है "पाँच जल" (पंज का अर्थ है पाँच, और आब का अर्थ है पानी), जो क्षेत्र की पाँच नदियों (सतलज, रावी, व्यास, झेलम, चिनाब) को संदर्भित करता है।

गुरुमुखी लिपि का नामकरण

पंजाबी भाषा के लिए गुरुमुखी लिपि का प्रयोग किया जाता है। गुरुमुखी लिपि के नामकरण और उत्पत्ति के बारे में लोकप्रिय मान्यता यह है कि यह गुरुओं के पवित्र मुखों से निकली है। इसी कारण इसका नाम गुरुमुखी रखा गया। गुरु ग्रंथ साहिब को गुरुमुखी लिपि में लिखित रूप में दिया गया था। गुरुओं ने उस समय प्रचलित लिपि में सुधार करके उसे गुरबाणी लेखन के लिए उपयुक्त बनाने का महान कार्य किया। इसी कारण इसका नाम गुरुमुखी लिपि रखा गया। पाकिस्तान में भी बोली जाती है और वहाँ

इसे शाहमुखी लिपि में लिखा जाता है जो फारसी-अरबी लिपि से निर्मित है। पंजाबी एक टोनल भाषा है, जिसका अर्थ है कि किसी शब्द का टोन उसके अर्थ को बदल सकता है। उदाहरण:"हत्थ" (पंजाबी) = "हाथ" (हिंदी), "कन्न" (पंजाबी) = "कान" (हिंदी), "सत्त" (पंजाबी) = "सात" (हिंदी)। यह एक शब्दांशीय भाषा है, जिसमें कई विशिष्ट ध्वनियाँ और व्याकरणिक संरचनाएं हैं। पंजाबी भाषा में 41 व्यंजन, 9 स्वर चिह्न और 2 अनुनासिक ध्वनियाँ हैं। यह भाषा भारत और पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में व्यापक रूप से बोली जाती है और सिख धर्म के लिए भी महत्वपूर्ण है।

पंजाबी का विकास

पंजाबी की शुरुआत हम 1000 ई. से मानते हैं। लेकिन भाषाएँ उतनी तेज़ी से नहीं बदलतीं जितनी तेज़ी से राज्य बदलते हैं। वाणी को एक रूप से दूसरे रूप में बदलने में सदियाँ लग जाती हैं। 1000 ई से पंजाबी की शुरुआत का मतलब यह नहीं है कि इस अवधि में भाषा ने तुरंत अपना रूप ले लिया। कुछ सदियों पहले भाषा में पंजाबी विशेषताएं दिखाई देने लगी होंगी और 1000 ईस्वी तक भाषा का रूप पंजाबी के करीब और पुरानी भाषा से अधिक विशिष्ट हो गया होगा। पंजाबी की शुरुआत ग्यारहवीं शताब्दी से मानते हुए पंजाबी के विकास के चार चरण माने जा सकते हैं:

आरंभिक चरण -1400 ई. तक

इस काल में भाषा अभी भी आदिम थी। और आज की तुलना में अधिक अनौपचारिक थी। कारक प्रत्यय ,संयोजकों एवं सहायक क्रिया का प्रयोग किया जाता था लेकिन बहुत सीमित तरीके से।

शेख फरीद की वाणी ऐसे ही काल की रचना है। परंतु श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पाए जाने वाले इस श्लोक का स्वरूप इस काल की मूल भाषा से कुछ भिन्न है।। गुरु ग्रंथ साहिब को संकलित करते समय, गुरु अर्जन देव जी ने फरीद वाणी को समकालीन व्याकरण के अनुसार ढालकर दर्ज किया होगा। परन्तु यह व्याकरण पुराने (फरीद-काली) व्याकरण से बहुत भिन्न नहीं था।

विकास अवस्था -1400 ई. से 1700 ई. तक

इस अवस्था को विकास अवस्था कहा जाता है क्योंकि इस काल में भाषा का विकास होता रहा। इसे गुरु-काल भी कहा जा सकता है।

इस काल की भाषा के नमूने सिख गुरुओं की कविताओं में, भाई गुरदास की

कविताओं में, शाह हुसैन, सुल्तान बाहु जैसे सूफी फकीरों की रचनाओं में ,दामोदर और पील जैसे कहानीकारों की रचनाओं में पाए जाते हैं। लेकिन गुरुओं और भाई गुरदास की वाणी सूफियों और कथाकारों की वाणी से बहुत भिन्न है। इसके दो कारण हैं पहला कविता की भाषा भारतीय साहित्यिक परंपराओं के अनुरूप है। इस भाषा का स्वरूप उस समय की बोलचाल की भाषा से कुछ भिन्न रहा होगा। दूसरा वाणी की भाषा तो अपने मूल रूप में हम तक पहुँच गई, परन्तु कथाकारों और सूफियों की रचनाओं का मूल रूप जीवित नहीं रह सका।

परिपक्वता की अवस्था -1700 से 1850 ई. तक

इस काल की भाषा के उदाहरण अधिक उपाख्यानात्मक काव्य में मिलते हैं। वारश शाह, हाशम, अहमद शाह, शाह मुहम्मद प्रख्यात लघुकथा कवि हैं। 'नजाबत का काल' और बुल्ले शाह का सूफी-कलाम भी इसी काल का है। यह पंजाबी गद्य में 'प्रेम मार्ग' ग्रंथ है। भाई मणि सिंह का गद्य भी इसी काल का है।इस काल में भाषा का स्वरूप स्थिर हो गया है। लिखित भाषा में कारक प्रत्यय एवं क्रिया रूप के साथ सहायक क्रियाओं का प्रयोग होने लगा है। संज्ञा के रूप आज भी वैसे ही हैं। बहुवचन बनाने के नियम भी आधुनिक भाषाओं की तरह ही हैं। संयुक्त, व्यंजन अत्यंत दुर्लभ हैं। इस काल की पंजाबी में आज की पंजाबी की लगभग सभी विशेषताएँ थीं। परंतु भाषा में साहित्यिक संयम नहीं आया था। गद्य का प्रयोग बहुत कम था।

साहित्यिक प्रभाव की अवधि -1850 से वर्तमान तक

यह काल अंग्रेजी साम्राज्य के आगमन के साथ प्रारम्भ हुआ। अब पंजाबी का प्रयोग बोलचाल के अलावा किसी धार्मिक काव्य या उपाख्यान आदि लिखने के लिए किया जाता था। कविता साहित्य का क्षेत्र अत्यंत व्यापक हो गया। पंजाबी अब विद्वानों की भाषा के रूप में उपयोग की जाती है; इस सहज विकास के साथ-साथ अब इसका व्यवस्थित विकास भी होने लगा।

अब तक प्रत्येक कवि अपनी-अपनी बोली में काव्य रचना करता था। इस काल में मानक पंजाबी को साहित्य का माध्यम बनाने के प्रयास एवं पंजाबी के स्वरूप को स्थिर करने का प्रयास किया गया।लेखकों, कवियों और पाठकों की संख्या में भारी वृद्धि हुई। अतः साहित्यिक पंजाबी का महत्व बोलचाल की भाषा से अधिक बढ़ गया। जैसे-जैसे साहित्य का क्षेत्र व्यापक होता गया, नई शब्दावली का निर्माण हुआ और कई लोकप्रिय शब्दों को अपनाया गया।

मानक पंजाबी का विकास:

पिछले कुछ वर्षों से पंजाबी उच्च शिक्षा का माध्यम बन गई है और आधिकारिक भाषा भी बन गई है। इससे भाषा का विकास बढ़ा है और साहित्यिक भाषा तथा बोलचाल की भाषा में अंतर बढ़ता जा रहा है। पंजाबी का मानक रूप, मुख्य रूप से माही बोली पर आधारित है, जो कई शताब्दियों में उभरा और साहित्य और आधिकारिक संचार में प्रयोग किया जाने वाला रूप है।

पंजाबी उप-बोलियाँ

पंजाबी भाषा में माझी, दोआबी, मलवई, मुल्तानी, पोठोहारी, पुआधी आदि प्रसिद्ध बोलियाँ हैं। 1947 में देश के विभाजन के दौरान पंजाबी बोलने वालों का एक बड़ा हिस्सा पाकिस्तान चला गया और अब पोठोहारी, मुल्तानी बोलियाँ पाकिस्तान में बोली जाती हैं। यह बोलियाँ पंजाबी की विविधता को बढ़ाती हैं और पंजाब की विरासत को समृद्ध करती हैं।

माझी: माझी अमृतसर, गुरदासपुर, बटाला, तरनतारन, ब्यास, पठानकोट आदि क्षेत्रों में बोली जाती है। यह क्षेत्र माझा क्षेत्र के नाम से लोकप्रिय है। यहां रहने वाले लोगों को 'मजहिल' कहा जाता है।

दोआबी: दोआबी सतलुज और ब्यास नदियों की सीमा से लगे क्षेत्रों जैसे जालंधर, कपूरथला, नकोदर, नवाँशहर, फगवाड़ा, होशियारपुर, बंगा, फिल्लौर और शहीद भगत सिंह नगर में बोली जाती है। इस क्षेत्र को दोआबा कहा जाता है और यहाँ के लोगों को दोआबी कहा जाता है।

मलवई: मलवई सतलुज के ऊपर बठिंडा, मुक्तसर, मनसा, बरनाला, फिरोजपुर, फरीदकोट, मोगा, लुधियाना, संगरूर, पटियाला, फतेहगढ़ साहिब और सिरसा (हरियाणा) में बोली जाती है। इसका दायरा बहुत व्यापक है। यहां के लोगों को मलवाई कहा जाता है और यह क्षेत्र मालवा के नाम से प्रसिद्ध है। वे "वांची" के स्थान पर "अप", "करा" के स्थान पर "करद जा" आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं।

पुआधी: यह बोली रूपनगर, मोहाली और सिरसा जिलों, अंबाला (हरियाणा) जिलों, पटियाला पूर्व और फतेहगढ़ साहिब के कुछ हिस्सों के ग्रामीण इलाकों में बोली जाती है। यह पुआध क्षेत्र है और यहां रहने वाले लोगों को पुआधर या पुआधी कहा जाता है। इस क्षेत्र में हमेशा "हमें" के स्थान पर "हम" शब्द का प्रयोग किया जाता है।

पोठोहारी: पोठोहारी पाकिस्तान में झेलम, कैमलपुर और रावलपिंडी के पहाड़ी इलाकों में बोली जाती है। इस क्षेत्र में नु दी था की का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, "अन" के स्थान पर "हम" शब्द का प्रयोग किया जाता है।

मुल्तानी: मुल्तानी बोली पाकिस्तान के मुल्तान, बहावलपुर, झंग और डेरा गाजी खान, मुजफ्फरगढ़ में बोली जाती है। इस बोली में "मुंडा", "टोडा" आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

पंजाबी भाषा के मुख्य साहित्यकार

गुरु नानक साहिब जी ने बाणी के लिए पंजाबी भाषा को चुना। गुरु नानक से पहले बाबा फरीद ने भी बाणी की रचना की थी। नाथ, जोगी, बुल्ले शाह, वारिस शाह, शाह हुसैन, कादरयार, शाह मोहम्मद, दामोदर आदि कवियों ने पंजाबी को अपनी कविता का माध्यम बनाया। प्रोफ़ेसर पूरन सिंह अंग्रेजी के विद्वान थे लेकिन उन्होंने पंजाबी में खुली शायरी लिखकर इतिहास रच दिया। नानक सिंह, गुरदयाल सिंह, संत सिंह सेखों, करतार सिंह, कुलवंत सिंह विर्क, अजीत सिंह विर्क, दलीप कौर टीवाना, अमृता प्रीतम, सुरजीत पातर, शिव कुमार बटालवी, हरिभजन सिंह, डॉक्टर सुतिंदर सिंह नूर, डॉ. अमरजीत टांडा, सुखविंदर अमृत आदि लेखकों ने इस भाषा के कारण अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की है।

पंजाबी लोक गीत संपूर्ण पंजाबियत का प्रतिनिधित्व करते हैं। कहानियां, युद्ध, कथाएं, जंगनाम, कविताएं, महिये, टप्पे, सिठनी आदि पंजाबियत के अनमोल खजाने हैं। पंजाबी संगीत लगातार आगे बढ़ रहा है। लाल चंद यमला जट्ट, गुरदास मान, बब्बू मान, कुलदीप मानक, हंसराज हंस, सविंदर सरताज, आदि किसी परिचय के मोहताज नहीं हैं। यह पंजाबी संगीत की परिपक्वता है कि इसने हिंदी फिल्मी संगीत ही नहीं बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी अपनी अलग पहचान बनाई है।

रेणु बाला

कश्मीरी भाषा: एक सांस्कृतिक और भाषाई धरोहर

भारत की भाषाई विविधता में कश्मीरी भाषा एक अनमोल रत्न की तरह है। इसे स्थानीय रूप से "कॉशुर" कहा जाता है और यह भाषा अपने आप में कई सभ्यताओं, संस्कृतियों और ऐतिहासिक प्रभावों की गवाह रही है। इसकी उत्पत्ति, विकास, लिपियाँ, साहित्य और इतिहासकारों का योगदान – ये सभी पहलू कश्मीरी भाषा को भारतीय उपमहाद्वीप की अन्य भाषाओं से विशिष्ट बनाते हैं। कश्मीरी भाषा की उत्पत्ति द्रविड़ और इंडो-आर्यन भाषाओं के सम्मिलन से मानी जाती है। यह भाषा दार्दिक भाषा परिवार की एक प्रमुख शाखा है, जो मुख्यतः कश्मीर घाटी में विकसित हुई। इसकी संरचना में संस्कृत, फारसी, पश्तो और तुर्की भाषाओं का भी प्रभाव देखा जाता है। इस भाषा का सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आधार ऋषि कश्यप से जुड़ा हुआ है। वैदिक काल के महर्षि कश्यप सप्तर्षियों में एक थे और उन्हें कश्मीर भूमि का संस्थापक माना जाता है।

"नीलमत पुराण" में उल्लेख है कि कश्मीर पहले सतीसर नामक एक विशाल झील थी जिसे ऋषि कश्यप ने सुखाकर वहां मानव बसावट की नींव रखी। इस कारण कश्मीर को प्राचीन काल में "कश्यपमीर" यानी कश्यप की भूमि कहा जाता था। यद्यपि ऋषि कश्यप ने सीधे कश्मीरी भाषा पर कोई ग्रंथ नहीं लिखा, परंतु उनके द्वारा बसाई गई सांस्कृतिक नींव पर ही आगे चलकर कश्मीरी भाषा विकसित हुई। ऋषि कश्यप ने कश्मीर में वैदिक संस्कृति की स्थापना की, जिसके परिणामस्वरूप संस्कृत भाषा और उसके धार्मिक ग्रंथों का प्रचार-प्रसार हुआ। संस्कृत की यह नींव आगे चलकर कश्मीरी भाषा की संरचना में जुड़ती चली गई। कश्मीर में स्थापित मंदिर, आश्रम और वैदिक परंपराएँ भाषा के माध्यम से ही जनमानस में समाहित हुईं। ऋषि कश्यप द्वारा स्थापित सामाजिक-सांस्कृतिक ढाँचा, जैसे कि धर्म, शिक्षा और पठन-पाठन की परंपराएं, कश्मीरी भाषा के शुरुआती विकास में एक मजबूत आधार बन गईं। इस प्रकार, ऋषि कश्यप का योगदान केवल भूमि तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उन्होंने उस सांस्कृतिक आधार की स्थापना की, जिस पर कश्मीरी भाषा और साहित्य की नींव पड़ी।

शारदा लिपि और लिपियों का विकासः कश्मीरी भाषा को प्राचीन काल में शारदा

लिपि में लिखा जाता था। यह लिपि लगभग 8वीं शताब्दी से लेकर 12वीं शताब्दी तक कश्मीर और आसपास के क्षेत्रों में प्रयोग की जाती थी। यह ब्राह्मी लिपि की एक शाखा थी और संस्कृत तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों के लेखन में प्रयुक्त होती थी।समय के साथ लिपियों में परिवर्तन आया और इस्लामी प्रभाव के चलते फारसी-अरबी आधारित नस्तालिक लिपि का प्रयोग बढ़ गया। वर्तमान समय में कश्मीरी भाषा मुख्यतः दो लिपियों – देवनागरी और नस्तालिक – में लिखी जाती है। प्रवासी समुदाय द्वारा रोमन लिपि का भी प्रयोग होता है।

कश्मीरी भाषा का ऐतिहासिक विकास कश्मीरी भाषा का इतिहास हजारों वर्षों पुराना है। 8वीं से 10वीं शताब्दी के बीच कश्मीर एक प्रमुख बौद्ध और सांस्कृतिक केंद्र था, जिससे भाषा का साहित्यिक स्वरूप तेजी से विकसित हुआ। 14वीं शताब्दी में शाह मीर वंश की स्थापना के साथ इस्लाम का प्रभाव बढ़ा और फारसी को राजकीय भाषा के रूप में अपनाया गया। फारसी का प्रभाव कश्मीरी भाषा पर गहराई से पड़ा और इसमें कई फारसी शब्द सम्मिलित हो गए।

1819 में कश्मीर सिख शासन के अधीन आया और 1846 में अमृतसर संधि के बाद डोगरा शासन की स्थापना हुई। इस समय में उर्दू का प्रभाव बढ़ा और यह प्रशासनिक भाषा बनी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1950 में भारतीय संविधान लागू हुआ और 2003 में कश्मीरी भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित किया गया। 2020 में केंद्र सरकार द्वारा पारित जम्मू-कश्मीर राजकीय भाषा अधिनियम के तहत कश्मीरी को आधिकारिक भाषा का दर्जा मिला। 2008 में जम्मू-कश्मीर राज्य बोर्ड ऑफ स्कूल एजुकेशन ने कश्मीरी भाषा को माध्यमिक कक्षाओं के पाठ्यक्रम में शामिल किया। साथ ही, 2010 में कश्मीरी भाषा को यूनेस्को द्वारा ''निश्चित रूप से संकटग्रस्त" श्रेणी में सूचीबद्ध किया गया, जिससे इसके संरक्षण की आवश्यकता पर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ध्यान गया।

कश्मीरी भाषा की विशेषताएँः कश्मीरी भाषा की सबसे बड़ी विशेषता इसकी ध्वन्यात्मक विविधता है। इसमें स्वर और व्यंजन उच्चारण की एक विशिष्ट शैली है। यह भारत में दार्दिक भाषा परिवार की एकमात्र भाषा है जिसे आधिकारिक मान्यता प्राप्त है। इसमें संस्कृत, फारसी और तुर्की शब्दों का सम्मिश्रण देखने को मिलता है। कश्मीरी कविता और लोकगीत इस भाषा की सांस्कृतिक समृद्धि को दर्शाते हैं। जैसे "सांझ",

"वाद", "रस्म", आदि शब्दों का प्रयोग इसकी भावनात्मक अभिव्यक्ति को दर्शाता है। इसकी व्याकरण प्रणाली भी हिंदी या उर्दू से भिन्न है, जिसमें दोहरे संज्ञा रूप, विशेष सर्वनाम और स्थानीय ध्वनियों का प्रयोग होता है।

कश्मीरी भाषा की वर्णमाला देवनागरी लिपि में कश्मीरी भाषा की ध्वनियों को अभिव्यक्त करने के लिए कुछ अतिरिक्त वर्णों का प्रयोग किया जाता है, जैसे इ', ऊ', ऐ', औ', क़, ख़, ग़, ज़, फ़, ड़, ढ़ आदि। वहीं नस्तालिक लिपि में भी फारसी-अरबी मूल के अक्षरों के साथ विशेष ध्वनियाँ दर्शाने वाले वर्ण होते हैं, जैसे پ (पे), ٹ (टे), چ (चे), ژ (झे) आदि।

कश्मीरी भाषा के इतिहासकारों का योगदानः कई विद्वानों ने कश्मीरी भाषा पर गहन शोध किया है। विदेशी विद्वानों में प्रमुख नाम हैं: जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन (1851–1941): इन्होंने "लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया" (1903–1928) में कश्मीरी को स्वतंत्र भाषा के रूप में वर्गीकृत किया। आर्णेस्ट ट्रम्प: इन्होंने 19वीं सदी में कश्मीरी व्याकरण पर कार्य किया।

भारतीय इतिहासकारों और भाषाविदों का योगदान: पंडित ईश्वर कौल (19वीं सदी) ने कश्मीरी व्याकरण की पहली पुस्तक लिखी। डॉ. केशव मलिक ने आधुनिक कश्मीरी साहित्य पर कार्य किया। ज्योत्स्ना कालरा ने कश्मीरी लोक साहित्य और महिला अभिव्यक्ति पर केंद्रित अध्ययन किया। डॉ. बी.एन. पारिमू ने ललद्यद और नुंद ऋषि के साहित्य का विश्लेषण किया। प्रो. रजनी कौल ने कश्मीरी गद्य-पद्य पर आलोचनात्मक लेखन किया। डॉ. शांतिबाला कुलकर्णी ने शारदा, देवनागरी और नस्तालिक लिपियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। प्रो. के.एल. चौधरी ने विस्थापित कश्मीरी पंडितों की साहित्यिक धरोहर के संरक्षण में योगदान दिया।

कश्मीरी साहित्य का योगदान कश्मीरी भाषा में लिखा साहित्य अत्यंत समृद्ध है। 14वीं शताब्दी की संत कवयित्री ललद्यद की वाख कविताएँ आज भी प्रसिद्ध हैं। 16वीं शताब्दी की हब्बा खातून की प्रेमपरक कविताएँ और 20वीं शताब्दी में महजूर, नादिम, अज़ाद जैसे कवियों की रचनाएँ इस भाषा को साहित्यिक ऊँचाइयों तक ले गईं। कश्मीरी भाषा की साहित्यिक अकादमियाँ और संस्थान भी इसके संरक्षण में योगदान दे रहे हैं।

जम्मू और श्रीनगर में स्थापित किए गए कश्मीरी विभाग तथा सांस्कृतिक अकादमियाँ इसके संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

कश्मीरी भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि कश्मीर की आत्मा, संस्कृति और परंपरा की जीवंत अभिव्यक्ति है। इसकी उत्पत्ति, लिपियाँ, साहित्य, और इतिहासकारों के योगदान इस बात का प्रमाण हैं कि यह भाषा भारतीय भाषाई विरासत की अमूल्य धरोहर है। आज जब भाषाएँ लुप्त होने के कगार पर हैं, कश्मीरी भाषा के संरक्षण और संवर्धन के लिए गंभीर प्रयासों की आवश्यकता है ताकि आने वाली पीढ़ियाँ इसकी सांस्कृतिक समृद्धि को समझ सकें और इसका गौरव बनाए रख सकें।

अंकित महाजन

मराठी भाषा का इतिहास एवं विकास

भारत विविध भाषाओं का देश है, जहाँ हर राज्य की अपनी विशिष्ट भाषा और संस्कृति है। इन भाषाओं में **मराठी** एक ऐसी भाषा है जो केवल संप्रेषण का माध्यम ही नहीं, बल्कि एक समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर भी है। यह महाराष्ट्र राज्य की राजभाषा है और इसकी उपस्थिति देश के कई भागों में देखने को मिलती है। मराठी न केवल ऐतिहासिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि साहित्यिक, सामाजिक और भाषिक रूप से भी अत्यंत समृद्ध है। मराठी भाषा सरल, मधुर और स्पष्ट उच्चारण वाली होने के कारण विशेष पहचान रखती है। यह देवनागरी लिपि में लिखी जाती है, जिसके कारण इसका लेखन सुव्यवस्थित और शिक्षण में सरल माना जाता है। मराठी में संस्कृत, फ़ारसी, उर्दू और अंग्रेज़ी शब्दों का सुंदर समावेश मिलता है, जो इसकी अभिव्यक्ति को और अधिक समृद्ध बनाता है। इस भाषा की काव्य परंपरा भी अत्यंत विविधतापूर्ण है, जिसमें ओवी, अभंग, भारूड, लावणी और तमाशा जैसी विधाएँ शामिल हैं, जो इसे लोकसंस्कृति से गहराई से जोड़ती हैं। व्याकरण की दृष्टि से भी यह भाषा समृद्ध है, क्योंकि इसमें 41 व्याकरणिक संरचनाएँ पाई जाती हैं। मराठी भाषा भाव, विचार और संवेदना को सहज और प्रभावी ढंग से व्यक्त करने की क्षमता रखती है।

मराठी भाषा की उत्पत्ति

मराठी भाषा की उत्पत्ति **हिन्द-आर्य** भाषा परिवार की **प्राकृत शाखा** से मानी जाती है। यह शाखा **महाराष्ट्र प्राकृत** के माध्यम से विकसित होकर **अपभ्रंश** से गुजरते हुए 8वीं शताब्दी में **"मरहट्ठी"** और फिर **"मराठी"** बनी। मराठी की जड़ें वैदिक संस्कृत से जुड़ी हुई हैं, परंतु इसका स्वरूप अधिक सरल और जनसामान्य के लिए सुगम है। 11वीं शताब्दी में लिखे गए शिलालेख मराठी भाषा के सबसे प्राचीन लिखित प्रमाण हैं।

प्रसिद्ध भाषाविद् डॉ. एस. एम. कटे के अनुसार, मराठी भाषा का उद्भव 1000 ईस्वी के आसपास हुआ, तथापि इसकी मौखिक परंपरा उससे कई शताब्दियों पहले से अस्तित्व में थी। भाषा के साथ-साथ लिपि का भी विकास हुआ और मोडी से देवनागरी लिपि में इसका अंतरण हुआ।

मराठी भाषा की लिपि

मराठी भाषा को मूलतः **मोडी लिपि** में लिखा जाता था, जो प्रशासकीय कार्यों के लिए सुविधाजनक थी। मोडी लिपि एक त्वरित लेखन पद्धति थी, जिसका उपयोग पेशवाओं और मराठा प्रशासन में व्यापक रूप से होता था। परंतु आधुनिक काल में इसे **देवनागरी लिपि** में लिखा जाने लगा, जो अधिक सुव्यवस्थित और सुगम मानी जाती है।

देवनागरी लिपि में मराठी भाषा को पूर्ण रूप से मान्यता मिली और यही आज मराठी साहित्य, शिक्षा, प्रशासन और संचार का मुख्य माध्यम है।

मराठी भाषा का ऐतिहासिक विकास

मराठी भाषा के विकास को पाँच प्रमुख चरणों में बाँटा जा सकता है:

1. प्रारंभिक चरण (8वीं से 13वीं सदी)

इस काल में मराठी में शिलालेख, धार्मिक पद, अभंग और लोकगीतों का उद्भव हुआ। संत नामदेव और ज्ञानेश्वर जैसे संतों ने मराठी को जनमानस की भाषा बनाया। ज्ञानेश्वरी (भगवद् गीता की मराठी टीका) मराठी साहित्य का अमूल्य ग्रंथ है।

2. भक्तिकाल (13वीं से 17वीं सदी)

यह युग संत तुकाराम, संत एकनाथ, चोखामेला, मुक्ताबाई आदि की रचनाओं से भरा हुआ है। उन्होंने समाज सुधार और ईश्वर भक्ति को जनभाषा में प्रस्तुत किया। यह काल मराठी भाषा को लोकमानस से जोड़ने वाला युग था।

3. मराठा शासनकाल (17वीं से 19वीं सदी)

छत्रपति शिवाजी महाराज ने मराठी को प्रशासनिक भाषा का दर्जा दिलाया। पेशवा काल में मोडी लिपि का उपयोग बढ़ा। प्रशासनिक दस्तावेज, न्यायिक निर्णय, सैन्य आदेश आदि मराठी में लिखे जाने लगे।

4. औपनिवेशिक काल (19वीं से 20वीं सदी)

ब्रिटिश शासन में मराठी साहित्य का आधुनिक रूप सामने आया। अख़बार, नाटक, कविता, कहानी आदि के माध्यम से मराठी ने आधुनिकता को अपनाया। बाल गंगाधर

तिलक, विष्णु शास्त्री चिपळूणकर, गोपाळ गणेश आगरकर जैसे लेखकों ने मराठी को नये विचारों से जोड़ा।

5. आधुनिक काल (20वीं सदी से वर्तमान तक)

इस काल में मराठी भाषा का प्रयोग शिक्षा, साहित्य, मीडिया, सिनेमा, इंटरनेट और प्रशासन के सभी क्षेत्रों में हुआ। मराठी फिल्मों, सीरियल्स और साहित्यिक संस्थाओं ने इसे सशक्त और लोकप्रिय बनाया।

मराठी भाषा की प्रमुख बोलियाँ

मराठी भाषा की विविधता उसकी बोलियों में स्पष्ट झलकती है। कुछ प्रमुख बोलियाँ इस प्रकार हैं:

बोली	क्षेत्र
वर्हाडी	विदर्भ क्षेत्र (अमरावती, अकोला, यवतमाल आदि)
कोंकणी मराठी	कोंकण क्षेत्र (रत्नागिरी, सिंधुदुर्ग)
दख्खनी मराठी	मराठवाड़ा, हैदराबाद और कर्नाटक के सीमांत क्षेत्र
अहिराणी	खानदेश क्षेत्र (धुले, जलगांव)
पश्चिमी मराठी	पुणे, सतारा, सांगली आदि

इन बोलियों में उच्चारण, शब्दों और व्याकरण में भिन्नता होते हुए भी मराठी की मूल आत्मा बनी रहती है।

प्रमुख मराठी साहित्यकार

मराठी भाषा के साहित्य की जड़ें गहरी हैं और इसकी शाखाएँ विविध विषयों तक फैली हुई हैं। यह साहित्य भक्तिकाल से लेकर आधुनिक युग तक सामाजिक, धार्मिक, हास्य, व्यंग्य, ऐतिहासिक और स्त्री विमर्श जैसे क्षेत्रों में व्यापक और सशक्त योगदान देता आया है। मराठी साहित्य ने कवि, उपन्यासकार, नाटककार, जीवनी लेखक, स्तंभकार और आलोचक जैसे विविध रूपों में अपनी गहरी छाप छोड़ी है।

मराठी साहित्य में कई ऐसे नाम हैं जिन्होंने अपनी लेखनी से इस भाषा को गरिमा दी:

• **संत ज्ञानेश्वर –** ज्ञानेश्वरी (गीता का मराठी रूपांतरण) (13वीं सदी)

संत ज्ञानेश्वर ने गीता का मराठी रूपांतरण 'ज्ञानेश्वरी' के माध्यम से न केवल धार्मिक ज्ञान को जन-जन तक पहुँचाया, बल्कि मराठी भाषा को भी एक सशक्त साहित्यिक आधार दिया।

• **संत तुकाराम –** अभंग रचनाएँ

संत तुकाराम के अभंग आज भी महाराष्ट्र की आत्मा माने जाते हैं। उन्होंने अपने भजनों के माध्यम से सामाजिक विषमताओं के विरुद्ध आवाज़ उठाई।

• **संत नामदेव –** भक्ति पदों के जनक

संत नामदेव ने अपने भक्ति पदों के माध्यम से न केवल मराठी साहित्य को समृद्ध किया, बल्कि उनके कई पद **गुरुग्रंथ साहिब** में भी संकलित किए गए, जिससे उनकी सार्वभौमिक स्वीकार्यता प्रमाणित होती है।

• **पु. ल. देशपांडे –** व्यंग्य, नाटक, संस्मरण

इनका नाम हास्य और व्यंग्य साहित्य में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाता है। उनकी रचनाएँ जैसे **"व्यक्ति आणि वल्ली"** आज भी मराठी पाठकों के दिलों में जीवित हैं। वे एक सर्वगुणसंपन्न व्यक्तित्व थे। लेखन, वक्तृत्व, नाटक, संगीत, कला, दिग्दर्शन इन सभी चीजों का इन्हें ज्ञान था।

• **वि. स. खांडेकर –** ज्ञानपीठ विजेता, 'ययाति' के लेखक

इन्होंने अपने उपन्यास 'ययाति' के माध्यम से पौराणिक पात्रों को आधुनिक दृष्टिकोण से देखा।

• **शिवाजी सावंत –** "मृत्युंजय", "छावा" जैसे ऐतिहासिक उपन्यास

शिवाजी सावंत ने ऐतिहासिक और चरित्रप्रधान उपन्यासों के माध्यम से साहित्य को नई दिशा दी – उनके प्रसिद्ध उपन्यास "मृत्युंजय" और "छावा" ने न केवल लोकप्रियता

पाई बल्कि युवाओं को इतिहास के प्रति जागरूक किया।

• **ग. दि. माडगूळकर, बा. एस. मर्दे, शंकर पाटील –** लोकसाहित्य, ग्रामीण कथाएँ

इन सभी साहित्यकारों ने ग्रामीण जीवन और लोक संस्कृति को अपने लेखन में जीवित किया।

• **सुधा मूर्ती, स्मिता गोंदालकर –** आधुनिक महिला लेखन

इन्होंने सामाजिक सरोकारों, नारी संवेदना और आधुनिक यथार्थ को अपने लेखन में स्थान दिया है।

संगीत, नाटक और सिनेमा में मराठी

मराठी भाषा की एक खास विशेषता यह है कि इसका साहित्य केवल पुस्तकों तक सीमित नहीं है। यह रंगमंच, लोकगीत, लावणी, तमाशा, नाटक और फिल्म के माध्यम से जीवित रहता है। "शाहीर", "भजन", "कीर्तन", "भारूड" जैसी विधाओं ने इसे जन-जन तक पहुँचाया। मराठी सिनेमा ने पिछले दो दशकों में जिस प्रकार की प्रगति की है, वह सराहनीय और प्रेरणादायक है। एक समय था जब यह केवल महाराष्ट्र तक सीमित था, परंतु आज यह राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर अपनी गूंज छोड़ रहा है। मराठी फिल्में केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि समाज का आईना बनकर उभरी हैं।

आज मराठी सिनेमा देशभर में अपनी पहचान बना चुका है। 'सैराट', 'नटरंग', 'फँड्री', 'काठी', 'हर्ष', 'मी शिवाजीराजे भोसले बोलतोय' जैसी फिल्में न केवल मराठी समाज को दर्शाती हैं, बल्कि भारतीय सिनेमा में भी विशिष्ट स्थान रखती हैं।

भारत विविध भाषाओं का देश है, जहाँ प्रत्येक भाषा की अपनी सांस्कृतिक और साहित्यिक विरासत है। ऐसी ही एक समृद्ध भाषा है **मराठी**, जिसे हाल ही में भारत सरकार द्वारा **"शास्त्रीय भाषा"** का दर्जा प्रदान किया गया है। यह केवल महाराष्ट्र ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारत के लिए एक ऐतिहासिक और गर्व का क्षण है। मराठी अब उन गिनी-चुनी भाषाओं में शामिल हो गई है, जिन्हें यह विशेष मान्यता मिली है।

मराठी भाषा भारत की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और साहित्यिक विरासत का अमूल्य

रत्न है। इसकी उपस्थिति केवल महाराष्ट्र तक सीमित नहीं, बल्कि राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर भी है। यह भाषा जहाँ एक ओर परंपराओं से जुड़ी है, वहीं दूसरी ओर आधुनिकता को भी सहज रूप से आत्मसात करती है। मराठी भाषा न केवल महाराष्ट्र की आत्मा है, बल्कि भारतीयता का जीवंत उदाहरण भी है। मराठी भाषा को "अभिजात भाषा" का दर्जा मिलना केवल एक सरकारी मान्यता नहीं है, बल्कि यह उस भाषा, उसकी संस्कृति, साहित्य और उसके वक्ताओं के **गौरव, परिश्रम और सृजनात्मकता** की ऐतिहासिक विजय है। यह दर्जा हमें न केवल गर्व का अनुभव कराता है, बल्कि यह भी याद दिलाता है कि हमारी भाषाएँ हमारी अस्मिता हैं, जिन्हें संजोना और आगे बढ़ाना हमारा कर्तव्य है।

अब समय है कि हम मराठी भाषा के इस गौरव को शिक्षा, साहित्य, मीडिया और संस्कृति के माध्यम से और भी उन्नत करें। यह उपलब्धि संपूर्ण भारत के लिए प्रेरणास्पद है।

मेघना अवचट

मलयालम भाषा और साहित्य की उत्पत्ति एवं विकास

दक्षिण भारत के एक छोटे से राज्य केरलम (केरल) की भाषा है- मलयालम। प्रचलित मान्यता के अनुसार भार्गव परशुराम ने क्षत्रिय निग्रह के उपरांत पृथ्वी कश्यप ऋषि को दान कर दी थी। दान दी गई भूमि में वे स्वयं नहीं रह सकते थे अतः उन्होंने समुद्र से अपने निवास के लिए अपनी कुल्हाड़ी से भूमि निकाली। वह जगह केरल राज्य बन गया। इसलिए केरलम को भार्गव क्षेत्र भी कहा जाता है। इसे मलनाडु, मलयनाडु, मलयालम भी कहा जाता है। केरल को "भगवान का अपना देश"(God's own country) बोला जाता है। मलयालम भाषा की लिपि अद्वितीय है। उसकी जटिल लेखन प्रणाली है। इस लिपि में 56 अक्षर हैं, जिनमें स्वर, व्यंजन और विशेष अक्षर शामिल हैं। उसकी व्याकरण और वाक्य रचना अलग है। इसमें शब्दों का निर्माण मूल शब्दों में उपसर्ग और प्रत्यय जोड़कर किया जाता है। भाषा में आमतौर पर विषय-वस्तु-क्रिया शब्द क्रम का पालन किया जाता है। इसकी शब्दावली ने संस्कृत, अरबी, पुर्तगाली और अंग्रेजी शब्दों को आत्मसात् किया है। मलयालम भाषा की व्याप्ति मुख्य रूप से भारत के केरल राज्य और केंद्र शासित प्रदेश लक्षद्वीप में देखी जाती है, जहाँ यह आधिकारिक भाषा के रूप में प्रचलित है और अधिकांश आबादी द्वारा बोली जाती है। इसके अतिरिक्त, तमिलनाडु के नीलगिरि जिले तथा कर्नाटक-केरल सीमा से लगे कासरगोड जिले के कुछ हिस्सों में भी मलयालम बोली जाती है। भारत से बाहर भी मलयालम भाषी समुदाय की उल्लेखनीय उपस्थिति है। संयुक्त अरब अमीरात और सऊदी अरब में इनकी बड़ी संख्या निवास करती है, जबकि कुवैत, कतर, बहरीन जैसे खाड़ी देशों में भी यह समुदाय सक्रिय है। इसके अलावा, अमेरिका, ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में भी मलयालम भाषी लोग रहते हैं, जिससे यह भाषा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी अपनी पहचान बनाए हुए है।

मलयालम भाषा की उत्पत्ति:

उत्तर भारत की भाषाओं से दक्षिण भारत की द्रविड भाषाएँ, संरचना के कारण अलग हैं। "मलयालम" शब्द "मलयम" (मलै = पर्वत) एवं "आष़म" (प्रदेश) के जोड़ने से बना शब्द है। इसका अर्थ पर्वतों का प्रदेश है। "मलयम" सह्यपर्वत के दक्षिण हिस्से का भूभाग है एवं "आष़म" का अर्थ नीचे का स्थान है। मलय पर्वत के नीचे के स्थान को मलयालम

बोलते हैं। इतिहासकारों के अनुसार जगह का नाम फिर भाषा का नाम भी बन गया है। विश्व भाषाओं में 26 वें स्थान पर है -मलयालम।

मलयालम भाषा की उत्पत्ति के लिए विविध सिद्धांत प्रचलित हैं। इतिहासकारों ने इसके लिए अपनी-अपनी व्याख्या प्रस्तुत की है। मुख्यतः इसके तीन सिद्धांत प्रचलित हैंः

1. **संस्कृत से उत्पन्न**
2. **तमिल से उत्पन्न**
3. **स्वतंत्र (पूर्व द्रविड से उत्पन्न भाषा)**

1. संस्कृत उद्भव के दावेः

कुछ विद्वानों का मानना है कि मलयालम भाषा की उत्पत्ति संस्कृत से हुई है। इनमें प्रमुख है प्राचीन काव्य लीलातिलक के रचनाकार जिनका नाम अज्ञात है। इस रचना में उन्होंने लिखा है- "संस्कृतम अनादि; अन्य आदिमत"- इसका अर्थ है संस्कृत देवभाषा है, वह अनादि है। मणिप्रवालम कवियों के नाम से प्रसिद्ध प्राचीन कवि भी अपनी रचनाओं में संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते थे। प्रकांड भाषा पंडित शेषगिरी शास्त्री, आर.स्वामिनाथन, एल ए रविवर्मा, डॉ.पॉप आदि संस्कृत के समर्थक थे।

2. तमिल उद्भव के दावेः

मलयालम भाषा की उत्पत्ति चेंतमिष़ से है- ऐसे मानने वालों में प्रसिद्ध हैं- द्रविड भाषाओं के बारे में सबसे पहले शोध ग्रन्थ की रचना करनेवाले फ्रांसिस.डब्ल्यू एल्लिस। इनके अलावा डॉ. कालड्वल, एल वी रामस्वामी अय्यर जैसे पंडित भी तमिल के समर्थक थे।

इनके दावे कुछ इस प्रकार हैंः

1) मलयालम भाषा के ब्रह्मांड पुराणम, रामचरितम जैसे प्राचीन ग्रन्थों में तमिल शब्दों की प्रचुरता है।

2) दैनिक उपयोग के कई शब्द दोनों भाषाओं में एक ही हैं। (जैसे पैर, हाथ, कान, दूध, घी)

3) चेंतमिष़ के पुराने ग्रन्थ जैसे पतिट्टपत्तु जैसे रचनाओं के लेखक, केरल के निवासी थे। इसका मतलब दोनों प्रदेशों में एक ही भाषा बोली जाती थी।

3. स्वतंत्र भाषाः

श्री आट्र कृष्ण पिषारडी, श्री गोदवर्मा जैसे भाषा पंडित मलयालम को मूल द्रविड भाषा से उत्पन्न स्वतंत्र भाषा के रूप में मानते थे। प्रसिद्ध कवि उल्लूर भी इसके समर्थक थे। इनके दावे निम्नानुसार हैं –

1) मलै, तलै जैसे तमिल शब्दों का 'ऐ' कार नहीं, मल, तल जैसे मलयालम के 'अ' कार – भाषा के पूर्व रूप है।

2) तमिल भाषा के पुरुष भेद प्रत्ययों के अति प्रसार मूल द्रविड भाषा में नहीं हैं।

4. इन सभी से भिन्न मिश्र भाषा का दावा करनेवाले हैं- प्रसिद्ध भाषा पंडित इलमकुलम पी एन कुञ्जन पिल्लै। उनके अनुसार नम्बूतिरियों के केरल में आने के कारण भाषा मिश्र बन गई है। नम्बूतिरी संस्कृत या प्राकृत बोलते थे, केरल में आकर यहां के चेंतमिष़ बोली के साथ मिलकर एक नई मिश्र भाषा बन गई है।

मलयालम भाषा का विकास

इसके तीन चरण हैंः

प्रथम चरण- बाल अवस्था (तमिल युग) मलयालम वर्ष 1 से 500 वर्ष तक

मध्य चरण- कुमार अवस्था – 500- 800 वर्ष

आधुनिक चरण- युवा अवस्था – सच्चा मलयालम युग (केरल पाणिनी के अनुसार)

अक्षर माला

आधुनिक मलयालम भाषा की लिपि ब्राह्मी लिपी है। पहले मलयालम भाषा वट्टेषुत्तु, कोलेषुत्तु, मलयाण्म, ग्रन्थ लिपि आदि लिपियों में लिखी जाती थी।

मलयालम साहित्य का विकास

मलयालम साहित्य को नए साहित्य प्रस्थानों से जोड़ने का कार्य संस्कृत ने किया है। चम्पू प्रस्थानम, संदेश काव्य, स्तोत्रम जैसे अनेक काव्य शैलियां प्राचीन काल में ही

प्रचलित थे। मणिप्रवालम एक साहित्य शैली है जिसमें कवियों ने उस समय के समाज के विभिन्न जीवन शैलियों और रीतियों को कार्य रूप में अंकित किया है। इन कवियों को मणिप्रवालम कवि कहते हैं। इसमें संस्कृत शब्द अधिक मात्रा में मिलते हैं। मलयालम साहित्य विविध चरणों से गुजरा है।

14वीं सदी तक का मलयालम साहित्य

संस्कृत, तमिल और मिश्र भाषा में लिखी गई अनेक रचनाएँ इसी चरण में मिलेंगी। मणिप्रवालम कविताएँ, चम्पू , लीला तिलक, उण्णुनीलि संदेशम, निरणम कवियों की रचनाएँ आदि इसमें प्रसिद्ध हैं।

15वीं-16वीं सदी

इस काल को मलयालम साहित्य का स्वर्णकाल कहा जाता है। मलयालम साहित्य के पिता "तुन्चत्तु एषुत्तच्चन" इसी काल में विराजमान थे। इस काल को भक्तिकाल भी कहते हैं। एषुत्तच्चन, "किलिप्पाट् प्रस्थानम" के संस्थापक थे। तोते को बुलाकर उनसे काव्य पाठ कराने की शैली को किलिपाट् कहा जाता है। इससे पहले ही मलयालम साहित्य में कण्णन रामायण एवं कृष्णगाथा काफी प्रचलित थे।

प्रसिद्ध कवि पून्तानम नम्बूतिरी भी इसी समय के थे। वे बड़े कृष्ण भक्त थे। उनकी प्रसिद्ध रचना है- "ज्ञानपाना" जो आज भी लोकप्रिय है। वे संस्कृत पंडित थे।

17वीं-18वीं सदी

इस सदी में मलयालम साहित्य एक नए मोड की ओर उन्मुख हुआ। प्राचीन काव्य रीतियों को छोड़कर समाज, नाटक और आट्टकथा की ओर उत्सुक हो गए। "आट्टकथा" नृत्य नाट्य के ज़रिए कहानी बताने की शैली है। आधुनिक काल का कथकली इसका नवीनतम रूप है। कोट्टारक्करा तम्पुरान कथकली के संस्थापक के रूप में माने जाते हैं। उनके "रामनाट्टम" काफी प्रसिद्ध है। उण्णायी वारियर के "नलचरितम आट्टकथा"उस ज़माने के काफी लोकप्रिय नाट्यरूप है। प्रसिद्ध कवि इरयिम्मन तम्पी की लोरियां काफी प्रचलित थीं। महाकवि कुंजन नम्बियार भी इसी समय के हैं। उन्होंने पंडितों के "आट्टकथा" को "ओटट्म तुल्लल" नामक नए नाट्य रूप में परिवर्तित कर जन मानस तक पहुंचाया। उनके तुल्लल काव्य समाज को आलोचनात्मक दृष्टि से देखते हुए हास्यात्मक तरीके से प्रस्तुत करते थे।

इसी समय की एक और काव्यधारा है- "वन्चिपाट्" नौकाओं को चलाते समय गानेवाले गीत के रूप में इसको रचा गया था।

19वीं सदी

तिरुवतंकूर के महाराजा स्वाति तिरुनाल इस सदी के प्रसिद्ध कवियों में से एक हैं। इसी समय गद्य के विकास की शुरुआत भी हुई थी। साहित्य के नए रूप जैसे उपन्यास, लघु कथा, नाटक आदि भी प्रचलित होने लगे थे।

20वीं सदी

यह मलयालम साहित्य का आधुनिक काल था। नई कविता, लघु कथा, विज्ञान साहित्य, नाटक, उपन्यास, शोध ग्रन्थ, यात्रा वृत्तांत, जीव चरित्र, आत्मकथा, हास्य साहित्य जैसे साहित्य के विभिन्न प्रकारों का विकास इसी समय हुआ है।

मलयालम के महाकवि त्रय – उल्लूर परमेश्वरन नायर, वल्लत्तोल नारायण मेनन एवं कुमारन आशान आधुनिक काव्यधारा के शिल्पी हैं। केंद्र सरकार द्वारा साहित्य की विशिष्ट उपलब्धियों के लिए दिए जाने वाले ज्ञानपीठ पुरस्कार के प्रथम विजेता थे- जी शंकरकुरुप। उनके काव्य संग्रहण "ओडक्कुष़ल" के लिए 1965 में यह पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इनको मिलाकर अब तक मलयालम साहित्य को 6 ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

एस के पोट्टकाडु (1980), तकष़ि शिवशंकर पिल्लै (1984) , एम टी वासुदेवन नायर (1995), ओ एन वी कुरुप (2007) एवं अक्कितम अच्युतन नम्बूतिरी (2019) अन्य ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता थे। ये सभी मलयालम साहित्य के दिग्गज हस्तियाँ हैं।

मलयालम भाषा की उपबोलियां

मलयालम भाषा की कई उपबोलियां हैं, जो क्षेत्रीय और सांस्कृतिक विविधता को दर्शाती हैं। कुछ प्रमुख उपबोलियां हैं:

केरल की क्षेत्रीय बोलियां

1. **उत्तरी केरल की बोली :** यह बोली कन्नूर, कासरगोड और वायनाड जिलों में बोली जाती है।

2. **मध्य केरल की बोली :** यह बोली तिरुवनंतपुरम, कोल्लम, पत्तनंतिट्टा और कोट्टयम जिलों में बोली जाती है।

3. **दक्षिणी केरल की बोली :** यह बोली तिरुवनंतपुरम और कोल्लम जिलों के दक्षिणी भागों में बोली जाती है।

मलयालम एक आकर्षक भाषा है जिसमें द्रविड और सांस्कृतिक प्रभावों का एक अनोखा मिश्रण है। मलयालम की एक समृद्ध साहित्यिक परंपरा है। मलयालम भाषा केरल की सांस्कृतिक पहचान का एक अभिन्न अंग है। मलयालम भाषा की व्याप्ति न केवल भारत में है, बल्कि विदेशों में भी मलयालम बोलने वाले बड़ी संख्या में हैं।

कला सी एस

संस्कृत भाषा: ज्ञान और दर्शन की मूलाधार

"संस्कृत" शब्द का अर्थ होता है "संस्कारयुक्त", "परिष्कृत", या "शुद्ध किया गया"। यह शब्द दो भागों से बना है: "सम्" (सं) = साथ, पूरी तरह, अच्छी तरह। "कृत" = किया गया, बनाया गया। अतः "संस्कृत" का शाब्दिक अर्थ हुआ "अच्छी तरह से किया गया" या "संवारा गया, सुधारा गया भाषाई रूप"। इसका उपयोग एक ऐसी भाषा के लिए होता है जो व्याकरण और संरचना की दृष्टि से अत्यंत परिपक्व और विकसित हो। संस्कृत भाषा का इतिहास अत्यंत प्राचीन, समृद्ध और गहन है। यह न केवल भारत की, बल्कि विश्व की भी सबसे पुरानी भाषाओं में से एक मानी जाती है। यह केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि ज्ञान, संस्कृति और दर्शन की वाहक है। संस्कृत को "देववाणी" कहा गया है, अर्थात् यह देवताओं की भाषा है। इसका इतिहास हजारों वर्षों में फैला हुआ है और इसकी गहराई व समृद्धि अद्वितीय है।

वैदिक संस्कृत - संस्कृत भाषा का प्रारंभिक रूप वैदिक संस्कृत कहलाता है, जिसमें वेदों की रचना हुई। वेदों का समय विभिन्न विद्वानों द्वारा ईसा पूर्व 6,500 माना गया है। ईसा पूर्व 1500 तक संस्कृत भाषा की अभिव्यक्ति क्षमता विकसित हो चुकी थी। यह माना जाता है कि वेदों में प्रयुक्त भाषा प्रथमतया विभिन्न बोलियों के रूप में प्रचलित थी। यह वर्तमान संस्कृत से कुछ सीमा तक पृथक् थी, जिसे वैदिक संस्कृत कहा जाता है। प्रत्येक वेद में प्रातिशाख्य के नाम से व्याकरण ग्रन्थ भी रचे गए। प्रातिशाख्यों ने शब्दों और अन्य व्याकरणिक बिंदुओं को समझाया। बाद में, व्याकरण की अनेक शाखाएं विकसित हुई। इस अवधि में एक विशाल साहित्य वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषद् और वेदाङ्ग के रूप में अस्तित्व में आया, जिसे वैदिक संस्कृत में निबद्ध वैदिक साहित्य कहा जाता है। वैदिक संस्कृत में उच्च कोटि की काव्यात्मकता, लयात्मकता और दर्शन की झलक मिलती है। वैदिक संस्कृत की भाषा अत्यंत लयात्मक, गूढ़ और दार्शनिक थी। इस युग में भाषा के माध्यम से धर्म, यज्ञ, समाज व्यवस्था, नैतिकता और ब्रह्मज्ञान का वर्णन किया गया। वैदिक संस्कृत में उच्चारण और छंद की शुद्धता अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जाती थी। वैदिक भाषा का प्रयोग मुख्यतः आध्यात्मिक ज्ञान, प्रकृति की स्तुति, ब्रह्मांडीय व्यवस्था और मानव धर्म के नियमों के लिए हुआ। इस युग में भाषा को एक जीवन साधना माना जाता था।

लौकिक संस्कृत – व्याकरण का विकास - वैदिक काल के बाद संस्कृत का परिष्कृत रूप विकसित हुआ, जिसे लौकिक संस्कृत कहते हैं। लौकिक संस्कृत ने साहित्य को वह ऊँचाई दी, जिसका उदाहरण विश्व में कम मिलता है। इस युग में भाषा को नियमबद्ध करने का कार्य सबसे पहले महर्षि पाणिनि ने किया। उन्होंने अपने समय के दौरान प्रचलित दस व्याकरण शाखाओं को सम्मिलित करते हुए, "अष्टाध्यायी" नामक व्याकरण का सर्वथा प्रामाणिक ग्रन्थ लिखा, जो पश्चात्वर्ती परम्परा के लिए प्रकाश-स्तम्भ के रूप में स्वीकार्य हुआ। "अष्टाध्यायी" संस्कृत व्याकरण का महानतम और विश्व का सबसे प्राचीन वैज्ञानिक व्याकरण है। अष्टाध्यायी केवल व्याकरण नहीं, बल्कि भाषाविज्ञान का शास्त्रीय उदाहरण है।अनन्तर साहित्यिक संस्कृत और सम्भाषणगत संस्कृत दोनों ने पाणिनी की भाषाव्यवस्था का अनुसरण किया। आज पाणिनी की अष्टाध्यायी की कसौटी पर ही संस्कृत भाषा की शुद्धता का परीक्षण किया जाता है। पाणिनि के बाद पतंजलि (महाभाष्य), कात्यायन आदि ने भी व्याकरण को विस्तार दिया। महर्षि पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि ने मिलकर संस्कृत भाषा को एक वैज्ञानिक, तर्कसंगत और स्थायी ढांचे में ढाला, जो आज तक अनुपम माना जाता है। इस काल में महाकाव्य, नाटक, कथा, नीति शास्त्र, दर्शन और अलंकार शास्त्र जैसे विविध साहित्यिक रूपों में महान कृतियाँ रची गईं। महाकाव्य – रामायण (वाल्मीकि), महाभारत (कृष्ण द्वैपायन व्यास), नाटक – अभिज्ञानशाकुंतलम्, मेघदूतम् (कालिदास), स्वप्नवासवदत्ता (भास), उत्तररामचरितम् (भवभूति), काव्यशास्त्र – काव्यादर्श (दंडिन), नाट्यशास्त्र (भरतमुनि), नीति शास्त्र – पंचतंत्र (विष्णु शर्मा), हितोपदेश आदि लौकिक संस्कृत काल की महत्वपूर्ण रचनाएं हैं। यह काल काव्य, नाटक, नीति, दर्शन, पुराण, कथा साहित्य और शास्त्रों का स्वर्ण युग रहा।

मध्यकाल – संस्कृत का शास्त्रीय प्रभुत्व और धर्मशास्त्रों की रचना - मध्यकाल में संस्कृत का प्रयोग आम जनमानस की भाषा के रूप में कम हुआ, पर यह शास्त्रों, धर्म और विद्या की भाषा बनी रही। इस काल में संस्कृत की शिक्षा मठों, गुरुकुलों और विद्वानों तक सीमित रह गई। इस समय तंत्र शास्त्र, स्मृति ग्रंथ, आयुर्वेद, खगोल, चिकित्सा, धर्मशास्त्र आदि पर व्यापक रचनाएँ हुईं। धर्मशास्त्र, न्याय, मीमांसा, योग, वेदांत जैसे दर्शन इसी युग में अपने चरम पर पहुँचे। संस्कृत के माध्यम से ज्योतिष, आयुर्वेद, वास्तु, राजनीति और संगीत का व्यापक विकास हुआ। इस समय संस्कृत शिक्षा का प्रमुख माध्यम था। गुरुकुलों और विश्वविद्यालयों (नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला) में यही भाषा प्रमुख थी। संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद फारसी, अरबी और तिब्बती भाषाओं में हुआ जिससे इसका ज्ञान विदेशों में

भी पहुँचा। संस्कृत भारत के बाहर तिब्बत, नेपाल, चीन, श्रीलंका, म्यान्मार, कंबोडिया और इंडोनेशिया तक पहुँची। हालाँकि इस युग में जनभाषा के रूप में अपभ्रंश, प्राकृत, पाली, हिंदी और अन्य क्षेत्रीय भाषाएँ विकसित हुईं, पर उनका मूल संस्कृत ही रहा।

औपनिवेशिक काल – संस्कृत पर पश्चिमी प्रभाव और ह्रास - ब्रिटिश शासन के दौरान संस्कृत की स्थिति धीरे-धीरे कमजोर होने लगी। अंग्रेजों ने अंग्रेजी को प्रशासन और शिक्षा की भाषा बना दिया, जिससे संस्कृत का शैक्षणिक प्रभाव घटा। ब्रिटिश शासन काल में संस्कृत शिक्षा को सरकारी संरक्षण नहीं मिला, जिससे इसका प्रचार धीमा हो गया। परंतु पाश्चात्य विद्वानों ने भी संस्कृत की वैज्ञानिकता और सांस्कृतिक महत्व को पहचाना। कई पाश्चात्य विद्वानों ने संस्कृत का गहन अध्ययन किया, जैसे विलियम जोन्स, जिन्होंने ऋग्वेद, मनुस्मृति, गीतगोविंदम (जयदेव) आदि का अनुवाद किया। जर्मन विद्वान मैक्स मूलर ने वेदों का संपादन किया। संस्कृत के व्याकरण और ध्वन्यात्मक संरचना को देखकर भाषाविज्ञान में इंडो-यूरोपीय भाषा परिवार की परिकल्पना की गई।

आधुनिक युग में संस्कृत - आज भले ही संस्कृत जनभाषा न हो, तथापि यह एक साहित्यिक, धार्मिक और सांस्कृतिक भाषा के रूप में पुनः जीवंत हो रही है। भारत सरकार ने संस्कृत को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया है। संस्कृत भारती - बोलचाल की संस्कृत को बढ़ावा देती है, केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय - शोध, अध्यापन और अनुवाद कार्य में संलग्न, संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय - विश्व के सबसे पुराने संस्कृत विश्वविद्यालयों में से एक, आदि संस्थाएँ संस्कृत के प्रचार-प्रसार में कार्यरत हैं। कई विद्यालयों में संस्कृत एक वैकल्पिक भाषा के रूप में पढ़ाई जा रही है। मट्र और होसाहल्ली (कर्नाटक) में अधिकांश लोग संस्कृत में वार्तालाप करते हैं। झिरी (मध्य प्रदेश) में संस्कृत दैनिक व्यवहार की भाषा है। संस्कृत में आज भी कहानियाँ, उपन्यास, कविता, नाटक, निबंध और यहाँ तक कि समाचार पत्र जैसे "सुधर्मा" प्रकाशित होते हैं। संस्कृत केवल भारत तक सीमित नहीं रही। आज दुनिया के कई विश्वविद्यालयों (जैसे ऑक्सफोर्ड, हार्वर्ड, कैंब्रिज, कैलिफ़ोर्निया और हाइडलबर्ग) में संस्कृत का अध्ययन होता है। योग, आयुर्वेद, वेदांत एवं बौद्ध दर्शन आदि के कारण पश्चिमी देशों में संस्कृत के प्रति रुचि बढ़ी है। यूनेस्को ने ऋग्वेद को विश्व की सांस्कृतिक धरोहर घोषित किया है।

संस्कृत को इण्डो-आर्यन या भारतीय भाषा के जर्मन भाषा के परिवार के रूप में माना जाता है जिसमें यूनानी, लैटिन और अन्य समान भाषाएँ सम्मिलित हैं। विलियम

जोन्स, जो पहले से ही ग्रीक और लैटिन से सुपरिचित थे, जब संस्कृत के संपर्क में आए, तब उन्होंने यह व्यक्त किया कि संस्कृत, ग्रीक की तुलना में अधिक सही है और लैटिन की तुलना में अधिक प्रचुर तथा परिष्कृत है। उन्होंने स्पष्टतया कहा कि संस्कृत एक अद्‌त भाषा है। यह उल्लेखनीय है कि प्राचीन और शास्त्रीय संस्कृत का संभाषण के माध्यम के रूप में प्रयोग संपूर्ण भारत में और दुनिया के विभिन्न भागों में विद्वानों द्वारा किया जाता था।

भारतीय परम्परा के अनुसार, संस्कृत भाषा का न कोई आदि है, और न कोई अन्त। यह शाश्वत भाषा के रूप में श्रद्धा का विषय है। स्वयंप्रभु ईश्वर द्वारा स्वयं संस्कृत भाषा को निर्मित किया गया है। अतः यह दिव्य है और अनन्त है। इस भाषा का प्रयोग पहली बार वेदों में किया गया और उसके बाद यह साहित्य के अन्य क्षेत्रों में अभिव्यक्ति का साधन बनी।

संस्कृत भारत में पश्चात्वर्ती अन्य भाषाओं और साहित्य का स्रोत रही। पाली और प्राकृत पहले संस्कृत से विकसित होने वाली भाषाएँ हैं। बौद्ध विचारों का प्रचार-प्रसार पाली के माध्यम से और जैन सिद्धान्तों के प्रसार के लिए प्राकृत का प्रयोग किया गया। अधिकांश बौद्ध साहित्य पाली में और जैन साहित्य प्राकृत में लिखा गया है। बौद्ध और जैन साहित्य का बहुभाग संस्कृत में भी लिखा गया। भारत के विभिन्न भागों में प्राकृत भाषा के अलग-अलग रूप प्राप्त होते हैं, जैसे पैशाची, शौरसेनी, मागधी, अर्धमागधी और महाराष्ट्री आदि। इन प्राकृत भाषाओं का प्रयोग गाहासप्तशती और कर्पूरमंजरी आदि अलंकृत काव्य लेखन के लिए, तथा महिलाओं और निरक्षर पात्रों के संवाद के रूप में संस्कृत नाटक में भी किया गया था। प्रत्येक प्रकार की प्राकृत भाषाओं से पैशाची अपभ्रंश, शौरसेनी अपभ्रंश आदि विकसित हुई और अनन्तर आधुनिक भारतीय भाषा इन अपभ्रंश भाषाओं से विकसित हुई। भारत की आधिकारिक भाषा हिंदी शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुई। ऐसा माना जाता है कि भारत के उत्तरी भाग में प्रयोग में आने वाली प्रायः सभी आधुनिक भारतीय भाषाएं संस्कृत से ही विकसित हैं.

संस्कृत भाषा का इतिहास केवल किसी एक भाषा का इतिहास नहीं, बल्कि भारत की आत्मा का इतिहास है। यह भाषा वेदों के मंत्रों से लेकर वैज्ञानिक ग्रंथों तक, नीति कथाओं से लेकर दर्शनशास्त्र तक — हर क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ चुकी है। संस्कृत के बिना भारतीय संस्कृति अधूरी है। यह भाषा न केवल हमारे अतीत की पहचान है, बल्कि हमारे भविष्य की दिशा भी दिखा सकती है।

संस्कृत के संरक्षण के लिए हमें इसे केवल "शास्त्रीय" या "धार्मिक" भाषा मानने की सोच से बाहर निकलना होगा। आज आवश्यकता है कि हम संस्कृत को केवल पूजा-पाठ की भाषा न मानें, बल्कि इसे जीवंत, आधुनिक और उपयोगी भाषा के रूप में अपनाएँ। संस्कृत भाषा केवल इतिहास की एक वस्तु नहीं है, बल्कि वह जीवंत परंपरा है, जो भारत के आत्मा, विचार और चेतना की अभिव्यक्ति है। यह भाषा वेदों के मंत्रों से लेकर आधुनिक तकनीकी दृष्टिकोण तक हर क्षेत्र में उपयोगी सिद्ध हो सकती है। इसकी संरचना, लय, वैज्ञानिकता, सौंदर्य और भावनात्मक गहराई इसे विश्व की अन्य सभी भाषाओं से अलग और महान बनाती है। यदि यह भाषा पुनः जनजीवन में लौटती है, तो भारत की सांस्कृतिक चेतना को एक नई ऊर्जा मिलेगी।

हिमाँशु शर्मा

हिंदी भाषा: राष्ट्र की आधिकारिक अभिव्यक्ति

भाषा शब्द भाष धातु से उत्पन्न हुआ है "भाष वक्तायां वाचि" अर्थात व्यक्त वाणी ही भाषा है। भाषा विचार विनिमय का साधन है जो मनुष्यों के बीच अपनी इच्छा या विचार को व्यक्त करने के लिए ध्वनि संकेतों के रूप में होती है। मनुष्य इसे परम्परागत सम्पत्ति के रूप में अपने पूर्वजों से सीखता है और उसका परिमार्जन करते हुए उसमें नए-नए शब्द गढ़ता जाता है। सभ्यता के विकास, मानसिक और भौतिक परिवर्तनों के साथ अथवा एक जाति का दूसरी जाति के सम्पर्क में आने से भी भाषा का विकास होता है। कहा जाता है, "चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर बानी।" अर्थात् थोड़ी-थोडी दूर पर समाज की भाषा में बदलाव आ ही जाता है, जो स्वाभाविक है। भाषा की प्रकृति, प्रवृत्ति, मर्यादा, गरिमा सब निश्चित होती है। यह बहते नीर जैसे निरंतर प्रवाहमान रहती है। भाषा से ही आज की चतुर्दिक प्रगति संभव है, भाषा ने ही ऐसी व्यवस्था सुनिश्चित की है जिससे हम अपने ज्ञान को न केवल अक्षुण्ण रखते है बल्कि इसे पीढ़ी दर पीढ़ी सौंपते जाते हैं। सभ्यता और संस्कृति के सोपान पर आरोहण करने के लिए भाषा की भूमिका इतनी महत्वपूर्ण है कि भाषा के बिना किसी प्रकार की उन्नति करना सम्भव नहीं। डॉ. कामता प्रसाद गुरु के शब्दों में 'भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों तक भलीभाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार स्पष्टतया समझ सकता है।' बोलचाल से शुरू होकर भाषा ने चिंतन, संस्कृति और साहित्य के विविध रूपों को ग्रहण किया। इसलिए मैक्स मूलर ने कहा कि "भाषा यदि प्रकृति की देन है तो निस्संदेह यह प्रकृति की अन्तिम और सर्वश्रेष्ठ रचना है, जिसे प्रकृति ने केवल मनुष्य के लिए ही सुरक्षित रखा।"

मानव जाति के विकास के साथ स्थान, परिस्थिति, मेधा के विकास और सामाजिक संस्कृति ने अनेक भाषाओं को जन्म दिया है। दुनिया भर में अनेकों भाषाएं बोली जाती है जिन्हें बोलने वाले गिनती भर लोगों से लेकर करोड़ों की संख्या वाले हैं। इनकी उभय-निष्ठता यह है कि ये पीढ़ीयों के अनुभव, सभ्यता, संस्कृति, इतिहास और ज्ञान का एक बहुत बड़ा कोश अपने में समेटे हुए होती है।

भाषाई परिपेक्ष्य में भारत बहुत समृद्ध हैं। भारत में 19652 भाषाएं और बोलियां बोली जाती हैं। इनमें 1652 मुख्य हैं जिन्हें बोलने, समझने वालों की संख्या बहुत है। कुल 121 भाषाओं को मान्यता प्राप्त है। संविधान में 22 भाषाएं अधिसूचित हैं। भारत में जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा हिंदी जानता, बोलता, समझता है। हिंदी सुनते ही भारतीय जन-मानस के अधरों पर मुस्कान, वाणी में सहजता बरबस ही आती है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से आर्य काल में संस्कृत की तीन बोलियां विकसित हुई पश्चिमोत्तरी, मध्यवर्ती, पूर्वी फिर पालि काल में दक्षिणोत्तरी बोली का विकास हुआ। प्राकृत के समय कुल छः बोलियां विकसित हुई। इन्हीं ब्राचड, केकय, टक्क, शौरसेनी, महाराष्ट्री, अर्धमागधी, मागधी में शौरसेनी से गुजराती, राजस्थानी, पश्चिमी हिंदी का विकास हुआ। सन् 1000 पश्चात हिंदी का प्रयोग अधिक मात्रा में देखने को मिलता है जो बताता है कि सन् 1000 तक हिंदी विकसित होना आरम्भ हो गई थी। सन् 1150 से प्रचुर हिंदी साहित्य मिलता है। आज तक की इस विकास यात्रा को तीन भागों आदि काल सन् 1000 से 1500 तक, मध्यकाल सन् 1500 से 1800 और आधुनिक काल सन् 1800 से वर्तमान में बांटा जाता है। अपने तीनों ही कालखण्डों में हिंदी ध्वनि, व्याकरण, साहित्य, शब्द-भण्डार में बहुत समृद्ध होती गई। भारतेन्द हरिशचन्द्र, देवकी नन्दन खत्री उन लेखकों में शुमार हैं जिनकी रचनाओं को पढ़ने के लिए लोगों ने हिंदी सीखी।

हिंदी भाषा का उज्ज्वल स्वरूप, इसकी गुणवत्ता, क्षमता, शिल्प-कौशल और सौंदर्य इसके सरल, लचीले, व्यवस्थित स्वरूप, व्याकरण में न्यून या शून्य अपवाद, विशाल शब्द-कोश, लिखने के लिए प्रयोग की जाने वाली देवनागरी भाषा की वैज्ञानिकता, संस्कृत से विरासत में प्राप्त शब्द-सम्पदा के साथ अन्य भारतीय भाषाओं सहित विश्व की भाषाओं के शब्दों को आत्मसात करने की विशिष्टता, साहित्य की हर विधा की सामग्री की विपुल उपलब्धता, जन-मानस की सम्पर्क भाषा के रूप में स्वतन्त्रता संग्राम व देश-प्रेम की वाहिका के रूप में दिखाई देता है।

मोबाइल फोन, कम्प्यूटर में हिंदी की उपलब्धता ने इसका डिजिटल प्रसार अप्रत्याशित रूप से बहुत अधिक बढ़ाया है। आज सबसे अधिक सामग्री, वेबपृष्ठ हिंदी में बनाए जा रहे हैं, यहां भी मांग अधिक आपूर्ति कम है। इसी महत्व को समझते हुए विश्व की प्रमुख भाषाओं से हिंदी में अनुवाद, वॉयस से टेक्स्ट, टेक्स्ट से वॉयस, डेटा विश्लेषण, चैटबोट्स और वर्चुअल असिस्टेंट द्वारा हिंदी संवाद सक्षमता की उपलब्धता सुनिश्चित की गई है।

इससे कौशल विकास के साथ डिजिटल मार्केटिंग को अभूतपूर्व लाभ मिला है। गूगल द्वारा हिंदी में ये सभी सुविधाएं उपलब्ध कराए जाने से हिंदी के प्रयोगकर्ताओं की संख्या बढ़ी है। रूपहले पर्दे पर हिंदी फिल्मों, टीवी कार्यक्रमों, रेडियों ने हिंदी के प्रचार प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

यह प्रसार केवल निजी नहीं सरकारी माध्यमों में भी बढ़ा है। यूनिकोड मानकीकरण, फोनेटिक की-बोर्ड उपलब्धता से टंकण सुलभता, ऑन-लाइन बैठकों में हिंदी के प्रयोग की निरंतरता, ऑन-लाइन भाषा प्रशिक्षण, विभागीय शब्दकोश के अनुसार कंठस्थ के माध्यम से शीघ्र, सटीक अनुवाद की उपलब्धता, शब्द सिंधु, वर्तनी एवं व्याकरण जांच, नए तकनीकी शब्दों के तीव्र विकास, हिंदी में काम करने पर पुरस्कार, प्रोत्साहन नीति, वेबसाइटों, फार्मों, नीतियों की हिंदी में उपलब्धता ने हिंदी को बहुआयामी स्वरूप दिया है। भारतीय भाषा अनुभाग का गठन, सभी भारतीय भाषाओं को बढ़ावा देने के साथ सम्पर्क भाषा के रूप में हिंदी को स्थापित करने के प्रयास, हिंदी में व्यावसायिक शिक्षा (चिकित्सा, अभियांत्रिकी, प्रबंधन, कौशल विकास) को बढ़ावा देना कुछ ऐसे विशिष्ट प्रयास हैं जिन्होंने हिंदी ज्ञान को अवश्यम्भावी बना दिया है।

वर्ष 1977 में तत्कालीन विदेश मंत्री फिर वर्ष 2002 में प्रधानमंत्री के रूप में श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने संयुक्त राष्ट्र संघ के अपना संबोधन हिंदी में दिया। अब तो जैसे हिंदी के स्वर्णिम युग की शुरुआत हुई है वर्ष 2021 ,2020 ,2019 ,2014 और 2024 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के सत्र में और विश्व के तमाम मंचों पर प्रधानमंत्री जी सहित अन्य प्रमुख नेतृत्वकर्ताओं ने अपने संबोधन निरंतर हिंदी में देकर देश की भाषा को न केवल गौरवान्वित किया है बल्कि विश्व परिदृश्य में उसे अग्रणी पंक्ति में लाकर खड़ा कर दिया है। यही कारण है कि पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा 'सेनोरिटा बड़े-बड़े देशों में....' से लेकर वर्तमान राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प 'नमस्कार ...' से भारत का अभिवादन करते हैं। कोविड 19- के दौरान विश्व के देशों को वैक्सीन उपलब्ध कराने पर विश्व के बड़े नेताओं द्वारा हिंदी में व्यक्त आभार अभिव्यक्ति प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में हमारे सामने है।

अमेरिका, इंगलैंड, जर्मनी, दक्षिण अफ्रीका, नेपाल, मॉरीशस, न्यूजीलैंड, सिंगापुर, यमन, युगांडा में हिंदी जानने वाले 2 करोड़ से अधिक हैं। फ़िजी, गुयाना, सूरीनाम, टोबैगो, त्रिनिडाड, अरब अमीरात में हिंदी को अल्पसंख्यक भाषा का दर्जा प्राप्त है। आज दुनिया के 85 देशों के 175 विश्वविद्यालयों में हिंदी एक भाषा के रूप में पढ़ाई जा रही है।

हिंदी की बढ़ती लोकप्रियता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि संयुक्त राष्ट्र समाचार की वेबसाइट (news.un.org/hi/), एक्स (@UninHindi), इंस्टाग्राम (@unitednationshindi) यूनएन फेसबुक हिंदी पेज और साप्ताहिक - यूएन समाचार- जैसे माध्यमों से आज संयुक्त राष्ट्र के कार्यकलापों और समाचारों को हिंदी में प्रकाशित किया जाता है। अमेरिकी विदेश विभाग ने भी हिंदी में सूचना देने के लिए अपना एक्स मीडिया हैण्डल (USA HindiMein) आरम्भ किया है।

हिंदी के इस स्वरूप का लाभ यह हुआ है कि प्राचीन, मध्यकालीन साहित्यिक पाण्डुलिपियां डिजिटल रूप में सहेजे जाने से सुरक्षित, सर्व-उपलब्ध, संरक्षित हुई हैं। लुप्त होती लोक-कलाओं, संगीत विधाओं, परम्पराओं को पुनर्जीवित करना, कला और संस्कृति की इस ऑन-लाइन उपलब्धता से भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार, भाषा से जुड़े ब्लॉग, फोरम के माध्यम से नई पीढ़ी को प्रशिक्षित किया जाना सुलभ हुआ है। सरकारी प्रयोग बढ़ने के साथ न्यायालयों में हिंदी का प्रवेश हुआ है, नागरिकों को विविध प्रकार के प्रारूप हिंदी में सुलभ हुए हैं। भाषा से जुड़े विविध दिवसों यथा हिंदी दिवस, विश्व अनुवाद दिवस, भारतीय भाषा दिवस, विश्व हिंदी दिवस, मातृभाषा दिवस के आयोजनों से हिंदी के प्रयोग में गौरव की भावना बलवती हुई है। हिंदी के संवर्धन के लिए समाज भी नई पीढ़ी को हिंदी का ज्ञान कराने के साथ अपनी समृद्ध संस्कृति से परिचित कराने के साथ हिंदी के स्वाभाविक प्रयोग को बल दे रहा है। हिंदी न केवल सपनों, संघर्षों, भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम बनती जा रही है बल्कि मौलिक चिंतन, सृजनशीलता की भावना को भी पुष्ट कर रही है, जिससे नई खोज, आविष्कार और जीवन की सुलभता के द्वार खुल रहे हैं।

वर्तमान में एक राष्ट्र के रूप में हमारा लक्ष्य स्वतन्त्रता दिवस के 75 वर्ष पूर्ण करने के बाद 'आजादी का अमृत काल' के अगले 25 वर्षों में भारत को समृद्ध, सशक्त, आत्मनिर्भर बनाने के साथ वैश्विक शक्ति के रूप में खुद को स्थापित करना है। इसमें केवल आर्थिक विकास नहीं सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषायी विकास शामिल है। हमें नई तकनीकों, नए नवाचारों का प्रयोग करते हुए अपनी विपुल सांस्कृतिक धरोहर को सँजोकर रखने के साथ अपनी भाषा को भी विकसित, भारतीय भाषाओं की सहचरी के रूप में स्थापित करना है। हिंदी को सम्पर्क भाषा और अन्य भारतीय भाषाओं को शक्ति का स्रोत मानें तो हमारे यहां एक नया भाषायी युग आरम्भ हो सकता है क्योंकि भाषा नदी की धारा के

समान चंचल होती है। यह रुकना नहीं जानती, यदि कोई भाषा को बलपूर्वक रोकना भी चाहे तो यह उसके बंधन को तोड़ आगे निकाल जाती है। भाषा की यही स्वाभाविक प्रकृति और प्रवृत्ति है। समय के साथ परिवर्तन आते रहते है और परिवर्तन के अनुरूप भाषा को नयी प्रवृत्तियाँ, नयी दिशाएँ मिलती है। हिंदी भी इसी काल-खण्ड से गुजर रही है जहां प्राचीन ज्ञान संरक्षित किया जा रहा है और एक बड़े, वृहत्तर समाज जिसमें अन्य भाषा-भाषी हैं को प्रभावित कर अपने साथ जोड़ने के लिए विभिन्न तकनीकी नवाचारों का उद्यम किया जा रहा है। संकोच, झिझक से दूर हिंदी भाषा संवाद अब आत्म-गौरव और सम्प्रेषण के मुख्य माध्यम के रूप में स्थापित होता जा रहा है। यह एक बेहद सुखद अनुभूति है।

विकास तिवाड़ी

सिंधी एक सांस्कृतिक पहचान

भारत विविधता का देश है। भारत भर में सिंधी समुदाय अपनी अनूठी प्रतिभा के लिए जाने जाते हैं। सिंधी शब्द "सिंधु" से लिया गया है, जो सिंधु नदी का प्राचीन नाम है। सिंधु नदी के तट पर रहने वाले लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा सिंधी भाषा है। अभिलेखों के अनुसार सिंधी समुदाय का इतिहास कम से कम 5000 साल पुराना है। सिंधी समुदाय की मूल भूमि सिंध थी जो अब पाकिस्तान का एक प्रांत है। सिंधी व्यापारी संभवतः व्यापारियों का पहला समूह था जिसने लंबी दूरी तक व्यापार किया। सिंधु घाटी सभ्यता के दौरान, सिंधी व्यापारियों द्वारा कलाकृतियों, सिक्कों और धातु के औजारों का व्यापार किया जाता था। अधिकतर व्यापार पाकिस्तान के सिंध के एक शहर थट्टा और आधुनिक इराक, सीरिया और तुर्की के मेसोपोटामिया के साथ होता था।

सिंधी वास्तव में वैश्विक व्यापारिक समुदाय थे।

नावों के आविष्कार के साथ, सिंधी व्यापारियों ने विश्व के लगभग हर भाग में अपने व्यापार का विस्तार किया।

सिंधी साहित्य का आरंभ काव्य से होता है। सिंधी कविता मुख्यत: सूफी फकीरों की कविता है। कोई-कोई कवि तो स्वयं को "गोपी" और परमात्मा को "कृष्ण" कहकर अपनी भावाभिव्यक्ति करते हैं। वे ईश्वर को पिता और मनुष्य को अपना भाई मानते हैं। उनका ध्येय है परमात्मा में लीन होना, किरण की सूर्य की ओर वापस यात्रा अथवा बिंदु और सिंधु की एकाकारिता जिसमें मैं, तू और वह का भेद नहीं रहता। पहले दोहे और श्लोक लिखे जाते रहे इससे पहले लौकिक कविताएँ प्रसिद्ध थीं। सिंधी लिखने के लिए प्रयुक्त अरबी-फारसी लिपि में 52 अक्षर होते है। इसमें से अधिकांश अरबी वर्णमाला के हैं, कुछ फारसी वर्णमाला के हैं और कुछ नये वर्ण जोड़े गये हैं। 18 नए अक्षर है। इनमें अधिकतर का रूप आदि, मध्य और अंत में भिन्न-भिन्न होता है स्वरों की मात्राएँ अनिवार्य न होने के कारण एक ही शब्द के कई उच्चारण हो जाते हैं।

आरंभिक काल

सिंधी के कुछ पुराने दोहे अरबी फारसी इतिहास ग्रंथों में मिलते हैं, किंतु सिंधी की प्रथम रचना दोदे चनेसर (1312 ई.) मानी जाती है। उपलब्ध वीर प्रबंध काव्य खंडित और अपूर्ण अवस्था में है। दोदा और चनेसर दो भाई थे जिनमें भूनगर के सिंहासन के लिए युद्ध हुआ था। इस युद्ध में सिंध के सब कबीले और सरदार शामिल थे। तत्कालीन सिंधियों के रीति-रिवाज, कबायली संगठन और अन्य आर्थिक तथा सामाजिक स्थितियों के बारे में इस किस्से से पता चलता है। 14वीं सदी के अंत में शेख हमाद बिन रशीदुद्दीन जमाली और शेख इसहाक आहनगर नाम के दो सूफी कवियों के कुछ फुटकर पद्य मिलते हैं। 15वीं सदी के अंत में मामुई (ठठ के निकट एक संस्थान) के सूफी दरवेशों के सात पद्य उपलब्ध हैं जिनमें सिंध पर आने वाली विपत्ति की भविष्यवाणी की गई है। 16वीं सदी के दोहाकारों में मखदूम अहमद भट्टी, काजी काजन, मखदूम नूह हालाकंडी और शाह अब्दुल करीम (1538-1623 ई.) के नाम उल्लेखनीय हैं। ये सब सूफी फकीर थे। काजन प्रेमोन्मत कवि थे। इनका कहना है कि प्रिय के दर्शन के बिना गुणगान (पवित्रता, सौंदर्य और विद्वता आदि) सब व्यर्थ हैं। बाहरी गुण हमें नरक में खींच ले जा सकते हैं, किंतु प्रेम में एक दिव्य शक्ति होती है। इनके दोहों की भाषा अधिक परिष्कृत और प्रांजल है। शाह करीम के 94 दोहे प्राप्त हैं। इनमें प्रेम साधना और आत्मसमर्पण पर बल दिया गया है। 17वीं शताब्दी के एक सूफी कवि उस्मान एहसानी का "वतननामा" (1646 ई.) उपलब्ध है।

स्वर्ण युग

18वीं शताब्दी का पूर्वार्ध सिंधी साहित्य का स्वर्ण युग कहलाता है। इस समय शाह इनायत, शाह लतीफ, मखदूम मुहम्मद जमान मखदूरा, अब्दुल हसन, पीर मुहम्मद बका आदि बड़े-बड़े कवि हुए हैं। ये सब के सब सूफी थे। इनके द्वारा सिंधी काव्य में नए छंदों, नई विधाओं और गंभीर दार्शनिक विचारों का प्रवर्तन किया गया। सिंधी मसनवियों और काफियों के रूप में तसव्वुक का भारतीयकरण यहीं से आरंभ होता है। शाह इनायत द्वारा "उम्र मारूई", "मोमल मेंघर", "लीला चनेसर" तथा "जाम तमाची और नूरी" नाम के किस्सों के अतिरिक्त मुक्तक दोहे और "सुर" लिखे गए। इनका प्रकृति वर्णन कलापूर्ण है और इनके उपमान मौलिक तथा अनूठे हैं। शाह लतीफ (1689-1752 ई.) सिंधी के सबसे बड़े और लोकप्रिय कवि माने गए हैं। इन्होंने नए विचार, नए विषय, नई कल्पनाएँ और नई शैलियाँ देकर सिंधी भाषा और साहित्य को समुन्नत किया। इनका "रिसालो" सिंधी की

मूल्यवान निधि है। इसमें प्रबंधात्मक कथाएँ भी हैं, मुक्तक कविताएँ भी; इतिवृतात्मक और वर्णनात्मक छंद भी हैं और भावपूर्ण गीत भी; प्रेम की कोमल कांत अभिव्यक्ति भी है और युद्ध का यथातथ्य चित्रण भी; हिंदू वेदांत भी है तथा इस्लामी तसव्वुक भी देखने मिलता है। इसमें प्रभु शक्ति के साथ देशभक्ति भी है। कवि को प्रकृति के सुंदर-असुंदर सभी पक्षों से प्यार है; साथ ही वे मानव से गहरी सहानुभूति रखते हैं। कहानियों का रूप लौकिक है, किंतु अर्थ में आध्यात्मिकता है। वे प्रमुखत: रहस्यवादी कवि हैं। खाजा मुहम्मद ज़मान बड़े विद्वान कवि थे। उनके 84 दोहे प्राप्त हैं जिनमें अपने "सज्जन" के प्रति अनन्य भक्ति और आत्म विस्मृति के भाव प्रकट हुए हैं।

टालपुरी शीया नवाबों के राज्यकाल (सन् 1783 से 1843) में सिंधी साहित्य ने एक नया मोड़ लिया। पिछले युग में प्रेम कथाओं के खंड प्रस्तुत हुए थे, जिसके पश्चात पूरी दास्तानें लिखी जाने लगी।

दोहा का प्राधान्य कम हुआ। गजलें लिखी जाने लगी। गद्य का रूप भी स्पष्ट होने लगा। इस युग के सबसे प्रसिद्ध कवि सचल उपनाम "सपमस्त" (1739-1826) थे जिन्हें सूफी संतों में बड़े आदर के साथ स्मरण किया जाता है। उनकी सी मधुर गीतियाँ और रसीली काफियाँ बहुत कम कवियों ने लिखी हैं। वे प्रेमी भक्त के लिए ब्राह्माचार और लोकाचार ही को नहीं, ज्ञान और कर्मकांड को भी व्यर्थ समझते हैं। हिंदू कवियों में दीवान दलपत राय (मृत्यु 1841) और सामी (1743-1850) पूरा नाम भाई चैन राय वेदांती कवि थे।

अंग्रेज़ी राज्यकाल

अंग्रेजी राज्यकाल (1843 से 1947 ई.) के दौरान सिंधी का काव्य उच्च स्तर का नहीं है। इस पर पश्चिमी प्रभाव भी देखने को मिलता है। लगारी का हीर राँझे का किस्सा बहुत प्रसिद्ध है। ये पंजाब के रहने वाले थे, खैरपुर में आकर बस गए थे। इनके द्वारा दोहे भी लिखे गए। शाह लतीफ के बाद इनका स्थान निश्चित किया जाता है। सैयद महमूद शाह ने काफियाँ छंदों और आदर्शों को अपनाया और सिंधी में लैला मजनूँ, यूसुफ जुलैखा, शीरीं फरहाद की कथाएँ लिखीं। नूर मोहम्मद और मोहम्मद हाशिम द्वारा "हिजो" (निंदात्मक कविताएँ) लिखीं और कलीच बेग और अब्दुल हुसैन ने कसीदे (प्रशस्तियाँ) लिखे। कलीच

बेग ने उमरखय्याम का अनुवाद सिंधी पद्य में किया। नवाब मीर हसन अली खाँ (1824-1909) द्वारा फिरदौसी के "शाहनामा" की नकल पर "शाहनामा सिंध" की रचना की गई। उन्होंने गजलें, सलाम और कसीदे भी लिखे। इनके अतिरिक्त सांगी, खाकी (लीलाराम सिंह), बेकस (बेदिल के पुत्र), जीवत सिंह और मुराद के नाम उल्लेखनीय हैं। पश्चिमी साहित्य से प्रभावित होकर लिखने वालों में देवनदास, दयाराम, गिडूमल, नारायण श्याम, मंघाराम मलकाणी तथा टी।एल। वसवाणी उल्लेखनीय हैं। मौलिक ढंग से कविता करने वालों में कुछ नाम गिनाए जा सकते हैं। शम्मुद्दीन बुलबुल का सिंधी काव्य में वहीं स्थान है जो उर्दू में अकबर इलाहाबादी का है। नई सभ्यता पर इनके व्यंग्य भी सुधारात्मक वृत्ति से लिखे गए हैं। इन्होंने गजलें भी लिखीं। गुलाम शाह की कविता में करुण रस देखने मिलता है। इन्हें "आँसुओं का बादशाह" कहा जाता है। हैदरबख्श जतोई की कविता में देशभक्ति ओतप्रोत है। सिंधु नदी के प्रति उनकी कविता बहुत प्रसिद्ध हुई है। लेखराज अजील प्रकृति के चित्रकार हैं। मास्टर किशनचंद बेबस अत्यंत स्वाभाविक भाषा में लिखते रहे हैं। उनके दो कविता संग्रह-शीरीं शीर और गंगाजूँ लहरू-प्रकाशित हैं। इनके शिष्यों में हरि दिलगीर ("कोड" के लेखक), हूँदराज दुखायल ("संगीत, पूल" के कवि), राम पंजवाणी तथा गोविंद भटिया प्रगतिशील कवियों में गिने जाते हैं। जीवित कवियों में सबसे अधिक प्रसिद्ध शेख अय्याज हैं जिनके गीत "बागी" नाम के संग्रह में प्रकाशित हुए हैं।

शाह (लतीफ) की कविता के आधार पर लालचंद अमरडिनूमल का लिखा हुआ "उम्र मारुई" सबसे पहला सफल नाटक माना जाता है। कवि कलीच बेग का "खुरशीद" नाटक (1870) पठनीय है। उसाणी का "बदनसीब थरी" एक प्रहसन है। लीलराम सिंह के नाटक अपनी भाषा और शिल्प शैली की दृष्टि से बहुत सुंदर हैं। दयाराम गिडूमल का "सत्त सहेल्यूँ" और राम पंजवाणी का "मूमल राणो" अभिनेय नाटक हैं। वर्तमान समय में सबसे प्रसिद्ध नाटककार मंघाराम मलकाणी हैं जिन्होंने कई सामाजिक नाटक और एकांकी लिखे हैं। वे निबंधकार और कवि भी हैं।

अधिकतर गद्य साहित्य अनुवाद रूप में प्राप्त है। मौलिक लेखकों में मिर्जा कलीच बेग और कौडोमत चंदनमल गद्य के प्रवर्तकों में गिने जाते हैं। मिर्जा द्वारा लगभग 200 पुस्तकें लिखी गई हैं। उनका "जीनत" (1890) सिंधी का पहला मौलिक उपन्यास है जिसमें सिंधी जीवन का यथातथ्य चित्रण देखने मिलता है। प्रीतमदास कृत "अजीब

भेंट," आसानंद कृत "शायर", भोजराजकृत "दादा श्याम" (आत्मकथा की शैली में) और नारायण भंभाणी का "विधवा" उल्लेखनीय हैं। परमानंद मेवाराम अपनी रसीली और यथार्थवादी कहानियों, निर्मलदास फतहचंद और जेठमल परसराम प्रगतिवादी कहानियों तथा भेरूमल मेहरचंद जासूसी कहानियों के कारण विख्यात हैं। वर्तमान समय में सुंदरी उत्तमचंदानी और आनंद गोलवाणी अच्छे कहानी-लेखक माने जाते हैं। परमानंद मेवाराम निबंधकार भी हैं। लुत्फउल्लाह कुरैशी, लालचंद अमरडिनूमल, नारायणदास मलकाणी, केवलराम सलामतराय अडवाणी और परसराम की गिनती सिंधी के आधुनिक शैलीकारों में की जाती है।

मनाली वधारिया

कोंकणी भाषा : एक अवलोकन

भारत को विश्व की भाषाई विविधता का जीवंत उदाहरण कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। यहां की भाषाएं सिर्फ संवाद के साधन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अस्मिता, पहचान और परंपराओं की वाहक हैं। इन्हीं भाषाओं में से एक है कोंकणी भाषा, जो भारत के पश्चिमी तटीय भागों में बोली जाती है और जिसकी समृद्ध विरासत आज भी जीवित है। यह न केवल गोवा राज्य की राजभाषा है, बल्कि इसे भारत सरकार ने 1992 में संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल कर मान्यता भी प्रदान की है।

कोंकणी भाषा का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। भाषाविद इसे इंडो-आर्यन भाषा परिवार का हिस्सा मानते हैं, जो संस्कृत से व्युत्पन्न भाषाओं में आती है। भाषाई विश्लेषण दर्शाता है कि कोंकणी की उत्पत्ति महाराष्ट्र अपभ्रंश से हुई थी। यह अपभ्रंश उस समय की लोकप्रिय बोली थी जो पश्चिम भारत के लोगों द्वारा बोली जाती थी। विद्वानों के अनुसार, 9वीं शताब्दी के आसपास कोंकणी एक स्वतंत्र भाषा के रूप में उभर कर सामने आई। यह भाषा तब से अब तक विभिन्न क्षेत्रों और प्रभावों से गुजरती रही है, जिससे इसकी शब्दावली, उच्चारण और लिपि में कई तरह के परिवर्तन हुए हैं।

कोंकणी भाषा का सबसे पहला लिखित प्रमाण 1058 ईस्वी के एक शिलालेख में दर्ज माना जाता है, जो गोवा और आसपास के क्षेत्रों से प्राप्त हुआ है। उसके बाद, 13वीं और 14वीं शताब्दियों में इसके अनेक शिलालेख मिले हैं, जिनमें इसे संस्कृत और कन्नड के मिश्रित रूप में देखा गया है। यह इस बात का प्रमाण है कि कोंकणी तब अपने स्वतंत्र भाषिक अस्तित्व की ओर अग्रसर थी।

16वीं शताब्दी में गोवा में पुर्तगाली शासन की स्थापना हुई, जिसका कोंकणी भाषा पर गहरा प्रभाव पड़ा। 1560 के बाद जब गोवा में पुर्तगाली धार्मिक जाँच (Inquisition) लागू हुआ, तब कोंकणी भाषा को "अशुद्ध" और "अधार्मिक" बताकर शिक्षा, प्रशासन और गिरिजा घर से हटा दिया गया। इसके स्थान पर पुर्तगाली और मराठी को बढ़ावा दिया गया। कोंकणी के साहित्यिक विकास को रोकने के लिए रोमन लिपि में कुछ धार्मिक कार्यों को ही अनुमति दी गई। इसके बावजूद कोंकणी भाषा पूरी तरह समाप्त नहीं हुई। लोकजीवन, मौखिक परंपराओं, गीतों और धार्मिक रीति-रिवाजों के ज़रिए यह पीढ़ी दर पीढ़ी जीवित रही।

कोंकणी की एक खास विशेषता है कि यह एक बहुलिपिक भाषा है। आज भारत में जितनी भाषाएं प्रचलित हैं, उनमें कोंकणी शायद अकेली ऐसी भाषा है जो पांच प्रमुख लिपियों में लिखी जाती है। गोवा में देवनागरी लिपि में इसे सरकारी स्तर पर मान्यता प्राप्त है। इसके अतिरिक्त, रोमन लिपि ईसाई समुदाय द्वारा व्यापक रूप से प्रयुक्त होती है, जो पुर्तगाली प्रभाव का परिणाम है। वहीं कर्नाटक में कोंकणी भाषियों द्वारा कन्नड लिपि, और केरल में मलयालम लिपि का प्रयोग किया जाता है। ऐतिहासिक रूप से मोडी लिपि का भी कुछ क्षेत्रों में प्रयोग हुआ है, विशेषकर महाराष्ट्र में। यह लिपि की विविधता कोंकणी की व्यापकता तो दर्शाती है, लेकिन भाषा के मानकीकरण में यह एक बड़ी बाधा भी बनी रही है।

कोंकणी भाषा में कई बोलियाँ (dialects) पाई जाती हैं, जो भूगोल, धर्म और जातीय पहचान के आधार पर बदलती हैं। गोवा में बोली जाने वाली कोंकणी को अधिकतर मानक भाषा के रूप में स्वीकार किया गया है। मालवणी कोंकणी, जो महाराष्ट्र के सिंधुदुर्ग और रत्नागिरी जिलों में बोली जाती है, मराठी से काफी प्रभावित है। कर्नाटकी कोंकणी में कन्नड शब्दों और ध्वनियों का प्रयोग देखने को मिलता है। केरल कोंकणी में मलयालम लहजा और शब्दावली स्पष्ट रूप से मौजूद है। इसके अलावा, सारस्वत ब्राह्मणों द्वारा बोली जाने वाली कोंकणी में संस्कृत शब्दों की अधिकता पाई जाती है।

कोंकणी का व्याकरण काफी हद तक संस्कृतनिष्ठ है, लेकिन इसमें क्षेत्रीय भाषाओं के प्रभाव भी देखे जाते हैं। इसमें दो लिंग (पुल्लिंग और स्त्रीलिंग), दो वचन (एकवचन और बहुवचन), और आठ विभक्तियाँ होती हैं। वाक्य विन्यास सामान्यतः कर्ता-कर्म-क्रिया (Subject-Object-Verb) होता है। यह संरचना हिंदी और अन्य इंडो-आर्यन भाषाओं से मेल खाती है। कोंकणी में भी काल, वाच्य, कारक, और उपसर्ग-प्रत्यय की व्यवस्था है। इसके अलावा, इसमें विशेषण, क्रिया विशेषण, समास, संधि जैसी व्याकरणिक संरचनाएँ मिलती हैं।

कोंकणी भाषा की शब्दावली अत्यंत समृद्ध और मिश्रित है। यह संस्कृतनिष्ठ शब्दों के साथ-साथ पुर्तगाली, मराठी, कन्नड, मलयालम, फारसी, अरबी और अंग्रेज़ी से भी शब्द ग्रहण करती रही है। उदाहरण के लिए, 'जनेला' (खिड़की), 'सपाटो' (जूता), 'इग्रेजा' (चर्च) जैसे पुर्तगाली शब्द आज भी गोवा में प्रयुक्त होते हैं। कन्नड प्रभाव में 'नीरु' (पानी) और 'मने' (घर) जैसे शब्द आम हैं।

कोंकणी साहित्य का आरंभ धार्मिक लेखन से हुआ। पादरी थॉमस स्टीफन्स ने 1616 ईस्वी में 'क्रीस्ट पुराजा' की रचना की, जिसमें मराठी और कोंकणी का मिश्रण था। यह ईसाई धर्मग्रंथ था और रोमन लिपि में लिखा गया था। इसके बाद 19वीं सदी में कोंकणी में लोककथाओं, गीतों और भजन साहित्य का विकास हुआ। 20वीं सदी में आधुनिक गद्य लेखन का प्रारंभ हुआ। इसी काल में साहित्यिक पत्रिकाएँ, नाटक और उपन्यासों की रचना हुई।

कोंकणी भाषा की साहित्यिक यात्रा में अनेक महत्वपूर्ण पड़ाव रहे हैं, जिनमें दामोदर मौज़ो द्वारा लिखित उपन्यास "अच्छेव" (जड़) एक प्रतिष्ठित कृति मानी जाती है, जिसे 1983 में साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ। मौज़ो के लेखन ने कोंकणी भाषा को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नई पहचान दिलाई, जिसके लिए उन्हें 2022 में भारतीय साहित्य का सर्वोच्च सम्मान "ज्ञानपीठ पुरस्कार" प्रदान किया गया। कोंकणी साहित्य और संस्कृति के संवर्धन में "जाग" जैसी साहित्यिक पत्रिकाएँ भी विशेष योगदान दे रही हैं, जिसे गोवा कोंकणी अकादमी प्रकाशित करती है। इसी समृद्ध विरासत को सम्मान देते हुए गोवा की केंद्रीय पुस्तकालय का नाम "कृष्णदास शामा गोवा राज्य केंद्रीय पुस्तकालय" रखा गया है। कृष्णदास शामा को कोंकणी गद्य का प्रवर्तक ही नहीं, बल्कि "कोंकणी भाषा के जनक" के रूप में भी जाना जाता है। 16वीं सदी में उन्होंने कोंकणी भाषा में धार्मिक गद्य लेखन की शुरुआत कर इस भाषा को साहित्यिक स्वरूप प्रदान किया। उनका योगदान कोंकणी भाषा के इतिहास में मील का पत्थर है और यह पुस्तकालय आज भी उनके नाम से कोंकणी भाषा की गौरवपूर्ण परंपरा को जीवंत रखे हुए है।

कोंकणी भाषा के विकास और उसके संवैधानिक दर्जे के पीछे रवींद्र केळकर जैसे विद्वानों का योगदान अतुलनीय रहा है। वे न केवल एक साहित्यकार थे, बल्कि कोंकणी भाषा आंदोलन के अग्रणी नेता भी थे। उनके सतत प्रयासों से गोवा विधानसभा ने 4 फरवरी 1987 को कोंकणी को राज्य की आधिकारिक भाषा घोषित किया। इसके बाद भारत सरकार ने 20 अगस्त 1992 को इसे संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया। रवींद्र केळकर को कोंकणी साहित्य के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार भी मिला और वे इस पुरस्कार को पाने वाले कोंकणी के पहले लेखक बने।

कोंकणी के अन्य प्रमुख भाषाविदों में मॅनुएल साना, जिन्होंने कोंकणी के व्याकरण और शब्दकोश पर काम किया, तथा दीनानाथ मंगेशकर, जिन्होंने भाषा शिक्षण और व्याकरणिक सामग्री तैयार की, के योगदान को भी भूला नहीं जा सकता। माधव बोरकर,

बी.बी. बोरकर, एस.के. भगत जैसे रचनाकारों ने कोंकणी को साहित्यिक स्तर पर समृद्ध किया।

कोंकणी भाषा का भविष्य आशान्वित है। सरकार और समाज दोनों स्तरों पर प्रयास हो रहे हैं कि इस भाषा को बचाया और बढ़ाया जाए। गोवा कोंकणी अकादमी, कोंकणी भाषा मंडल, ऑल इंडिया कोंकणी परिषद जैसी संस्थाएँ सक्रिय रूप से कोंकणी साहित्य, शब्दकोश, अनुवाद और युवा पीढ़ी के बीच जागरूकता के लिए काम कर रही हैं। कुछ निजी प्रयासों से अब कोंकणी में मोबाइल ऐप्स, वेबसाइट्स और यूट्यूब चैनलों के माध्यम से डिजिटल सामग्री भी उपलब्ध कराई जा रही है।

कोंकणी भाषा केवल एक बोलचाल का माध्यम नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक पहचान, ऐतिहासिक धरोहर और भाषावैज्ञानिक खजाना है। इसकी विविधता, व्याकरणिक समृद्धि और बहुलिपिक परंपरा इसे भारत की सबसे विशिष्ट भाषाओं में स्थान दिलाती है। हमें इस भाषा को केवल अतीत के दस्तावेजों में नहीं, बल्कि आने वाले कल की भाषा बनाने के लिए भी प्रयत्नशील रहना होगा। यह एक ऐसी भाषा है, जो समुद्र की लहरों, नारियल के वृक्षों और पश्चिमी घाटों की सांस्कृतिक गहराई में बसी हुई है।

कोंकणी भाषा की रक्षा केवल गोवा या कर्नाटक की जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि यह हम सभी भारतीयों का दायित्व है कि हम अपनी भाषाई विविधता को पहचानें, उसे संजोएं और उसे आने वाली पीढ़ियों तक जीवित रखें।

युवराज भोवर

नेपाली भाषा और हिंदी भाषा में व्याकरण के दृष्टिकोण से विश्लेषण

नेपाली भाषा, जिसे "गोरखाली" या "खस कुरो" भी कहा जाता है, नेपाल की आधिकारिक भाषा है और भारतीय उपमहाद्वीप में एक महत्वपूर्ण भाषा के रूप में जानी जाती है। यह भाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और इंडो-आर्यन भाषाओं के अंतर्गत आती है एवं इनमें कई समानताएँ पाई जाती हैं। फिर भी, दोनों भाषाओं के **व्याकरण, उच्चारण, शब्दावली, क्रियाओं के प्रयोग** और **सम्मान सूचक रूपों** में अनेक अंतर भी हैं।

भारत में नेपाली भाषा बोलने वालों की एक बड़ी आबादी है, विशेषकर उत्तर-पूर्वी राज्यों जैसे कि सिक्किम, पश्चिम बंगाल (मुख्यतः दार्जिलिंग), असम, उत्तराखंड के अलावा भूटान के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाती है। इसकी उत्पत्ति काठमांडू घाटी में स्थित न्यूअर समुदाय से मानी जाती है। ऐतिहासिक रूप से, न्यूअर समुदाय ने अपनी भाषा और संस्कृति को संरक्षित रखा है, जबकि बाहरी प्रभावों के बावजूद उन्होंने अपनी पहचान बनाए रखी है। नेपाली भाषा का इतिहास समृद्ध और विविधतापूर्ण रहा है, जिसमें सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक प्रभावों का मिश्रण देखने को मिल जाता है।

नेपाली में 11 स्वर और 33 व्यंजन हैं। स्वरों को इंडो-आर्यन भाषाओं के समान हस्व और दीर्घ रूपों में वर्गीकृत किया गया है। व्यंजन भी हिंदी की भांति 5 समूहों में वर्गीकृत हैं।

नेपाली भाषा भी संस्कृत से प्रभावित है और इसमें हिंदी तथा अन्य पहाड़ी भाषाओं का भी मिश्रण पाया जाता है। इसकी ध्वनि प्रणाली सरल है और इसमें स्पष्ट उच्चारण का विशेष महत्व है। नेपाली साहित्य ने भी बीसवीं सदी में तेज़ी से विकास किया, जिसमें कविता, उपन्यास, नाटक और निबंध जैसी विधाओं का योगदान रहा है। नेपाल 120 से अधिक जातीय समूहों का घर है, जिनमें से प्रत्येक की अपनी भाषा या बोली है। ये भाषाएँ अक्सर नेपाली की स्थानीय विविधता को प्रभावित करती हैं, जिसके परिणामस्वरूप भाषाई विविधता का एक समृद्ध विन्यास सामने आता है।

भारत में नेपाली भाषा केवल नेपाली मूल के लोगों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह उन क्षेत्रों में एक जीवंत सांस्कृतिक और भाषाई पहचान बन चुकी है जहाँ नेपाली भाषाई समुदाय बसते हैं। इन समुदायों का भारतीय समाज, राजनीति और संस्कृति में गहरा योगदान रहा है। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में उन भाषाओं को शामिल किया जाता है जिन्हें भारत सरकार आधिकारिक मान्यता देती है। सन् 1992 में 71वां संविधान संशोधन अधिनियम के तहत नेपाली भाषा को संथाली, मणिपुरी और कोंकणी के साथ आठवीं अनुसूची में शामिल किया गया। इस संशोधन का उद्देश्य भारतीय बहुभाषी समाज की विविधता को मान्यता देना और विभिन्न भाषायी समुदायों की सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित करना था।

अतः हम नीचे उल्लिखित तालिका के माध्यम से विस्तारपूर्वक **नेपाली और हिंदी व्याकरण के** प्रमुख अंतर एवं समानताओं की जानकारी प्रदान कर रहें है: -

क्र.सं.	**अंतर आधार**	**बिन्द**	**हिंदी**	**नेपाली**
1.	**लिपि (Script) का अंतर**	लिपि	देवनागरी	देवनागरी
		भिन्नता	लिपि समान है, लेकिन नेपाली में कुछ अतिरिक्त ध्वनियों और अक्षरों का प्रयोग होता है जैसे "ऋ" का उच्चारण भिन्न होता है।	
2.	**ध्वनि (Phonetics) और उच्चारण**	ध्वनि प्रणाली	अपेक्षाकृत सरल	कुछ ध्वनियाँ जैसे "झ", "ष" का उच्चारण हल्का होता है
		उच्चारण	स्पष्ट	कुछ ध्वनियाँ जैसे "झ", "ष" का उच्चारण हल्का होता है
	उदाहरण:	• हिंदी में: "क्या" → स्पष्ट 'क्या' • नेपाली में: "के" (अर्थ वही, लेकिन उच्चारण में फर्क है)		

क्र.सं.	अंतर आधार	बिन्द	हिंदी	नेपाली
3.	**व्याकरणिक लिंग (Grammatical Gender)**	लिंग	पुल्लिंग व स्त्रीलिंग	लिंग का निर्धारण अलग होता है
		वाक्य पर प्रभाव	लिंग के अनुसार क्रिया रूप बदलती हैं	नेपाली में क्रिया रूप पर लिंग का प्रभाव बहुत कम है
	उदाहरण:	• हिंदी: वह **गई** (स्त्रीलिंग) / वह **गया** (पुल्लिंग) • नेपाली: ऊ **गयो** (स्त्री या पुरुष, दोनों के लिए समान)		
4.	**वचन (Singular/ Plural)**	बहुवचन बनाने का तरीका	संज्ञा बदलती है (लड़का → लड़के)	संज्ञा + "हरू" (छोरा → छोराहरू)
	उदाहरण:	• हिंदी: लड़का → लड़के • नेपाली: छोरा → छोराहरू		
5.	**क्रिया रूपों का अंतर (Verb Conjugation)**	क्रिया में बदलाव	व्यक्ति, लिंग, वचन, काल के अनुसार	व्यक्ति, वचन, काल व सम्मान स्तर के अनुसार
		लिंग पर निर्भरता	अधिक	कम
	उदाहरण:	• हिंदी: "मैं गया", "मैं गई" • नेपाली: "म गइँ" (स्त्री), "म गएँ" (पुल्लिंग), लेकिन सम्मान में ज्यादा परिवर्तन दिखता है: ○ "तिमी जान्छौ" (तुम जाते हो) ○ "तपाईं जानुहुन्छ" (आप जाते हैं)		
6.	**सम्मान सूचक रूप (Honorific Forms)**	प्रयोग सीमित	"आप", "तुम", "तू"	अधिक विविध
		क्रिया भी बदलती है	क्रिया में कम बदलाव	क्रिया भी बदल जाती है

क्र.सं.	अंतर आधार	बिन्द	हिंदी	नेपाली
	उदाहरण:	• हिंदी: आप जाते हैं • नेपाली: ○ तिमी जान्छौ (तुम) ○ तपाईं जानुहुन्छ (आप) ○ हजुर जानुहुन्छ (बहुत उच्च सम्मान)		
7.	**प्रत्यय और उपसर्ग**	प्रत्यय	-ता, -पन, -ई	-ता, -ई, -पन, साथ ही स्थानीय रूप
		उपसर्ग	प्रायः संस्कृतनिष्ठ	प्रायः तिब्बती/ स्थानीय प्रभाव के साथ
8.	**शब्दावली (Vocabulary)**	मूल शब्द	संस्कृत, अरबी, फारसी	संस्कृत, तिब्बती, नेपाली लोक भाषाओं से
		विदेशी प्रभाव	फारसी-उर्दू	तिब्बती, तामांग, नेवार
	उदाहरण:	• हिंदी: विद्यालय, समय, प्रेम • नेपाली: बिद्यालय, समय, माया		
9.	**वाक्य संरचना (Sentence Structure)**	क्रम	विषय + क्रिया + कर्म (SOV)	विषय + कर्म + क्रिया (SOV)
		अंतर	संरचना मिलती-जुलती है	कभी-कभी कर्म पहले आता है
	उदाहरण:	• हिंदी: मैं खाना खाता हूँ। • नेपाली: म खाना खान्छु।		
10.	**नकारात्मक वाक्य (Negative Sentences)**		मैं नहीं गया।	म गएको छैन।

नेपाल भाषा (नेपाली) हिंदी से अलग क्यों है?

यह प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि **नेपाली और हिंदी दोनों भाषाएँ एक ही भाषा परिवार** से संबंधित होने के बावजूद कई स्तरों पर एक-दूसरे से **भिन्न** हैं। **परंतु नेपाली भाषा ने अपनी अनूठी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, भाषायी, व्याकरणिक और ध्वन्यात्मक पहचान बनाई है**, जो उसे हिंदी से अलग बनाती है।

सांस्कृतिक पहलू	हिंदी भाषा क्षेत्र	नेपाली भाषा क्षेत्र
साहित्यिक परंपरा	तुलसीदास, कबीर, प्रेमचंद, निराला, महादेवी वर्मा	भानुभक्त आचार्य, लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा, माधवप्रसाद घिमिरे
लोक साहित्य और गीत	आल्हा, बिरहा, कजरी, भजन, ग़ज़ल	ढोलकी गीत, टप्पा, भक्ति गीत, लोकगीत (गन्धर्व, मागर आदि)
लोक कथाएँ / पुराण	रामायण, महाभारत, पंचतंत्र	रामायण (नेपाली), भृकुटी कथा, स्वयम्भू पुराण
उत्सव (Festivals)	होली, दिवाली, रक्षाबंधन, दशहरा	दशैं, तिहार, छठ, माघे संक्रान्ति
सामाजिक रीतियाँ	विवाह में बारात, कन्यादान, हल्दी रस्म	विवाह में झुला, पोतेली, मंगलधुन, देउसी-भैलो
भाषा में आदर/ सम्मान	'आप', 'तुम', 'तू'	'तिमी', 'तपाईं', 'हजुर' (तीन स्तर का सम्मान)
भाषायी जड़ें	संस्कृत, फारसी, उर्दू, ब्रज, अवधी	संस्कृत, तिब्बती, किराँत, स्थानीय बोलियाँ
पहनावा (सांस्कृतिक)	धोती-कुर्ता, साड़ी, पगड़ी	दौरा-सुरुवाल, गुन्यु-चोली, ढाका टोपी
संगीत व वाद्ययंत्र	तबला, हारमोनियम, सितार	मादल, सारंगी, बासुरी, ढोलक
लोक नृत्य	कथक, भरतनाट्यम, झूमर	मारुनी, झ्याऊरे, साकेला
लिपि	देवनागरी	देवनागरी
भाषा का स्वरूप	संस्कृतनिष्ठ/उर्दूनिष्ठ दोनों	संस्कृतनिष्ठ और स्थानीय रूपों का मिश्रण
भाषा की भूमिका	भारत में संपर्क और राजभाषा	नेपाल में राजभाषा और राष्ट्रभाषा

नेपाली और हिंदी भाषा न केवल व्याकरण और उच्चारण में अलग हैं, बल्कि वे अपने-अपने क्षेत्र की गहरी सांस्कृतिक आत्मा को भी दर्शाती हैं।

हिंदी साहित्य में जहाँ भक्ति आंदोलन, समाज सुधार और आधुनिकता के प्रभाव स्पष्ट दिखाई देते हैं, वहीं नेपाली साहित्य और संस्कृति में हिमालयी लोकजीवन, धार्मिक विविधता और भाषायी समृद्धि की अनूठी झलक मिलती है। नेपाली भाषा और उसकी सूक्ष्मताओं को समझना केवल शब्दावली और व्याकरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी यात्रा है जिसमें उस भाषा को आकार देने वाले सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भों की गहरी सराहना भी शामिल है। अंग्रेज़ी भाषी लोगों के लिए नेपाली सीखना न केवल एक नई भाषा सीखने का अनुभव है, बल्कि यह विविध समुदायों, समृद्ध परंपराओं और गहन ज्ञान की दुनिया के द्वार भी खोलता है। जब कोई शिक्षार्थी इसकी भाषाई विशेषताओं, ध्वन्यात्मकता, व्याकरण, शब्दावली और सांस्कृतिक बारीकियों को आत्मसात करता है, तो वह नेपाली में प्रवाह प्राप्त करने की एक प्रेरणादायक और पुरस्कृत यात्रा पर अग्रसर हो जाता है।

नेपाली भाषा के संरक्षण और प्रचार-प्रसार के लिए विभिन्न आंदोलनों का आयोजन किया गया है। हाल के वर्षों में, नेपाल सरकार ने नेपाली भाषा को कुछ क्षेत्रों में आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दी है, जिससे इसके संरक्षण और विकास को बढ़ावा मिला है। नेपाली भाषा न केवल एक संचार का माध्यम है, बल्कि यह न्यूअर समुदाय की सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पहचान का प्रतीक भी है। इसके समृद्ध साहित्य, विविध उपभाषाएँ और संघर्षशील इतिहास ने इसे एक जीवित और गतिशील भाषा बना दिया है। भविष्य में, यदि इसे उचित संरक्षण और सम्मान मिलता है, तो यह अपनी सांस्कृतिक धरोहर को जीवित रखने में सक्षम रहेगी।

गृज नन्दन गुप्ता

मणिपुरी (मैतेई) भाषा की उत्पत्ति और विकास

भाषा हमारे जीवन और शिक्षा में एक बड़ी भूमिका निभाती है। यह समाज में हमारी बातचीत के हर पहलू में अभिव्यक्ति का माध्यम है। भाषा के माध्यम से ही मानव समाज संगठित होता है और उत्पादक तथा रचनात्मक गतिविधियों में संलग्न होता है। किसी भाषा का इतिहास मानव संस्कृति और सभ्यता के इतिहास का परिणाम होता है।

मणिपुरी (मैतेई) भाषा की उत्पत्ति

मणिपुरी भाषा, जिसे मैतेईलोन भी कहा जाता है, मणिपुर राज्य की आधिकारिक भाषा है। मणिपुरी भाषा दक्षिण पूर्व एशिया की सबसे पुरानी भाषाओं में से एक है, जिसकी अपनी लिपि और लिखित साहित्य है। इसकी लिपि को मणिपुरी लिपि या मैतेई मयेक के नाम से जाना जाता है। मैतेईलोन एक इंडो-आर्यन भाषा है। इंडो-आर्यन चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में मणिपुर आए और मणिपुर घाटी में बस गए। इंडो-आर्यन का विस्तार एक लंबी कहानी है। वे काबुल नदी के किनारे बसे और पाकिस्तान और पंजाब तक पहुँचे। सुरमा नदी के मार्ग का अनुसरण करते हुए वे बराक घाटी पहुँचे। बराक नदी मणिपुर के सेनापति जिले से निकलती है। इंडो-आर्यन मणिपुर पहुँचे और वहाँ बस गए।

मणिपुर में इंडो-आर्यन के पहले बसने वाले लोग संस्कृत बोलते थे। बाद में बसने वाले प्राकृत बोलते थे। कालांतर में वे अपभ्रंश बोलने लगे। अपभ्रंश लगभग छठी शताब्दी ईस्वी तक मणिपुर में अस्तित्व में आई। अपभ्रंश और मंगोलॉयड भाषा के संयोजन से लगभग 1074 ईस्वी तक मणिपुरी भाषा का जन्म हुआ।

मणिपुरी लिपि (मैतेई मयेक)

मणिपुरी लिपि को लोकप्रिय रूप से मैतेई मयेक के नाम से जाना जाता है, जो पहली शताब्दी ईस्वी से अस्तित्व में है। वूरा कोंथौबा (568-658 ईस्वी) और लैरेनबा (1394-99 ईस्वी) के सिक्कों में प्राचीन मणिपुरी लिपि मिली है, जो छठी शताब्दी ईस्वी से पहले मणिपुरी वर्णमाला के परिचय के बारे में बहुमूल्य जानकारी देती है। प्राचीन मैतेई अभिलेख केवल मैतेई मयेक में थे। यह 18वीं शताब्दी से संस्कृत मूल की इंडो-आर्यन भाषा और 19वीं शताब्दी में अंग्रेजी भाषा से प्रभावित हुई है।

मणिपुरी भाषा का महत्व (मैतेईलोन)

मणिपुरी भाषा को सूचना और प्रसारण मंत्रालय द्वारा ऑल इंडिया रेडियो, इंफाल (1963) और सिलचर (1978) की भाषा के रूप में मान्यता दी गई है, जिसमें 78% कार्यक्रमों का कवरेज शामिल है। 1762 ईस्वी में मणिपुर के राजा गौराश्याम और ईस्ट इंडिया कंपनी के बीच हुई संधि, 1820 ईस्वी में मणिपुर पर वाल्टर हैमिल्टन रिपोर्ट में, इस भाषा को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दी गई। इसे सीबीएसई द्वारा आधुनिक भारतीय भाषा के विषय के रूप में मान्यता दी गई है। इसे स्नातक स्तर तक आधुनिक भारतीय भाषा और वैकल्पिक भाषा के विषय के रूप में पढ़ाया जाता है और स्नातकोत्तर, एमफिल और पीएचडी तक आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है।

मणिपुरी भाषा आंदोलन

मणिपुर राज्य को शुरुआती समय से लेकर 18वीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक मेइत्राबक या कांगलेइपाक के नाम से जाना जाता था। मणिपुर का वर्तमान नाम 300 साल से भी कम पुराना है। 18वीं सदी के पूर्वार्ध में राजा पामहेइबा उर्फ गरीबनिवास (1709-48 ईस्वी) के शासनकाल के दौरान इस नाम को बदला गया था। उनके शासनकाल में वैष्णव धर्म को राज्य धर्म घोषित किया गया था और लेखन उद्देश्यों के लिए बंगाली लिपि का प्रारंभ हुआ। बाद में मैतेई राजा द्वारा बंगाली लिपि को राज्य-स्वामित्व वाली लिपि के रूप में लागू किया गया, जिसने पहले की मैतेई लिपि की जगह ले ली

मणिपुर में शिक्षा के माध्यम और विषय के रूप में मणिपुरी भाषा की शुरूआत के लिए आंदोलन

मणिपुर में आधुनिक शिक्षा की शुरुआत के बाद से शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी और बंगाली था। 15 मई 1907 ईस्वी को, सर चुरचंद सिंह ने दरबार की जिम्मेदारी संभाली और निचले प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा को पढ़ाने का संकल्प लिया। मणिपुरी भाषा को पहली बार 1924 ईस्वी में कलकत्ता विश्वविद्यालय के तहत मणिपुर में मैट्रिकुलेशन स्तर तक एक स्थानीय भाषा के रूप में पेश किया गया था। मणिपुरी भाषा को पहली बार 26 अक्टूबर 1976 को इंफाल में अधिसूचना संख्या CS/7 के अनुसार 1977 से मणिपुर में मैट्रिकुलेशन स्तर तक शिक्षा के माध्यम के रूप में पेश किया गया था।

आठवीं अनुसूची में मणिपुरी भाषा की मान्यता के लिए आंदोलन

यह आंदोलन 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में शुरू हुआ। मणिपुर, असम और देश

के विभिन्न हिस्सों में रहने वाले मणिपुरी लोगों ने इस आंदोलन में भाग लिया। जनसभा, संगोष्ठी, सेमिनार आयोजित करने जैसे विभिन्न लोकतांत्रिक आंदोलन किए गए। वर्ष 1989 में 25 दिसंबर को इंफाल में मणिपुरी भाषा मांग समन्वय समिति के नाम से एक शक्तिशाली समन्वय समिति का गठन किया गया था। असम और त्रिपुरा से भी समर्थन मिला। परिणामस्वरूप, 20 अगस्त 1992 को, भारतीय संविधान के 71वें संशोधन द्वारा मणिपुरी भाषा को भारत की आठवीं अनुसूची भाषाओं में से एक के रूप में मान्यता दी गई।

लिपि के लिए आंदोलन

मणिपुरी लिपि के आंदोलन को अंदर और बाहर से कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। 16 नवंबर 1978 को, कांगलीपाक आइक कोनबा फामटन लुप नामक संगठन ने ऑल मणिपुर स्टूडेंट यूनियन (AMSU) के सहयोग से एक मैतेई मयेक विशेषज्ञ समिति (MMEC) का गठन किया। समिति ने कुछ मैतेई धर्मग्रंथों और पुयाओं का विश्लेषण करने के बाद, अंततः 27 वर्णों को मंजूरी दी, जिसमें 18 प्रमुख वर्ण और 9 व्युत्पन्न "लोम आइक" शामिल थे। संगठन की नीतियों के अनुसरण में, मणिपुर सरकार ने 12 अप्रैल 1979 को मणिपुर आधिकारिक भाषा विधेयक पारित किया, जिसमें मणिपुरी भाषा को आधिकारिक उद्देश्य के लिए भाषा घोषित किया गया और 22 अप्रैल 1980 को मणिपुर राजपत्र में सूचीबद्ध किया। 19 जनवरी 1983 को, मणिपुर के शिक्षा विभाग ने कक्षा VI के छात्रों के लिए पाठ्यपुस्तक के रूप में "मैतेई मायेक तमनाब मापी लैरिक" निर्धारित किया और अब इसे मणिपुर राज्य के प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर के स्कूलों में शुरू किया गया है। इसका प्रयोग राज्य में आधिकारिक उद्देश्यों के लिए भी किया जाता है।

इसलिए, मणिपुरी भाषा दक्षिण पूर्व एशिया की सबसे पुरानी भाषाओं में से एक है, जिसकी अपनी लिपि और लिखित साहित्य है और यह भारत की आठवीं अनुसूची की 22 भाषाओं में से एक है।

ख़ुमनथेम बेंकिन देवी

पहाड़ी अंचल की वाणी: डोगरी भाषा

डोगरी भाषा भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र, विशेषकर जम्मू और आसपास के प्रांतों में बोली जाने वाली एक प्रमुख क्षेत्रीय भाषा है। इसका एक समृद्ध ऐतिहासिक और सांस्कृतिक आधार है, जो इसे उत्तर भारत की अन्य भाषाओं से विशिष्ट बनाता है। 2003 से यह भाषा भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल 22 आधिकारिक भाषाओं में से एक है। डोगरी भाषा की उत्पत्ति आर्य भाषाओं की परंपरा से जुड़ी हुई है और इसका विकास जम्मू क्षेत्र की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और भौगोलिक विविधता के बीच हुआ है।

आज यह भाषा न केवल बोलचाल की भाषा है, बल्कि साहित्य, कला और पहचान का भी मजबूत माध्यम है।

उत्पत्ति और इतिहास:

भाषा परिवार: डोगरी भाषा हिंद-आर्य भाषा परिवार की सदस्य है, जो संस्कृत से उत्पन्न भाषाओं का समूह है। यह विशेष रूप से पश्चिमी पहाड़ी उपशाखा से संबंधित है।डोगरी को पहले पहाड़ी या पहाड़ी हिंदी के नाम से भी जाना जाता था। इसकी जड़ें संस्कृत और प्राकृत भाषाओं में पाई जाती हैं। मूल शब्द 'डुग्गर' से "डोगरी" शब्द बना है, जिसका अर्थ है पहाड़ी क्षेत्र। 'डुग्गर' शब्द के बारे में विद्वानों में अलग-अलग मत हैं, लेकिन यह आमतौर पर जम्मू क्षेत्र के लिए प्रयुक्त होता रहा है।डोगरी साहित्य की परंपरा लोकगीतों, कहावतों और वीरगाथाओं से शुरू हुई, जो इस क्षेत्र की सांस्कृतिक धरोहर को दर्शाते हैं।डोगरी भाषा भारतीय-आर्य भाषाओं (Indo-Aryan group) की एक उपशाखा है।यह हिंदी, पंजाबी और पहाड़ी भाषाओं से भाषिक रूप से जुड़ी हुई है।यह पहाड़ी भाषाओं के पश्चिमी वर्ग में आती है, जिन्हें "हिमालयी भाषाएँ" भी कहा जाता है।

नाम 'डोगरी' की उत्पत्ति:

"डोगरी" शब्द 'डुग्गर' से निकला है, जो जम्मू क्षेत्र का ऐतिहासिक नाम माना जाता है।'डुग्गर' शब्द की उत्पत्ति को लेकर कई मत हैं, एक मान्यता के अनुसार यह संस्कृत के "दुर्ग" (किला) से बना है, क्योंकि जम्मू क्षेत्र में किलों की भरमार थी।

ऐतिहासिक विकास:

प्राचीन काल में, डोगरी भाषा ब्राह्मी और फिर शारदा लिपि में लिखी जाती थी।पहले डोगरी भाषा को टाकरी लिपि में लिखा जाता था।वर्तमान में इसे देवनागरी लिपि में लिखा

जाता है।इस भाषा पर संस्कृत, पंजाबी, उर्दू और पहाड़ी बोलियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। मध्यकाल में यह भाषा लोकगीतों, लोककथाओं और कविताओं के माध्यम से समृद्ध हुई।19वीं सदी में डोगरी ने एक साहित्यिक रूप लेना शुरू किया।1970 में डोगरी को साहित्य अकादमी पुरस्कार मिलना प्रारंभ हुआ। 2003 में भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में डोगरी को आधिकारिक मान्यता मिली। इसके बाद डोगरी में शिक्षा, साहित्य, मीडिया और सरकारी कार्य में इसका प्रयोग बढ़ा। डोगरी में लिखित साहित्य की परंपरा भी बहुत पुरानी है – विशेषकर लोककवि कुंवर वचन और ध्यान सिंह जैसे रचनाकारों द्वारा।

डोगरी भाषा की बोलियाँ

डोगरी भाषा की कुछ क्षेत्रीय विविधताएँ पाई जाती हैं जिन्हें डोगरी की उपबोलियाँ या क्षेत्रीय बोलियाँ कहा जा सकता है। ये बोलियाँ जम्मू क्षेत्र और उसके आसपास के इलाकों में बोली जाती हैं। डोगरी भाषा की ये विविध बोलियाँ उस क्षेत्रीय और सांस्कृतिक विविधता को दर्शाती हैं जो जम्मू और आसपास के इलाकों में पाई जाती है। इन बोलियों ने डोगरी भाषा को जीवंत और समृद्ध बनाए रखा है।

डोगरी भाषा की प्रमुख बोलियाँ:

जम्मू डोगरी-यह सबसे शुद्ध और मानक रूप माना जाता है। यही रूप शिक्षा, साहित्य और सरकारी उपयोग में प्रचलित है। जम्मू शहर और उसके आसपास के क्षेत्रों में बोली जाती है।

कठुआ डोगरी-कठुआ जिले में बोली जाने वाली डोगरी में कुछ पंजाबी प्रभाव देखा जा सकता है। उच्चारण और शब्दों में थोड़ी भिन्नता होती है।

उधमपुर डोगरी-उधमपुर और रामनगर क्षेत्र में बोली जाती है। इसमें पहाड़ी और कश्मीरी प्रभाव मिलते हैं।

डोडा/भद्रवाह क्षेत्र की डोगरी-इस क्षेत्र में बोली जाने वाली डोगरी पर कश्मीरी और गोजरी का असर होता है। स्थानीय लोग इसे कभी-कभी "भद्रवाही" भी कहते हैं, जो स्वतंत्र रूप से एक बोली के रूप में देखी जाती है।

पुंछ-राजौरी डोगरी-इस क्षेत्र में बोली जाने वाली डोगरी में पंजाबी, पहाड़ी और पश्तो के तत्व देखने को मिलते हैं। यह भाषा मिलीजुली शैली में बोली जाती है और थोड़ी कठिन लग सकती है।

हिमाचली प्रभाव वाली डोगरी-चंबा और हिमाचल के सीमावर्ती क्षेत्रों में डोगरी की बोली में हिमाचली भाषाओं का असर दिखाई देता है।

डोगरी भाषा की बारहखड़ी

डोगरी भाषा की लिपि आजकल मुख्य रूप से देवनागरी है, इसलिए इसकी वर्णमाला (व्यंजन + स्वर के मेल से बनी ध्वनियाँ) भी हिंदी की तरह ही होती है। तथापि उच्चारण में कुछ स्थानों पर स्थानीयता झलकती है, लेकिन लिप्यंतरण और अक्षरों का स्वरूप समान रहता है।

डोगरी साहित्य की विशेषताएँ –

डोगरी भाषा का साहित्यिक इतिहास समृद्ध और विविधतापूर्ण है। इसमें लोक साहित्य से लेकर आधुनिक गद्य-कविता तक अनेक विधाओं में लेखन हुआ है। डोगरी साहित्य में लोकसंस्कृति , प्रेम वीरता और प्रकृति का सुंदर चित्रण पाया जाता है। डोगरी कविता और गीतों में पहाड़ी संस्कृति और भाषिक लयात्मकता की विशेष छाप दिखाई पड़ती है। स्वतंत्रता आंदोलन और सामाजिक चेतना को उभारने में साहित्यकारों की सक्रिय भूमिका रही है। डोगरी साहित्य की भाषा सरल, सहज और बोलचाल की होती है , जिससे पाठक उससे भावनात्मक रूप से जुड़ जाता है। इसमें मुहावरों, कहावतों और लोकगीतों का प्रभाव देखने को मिलता है। इस साहित्य में लोक देवी देवताओं, पौराणिक कथाओं और भक्ति भावना की भी प्रमुखता है, क्योंकि इसकी जड़ें धार्मिक एवं आध्यात्मिक परम्पराओं से जुड़ी हुई दिखती है। आधुनिक डोगरी साहित्य में महिलाओं की स्थिति, अधिकारों और संघर्षों पर भी विशेष ध्यान दिया गया है। स्त्री केन्द्रित रचनाएँ चेतना को उजागर करती हैं।

डोगरी साहित्य में विधाएँ

- कविता: प्रेम, प्रकृति, वीरता और सामाजिक मुद्दों पर आधारित।
- कहानी और उपन्यास: ग्रामीण जीवन, संघर्ष, संस्कृति और परंपराओं पर आधारित।
- नाटक: सामाजिक और ऐतिहासिक घटनाओं को मंच पर लाने वाले।
- लोक साहित्य: लोकगीत, कहावतें, किस्से-कहानियाँ जो डोगरी संस्कृति की आत्मा हैं।

मुख्य डोगरी गद्य साहित्यकार एवं उनके कार्य

पद्मा सचदेव को डोगरी साहित्य की पहली आधुनिक महिला कवयित्री माना जाता है। डोगरी साहित्य को पहली बार(1971) साहित्य अकादमी पुरस्कार दिलवाने का श्रेय भी पद्मा सचदेव को जाता है। अन्य प्रमुख साहित्यकार और उनकी रचनाएँ कुछ इस प्रकार हैं:

साहित्यकार	गद्य विधा	प्रमुख गद्य कृतियाँ / कार्य
पद्मा सचदेव	आत्मकथा, लेख, संस्मरण	भाषा ते ज़िंदगी (आत्मकथा), संस्मरणात्मक लेखन
डॉ. केसर	आलोचना, इतिहास	डोगरी भाषा ते साहित्य दा इतिहास, निबंध लेखन
नीलम सरीन	कहानी, निबंध	झांझर दी झंकार (कहानी संग्रह), छांव ते धूप
ओम गोस्वामी	उपन्यास, नाटक	तलाश (उपन्यास),गुजरे पल (नाट्य शैली में)
चौधरी लाल सिंह	नाटक, लोकनाट्य	बांठ नाटकों का संकलन, डोगरी लोक परंपरा पर आधारित गद्य रचनाएँ
हरनाथ	व्यंग्य, निबंध	हस्सा-हस्सा, बोल दी दीवार (हास्य-व्यंग्यात्मक लेख)
आर.एल. शास्त्री	अनुवाद, गद्य निबंध	गीतांजलि का डोगरी अनुवाद, साहित्यिक निबंध
वेद राही	कहानी, पटकथा	अंतिम अरमान, गुल गुलशन गुलफाम (डोगरी टीवी पटकथा)
डी.सी. प्रभाकर	कहानी, लेख	प्रेम पत्तर,सच्चियाँ गल्लाँ (सामाजिक विषयों पर केंद्रित)

साहिल प्रोच

बोडो भाषा: उत्तर-पूर्वी भारत की भाषाई पहचान

भारत अद्वितीय भाषाई विविधताओं का देश है जहां विभिन्न क्षेत्रीय भाषाएँ न केवल संचार व विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम हैं पर क्षेत्र विशेष की संस्कृति व पहचान की धरोहर हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी समाज विशेष के रीति-रिवाज, परंपरा और जीवनशैली को संरक्षित और संप्रेषित करती हैं। इसी संदर्भ में देश की कुल 22 ऐसी समृद्ध क्षेत्रीय भाषाओं को भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में मान्यता प्राप्त है और उन में से एक है – बोडो भाषा जो असम की सह -राजभाषा भी है। बोडो भाषा का उद्भव, विकास और वर्तमान स्थिति असम के भाषाई और सामाजिक परिदृश्य का अभिन्न अंग है क्योंकि बोडो भाषा बोडो जनजाति की समृद्ध संस्कृति, इतिहास और पहचान का प्रतीक है।

बोडो भाषा का उद्भव:

बोडो भाषा का उद्भव अत्यंत प्राचीन है। यह तिब्बती-बर्मी भाषा परिवार की सदस्य है और विशेष रूप से बोडो-गारो उपसमूह से संबंधित है जो इंडो-आर्यन भाषाओं से भिन्न है। भाषाई विद्वानों का मत है कि बोडो भाषा तिब्बती-बर्मी परिवार की "बोडो-गारो" उप-शाखा से आती है। यह उप-शाखा कई अन्य संबंधित भाषाओं को समाहित करती है जैसे दिमासा, कोच, राभा, गारो, तिवा (लालुंग), मिसिंग, मोरान और चुटिया। यह भाषाई संबंध इंगित करता है कि इन जनजातियों का एक साझा भाषाई और संभवतः सांस्कृतिक मूल रहा होगा। बोडो जनजाति की सांस्कृतिक पहचान का एक अभिन्न अंग होने के नाते, इस भाषा का एक समृद्ध और संघर्षपूर्ण इतिहास रहा है।

यह माना जाता है कि बोडो भाषी समुदाय, सदियों पहले मध्य एशिया से उत्तरी और उत्तर-पूर्वी भारत में प्रवास कर चुके थे और असम के ब्रह्मपुत्र घाटी में उनका आगमन, उनकी भाषा के उद्भव और इस क्षेत्र में उसके प्रसार का एक महत्वपूर्ण कारक था। "बोडो" शब्द की कई व्याख्याएं हैं, लेकिन सामान्य तौर पर, बोडो शब्द जातीय भाषा विज्ञान संबंधी पहचान को संदर्भित करता है। प्रारम्भ में ब्रिटिश रिकॉर्ड में इसे "बोरो" लिखा गया था, और दोनों संस्करण बोडो और बोरो आज भी उपयोग में हैं, तथापि आधिकारिक संदर्भ में "बोडो" अधिक आम है।

क्षेत्रीय विविधता और उच्चारण में अंतर:

पारस्परिक रूप से समझने योग्य होने के बावजूद बोडो भाषा में क्षेत्रीय विविधता और उच्चारण व स्वर में अंतर उल्लेखनीय है।

पश्चिमी बोडो (कोकराझार, चिरांग, बक्सा) जिसे "गोलपारा" के नाम में जाना जाता है और इसे मानक बोडो बोली माना जाता है। साहित्यिक कार्यों, मीडिया और शिक्षा में इसका प्रयोग किया जाता है। यह असमिया से प्रभावित लेकिन कई शास्त्रीय बोडो तत्वों को बरकरार रखता है। अक्सर स्कूलों और विश्वविद्यालयों में इसका उपयोग किया जाता है, अतः पश्चिमी बोडो को सबसे "प्रतिष्ठा" वाली बोली कहा जाता है।

पूर्वी बोडो (उदलगुड़ी, सोनितपुर), जिसे "संजारी" के नाम से जाना जाता है: इस बोली पर सीमावर्ती क्षेत्रों की असमिया और यहां तक कि नेपाली का मजबूत प्रभाव दिखता है। इसका उच्चारण थोड़ा नरम होता है, और कुछ शब्दावली पश्चिमी किस्म से भिन्न होती है।

कामरूप जिले में और उसके आसपास बोली जाने वाली बोडो भाषा को "कामरुपिया" कहा जाता है। इस पर असमिया भाषा का मजबूत प्रभाव दिखता है।

पहाड़ी बोडो (अरुणाचल प्रदेश और मेघालय के कुछ हिस्सों में): इस बोली पर असमिया प्रभाव कम है और पुरानी तिब्बती-बर्मी विशेषताएँ बरकरार हैं। स्वर और संरचना में गारो या दिमासा जैसी अन्य जनजातीय भाषाओं के करीब है।

बंगाल और नेपाल सीमा बोडो, जिसे "बर्दन" के नाम से जाना जाता है: पश्चिम बंगाल और भारत-नेपाल सीमा के पास बोडो भाषी समुदाय भारी बंगाली या हिंदी विभक्ति के साथ बोलते हैं, खासकर कोड-मिश्रित भाषण में। इन विविधताओं के बावजूद, शिक्षा, मीडिया और साहित्य के माध्यम से मानकीकरण ने बोडो के एकीकृत रूप को संरक्षित करने में मदद की है।

बोडो भाषा की भौगोलिक स्थिति:

बोडो भाषा मुख्य रूप से असम में बोली जाती है, विशेष रूप से बोडोलैंड प्रादेशिक क्षेत्र (बीटीआर) में, जिसमें शामिल हैं: कोकराझार, चिरांग, बक्सा, उदलगुरी, धेमाजी, लखीमपुर, बारपेटा, नलबाड़ी, सोनितपुर (असम), गोलपाड़ा, धुबरी के कुछ भाग। अरुणाचल प्रदेश (मुख्य रूप से असम की सीमा से) मेघालय (सीमावर्ती गांवों में) पश्चिम

बंगाल (विशेषकर बोडो प्रवासियों वाले क्षेत्रों में) नागालैंड और त्रिपुरा (छोटे इलाकों में) नेपाल और भूटान (कुछ प्रवासी समुदायों के बीच)

बोडो भाषा का विकास: बाहरी प्रभावों से आत्मसात और पहचान की तलाश

बोडो भाषा का विकास एक सीधी रेखा में नहीं हुआ, बल्कि यह विभिन्न ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनीतिक कारकों से प्रभावित रहा है। प्रारंभिक काल में, बोडो भाषा पूरी तरह से मौखिक परंपरा पर आधारित थी। लोक कथाएं, गीत, अनुष्ठान और सामाजिक ज्ञान पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक रूप से हस्तांतरित होते थे, जिसने भाषा को उसकी मौलिक संरचना और शब्दावली को बनाए रखने में मदद की। इस अवधि में, भाषा का कोई लिखित स्वरूप नहीं था, फिर भी बोडो भाषा बोडो समुदाय की सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र थी। इस अवधि में बोडो समाज ने अपनी मौखिक परंपराओं के माध्यम से अपने इतिहास, दर्शन और ज्ञान को संरक्षित रखा।

मध्यकाल में बोडो भाषी क्षेत्रों का संपर्क पड़ोसी इंडो-आर्यन भाषाओं, विशेषकर असमिया और बंगाली से हुआ। इस संपर्क के परिणामस्वरूप बोडो भाषा में कुछ असमिया और बंगाली शब्द आत्मसात हुए और कुछ हद तक वाक्य संरचना पर भी प्रभाव पड़ा। तथापि, बोडो भाषा ने अपनी मूल व्याकरणिक संरचना और अधिकांश शब्दावली को बनाए रखा, जो उसकी मजबूती का प्रमाण है। इस दौरान, बोडो जनजाति के राजनीतिक और सामाजिक ढांचे में भी बदलाव आए, जिससे उनकी भाषा और संस्कृति पर भी प्रभाव पड़ा। हालांकि, लिखित रूप की कमी के कारण, इस अवधि के भाषाई विकास का विस्तृत विवरण उपलब्ध नहीं है।

हालांकि, परंपरागत रूप "देवधाई" को बोडो भाषा की लिखित लिपि के रूप में जाना जाता है, तथापि, कोई रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं है। बोडो भाषा के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण मोड़ लिपि का विकास था। 19वीं और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में, ईसाई मिशनरियों ने बोडो क्षेत्र में प्रवेश किया और शिक्षा तथा इंजील प्रचार के लिए बोडो भाषा को लिखित रूप देने की आवश्यकता महसूस की। शुरुआत में मिशनरियों ने बोडो भाषा को लिखने के लिए रोमन लिपि का उपयोग किया और रोमन लिपि में बोडो भाषा की कुछ प्रारंभिक पुस्तकें और धार्मिक सामग्री प्रकाशित हुई। यह बोडो भाषा के लिखित विकास का पहला चरण था। बोडो समाज द्वारा रोमन लिपि को मान्यता के लिए असम सरकार के समक्ष रखा गया लेकिन इसे असम सरकार ने मान्यता नहीं दी।

बाद में, असमिया के साथ निकटता के कारण, कई बोडो भाषी लोगों ने असमिया लिपि का उपयोग करना शुरू कर दिया। असमिया लिपि में कई पाठ्य पुस्तकें और साहित्यिक सामग्री प्रकाशित हुई। लेकिन बोडो लोगों को आसामिया भाषा के बढ़ते प्रभाव से अपने अस्तित्व खोने का संदेह होने लगा और बोडो भाषा के लिए एक स्वतंत्र और प्रतिष्ठित लिपि की आवश्यकता महसूस करने लगे। 1960 और 70 के दशक में, बोडो समुदाय ने अपनी भाषाई और सांस्कृतिक पहचान के लिए एक बड़ा आंदोलन छेड़ा, जिसे "बोडो लिपि आंदोलन" के नाम से जाना जाता है। कई बोडो संगठनों, विशेष रूप से, बोडो साहित्य सभा, एबीएसयू और कई बोडो राजनीतिक दलों ने बोडो भाषा को विकसित करने और बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बोडो साहित्य सभा की स्थापना 1952 में हुई थी और इसने बोडो भाषा, साहित्य और संस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

वर्षों के संघर्ष, प्रदर्शनों और सरकारी वार्ताओं के बाद 1974 में भारत सरकार ने बोडो भाषा के लिए आधिकारिक तौर पर देवनागरी लिपि को स्वीकार कर लिया। यह बोडो भाषा के इतिहास में एक युगांतकारी घटना थी, जिसने उसे एक नई पहचान और गरिमा प्रदान की। देवनागरी लिपि ने भाषा को व्यापक पहुंच प्रदान की और मानक लेखन को बढ़ावा दिया।

कई वर्षों के संघर्ष, विरोध प्रदर्शनों और सरकार के साथ बातचीत के बाद, 1974 में भारत सरकार ने बोडो भाषा के लिए देवनागरी लिपि को आधिकारिक तौर पर स्वीकार कर लिया। यह बोडो भाषा के इतिहास में एक मील का पत्थर था, जिसने इसे एक नई पहचान दी।

मान्यता और संवैधानिक स्थिति: बोडो भाषा की विजय

देवनागरी लिपि को अपनाने के बाद, बोडो भाषा को राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दिलाने के लिए प्रयास तेज हुए।

1980 के दशक में, बोडो भाषा को असम राज्य में एक सहयोगी आधिकारिक भाषा का दर्जा दिया गया अर्थात् आज बोडो असम की सह-राजभाषा है।

बोडो भाषा के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण मोड़ 2003 में आया, जब इसे भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची में शामिल किया गया। यह बोडो समुदाय के लिए एक बड़ी

विजय थी और इससे बोडो भाषा को भारत की प्रमुख भाषाओं में से एक के रूप में संवैधानिक मान्यता प्राप्त हुई। 8वीं अनुसूची में शामिल होने से बोडो भाषा को केंद्र सरकार से वित्तीय सहायता, शैक्षणिक संस्थानों में प्रोत्साहन और साहित्यिक विकास के लिए विभिन्न योजनाएं प्राप्त हुईं।

वर्तमान स्थिति और भविष्य की चुनौतियां

असम में बोडो भाषा का उद्भव और विकास एक लंबी और प्रेरणादायक यात्रा है। यह भाषाई लचीलेपन, सांस्कृतिक पहचान के लिए संघर्ष और अंततः विजय की कहानी है। मौखिक परंपराओं से लेकर संवैधानिक मान्यता तक, बोडो भाषा ने न केवल अपनी सांस्कृतिक जड़ों को बनाए रखा है, बल्कि आधुनिक संदर्भ में भी अपनी जगह बनाई है। आज, बोडो भाषा असम के बोडोलैंड प्रादेशिक क्षेत्र की आधिकारिक भाषा है। इसे स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाया जाता है, और बोडो साहित्य में कविता, कहानी, उपन्यास और नाटक सहित विभिन्न विधाओं में महत्वपूर्ण कार्य हो रहे हैं। बोडो साहित्य सभा और अन्य संगठन भाषा के विकास और प्रचार-प्रसार के लिए सक्रिय रूप से काम कर रहे हैं।

हालांकि, बोडो भाषा अभी भी कुछ चुनौतियों का सामना कर रही है। शहरीकरण, अन्य प्रमुख भाषाओं का प्रभाव, और युवाओं के बीच भाषा के उपयोग में कमी इसकी स्थिरता के लिए खतरे पैदा कर सकती है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए, भाषा के प्रयोग को बढ़ावा देना, शिक्षा में उसकी भूमिका को मजबूत करना, और डिजिटल माध्यमों में उसकी उपस्थिति को बढ़ाना आवश्यक है और इसके निरंतर विकास और संरक्षण के लिए सामूहिक प्रयास अपरिहार्य है ताकि बोडो भाषा भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक जीवंत विरासत बनी रहे।

पौलुस मोसाहारी

सहज, सरस और सुरीली - मैथिली

मैथिली सन् 2002 में संविधान की आधिकारिक भाषा के रूप में सम्मिलित 8वीं अनुसूची की एक भाषा ही नहीं अपितु यह 8वीं अनुसूची में शामिल 22 भाषाओं में से 4 विशेष भाषाओं (तमिल, उर्दू, नेपाली और मैथिली) की श्रेणी में आती है जिसे भारत के अलावा विदेशों में संविधान की भाषाओं के रूप में अंगीकार किया है। यह भारत के विशाल भू-भाग में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है जो नेपाल में दूसरी सबसे अधिक बोली जा रही भाषा भी है। नेपाल सहित उत्तर भारत के लगभग 42 मिलियन लोगों द्वारा बोली जाने वाली यह एक साहित्यिक भाषा है जो हिंदी की एक उपभाषा 'बिहारी' की एक बोली है। इसकी लिपि मूल रूप से देवनागरी है। भारत की प्राचीन भाषा 'इंडो-आर्यन' से अवतरित इस भाषा में भी हिंदी की तरह दूसरी भाषाओं के शब्दों को अपनाने की अपार क्षमता है। भाषायी तौर पर हिंदी (जिससे इसकी लगभग 65 प्रतिशत शब्दावली आती है), बांग्ला, असमिया, उड़िया, एवं नेपाली से इसका काफी निकट संबंध है। अगर वैश्विक स्तर पर देखा जाए तो सन् 2007 में नेपाल ने इसे अपने संविधान की अन्तरिम भाषाओं के रूप में अंगीकार किया, जो इसे 22 भाषाओँ में से 4 विशेष भाषाओँ की श्रेणी में लाता है। नेपाली भाषा आयोग ने मैथिली को कोशी प्रांत और मद्धेश प्रांत में प्रशासनिक कार्यों के लिए प्रयोग की जाने वाली आधिकारिक भाषा बना दिया है। मार्च, 2018 में मैथिली को भारतीय राज्य झारखंड में दूसरी आधिकारिक भाषा का दर्जा मिल गया है। श्री गोपाल जी ठाकुर जो कि लोकसभा सदस्य हैं ने पहली बार भारतीय संसद में मैथिली भाषा में अपना व्याख्यान दिया। दिनांक 26 नवंबर, 2024 को संविधान दिवस के अवसर पर भारत की राष्ट्रपति श्रीमती द्रोपदी मुर्मू ने भारतीय संविधान के मैथिली संस्करण का लोकार्पण किया। मैथिली भाषा आज साहित्य अकादमी, मैथिली अकादमी, मैथिली-भोजपुरी अकादमी, नेपाली अकादमी जैसी कई प्रतिष्ठित संस्थाओं द्वारा विनियमित होता है। अब आप यूपीएससी जैसी परीक्षाओं में भी मैथिली भाषा का वैकल्पिक विषय के रूप में चयन कर सकते हैं।

मैथिली केवल एक भाषा नहीं, बल्कि मिथिला की संस्कृति है, आत्मा है। कहा भी जाता है कि मैथिली दुनिया की सभी भाषाओं की तुलना में सबसे मधुर व मैत्रीपूर्ण भाषा है। इसके भीतर रामायण-महाभारत से लेकर लोकगीतों और पान-सुपारी की परंपरा तक का

अद्‌भुत समावेश है। आज मैथिली भाषा स्कूलों, विश्वविद्यालयों, रेडियो, टेलीविज़न और सोशल मीडिया के माध्यम से एक बार फिर नए युग की ओर बढ़ रही है। कहा भी गया है :

"मिथिला जीवित है, जब तक मैथिली जीवित है।"

मैथिली भाषा का इतिहास

मैथिली शब्द मूलतः मिथिला से लिया गया है जो विदेह राजवंश के राजा जनक (माता सीता के पिता) के जनकपुर राज्य की राजधानी थी। यह वर्तमान समय में नेपाल के धनुषा मण्डल के अंतर्गत आती है। राम-सीता के नाम से ही अंदाज़ लगाया जा सकता है कि यह क्षेत्र मिथिला इतना पुराना है कि इसकी व्युत्पत्ति का कोई साक्ष्य नहीं है। मिथिला की राजकुमारी, माता सीता को मैथिली भी कहा जाता है। किंवदंती है कि उनके नाम से ही यहाँ की भाषा को मैथिली का नाम दिया गया है। इसके लिए अलग- अलग इतिहासकारों के अपने-अपने मत हैं। एक मतानुसार यहाँ एक प्राचीन राजा था जिसका नाम था 'मिथि', उनके नाम से ही मिथिला शब्द का निर्माण हुआ है। एक अन्य मत की मानें तो 'मिथिला' नामक एक ऋषि से इसका संबंध है। एक भौगोलिक मत यह भी है कि मिथ का अर्थ है एक साथ मिला हुआ। यह प्रदेश वस्तुतः तीन छोटे-छोटे राज्यों-विदेह, वैशाली और अंग प्रदेश का मिला हुआ रूप था। इस कारण इसे मिथिला नाम दिया गया है। शाकटायन ने इसे ऐसा देश कहा जहां शत्रुओं का दमन न हुआ हो। इनके जैसे कई महानुभाव रहे हैं जिन्होंने अपने-अपने मत प्रस्तुत किए हैं। वास्तविकता यह है कि इसका इतिहास इतना पुराना है कि इनमें से सभी मत अनुमान मात्र ही हैं, पुष्ट प्रमाणों पर आधारित नहीं है।

मैथिली मूल रूप से चौदहवीं शताब्दी के आस पास की है। पाल साम्राज्य के पतन के बाद कर्णाट वंश के श्री हरीसिंह देव (1226-1324) के समय मैथिली का संरक्षण 14वीं शताब्दी (लगभग 1327 ई.) से शुरू हुआ। वर्ण रत्नाकर इसकी प्राचीनतम गद्यों में से एक है, जो 1507 ईसवी से संरक्षित है और इसे मिथिलाक्षर लिपि में लिखा गया है। हालांकि मिथिलाक्षर लिपि में मैथिली की शुरुआत मैथिली के प्रकांड विद्वान आचार्य राम लोचन शरण द्वारा की गयी। मैथिली के महाकवि कोकिल 'विद्यापति' ने इसके लिए एक प्राचीन नाम देसिल बअना कहा जिसे तिरहुतिया भी कहा जाता है। वास्तव में यह नाम मैथिली से भी पुराना है। इसका उल्लेख सन् 1771 में तिरुतियन रूप में लिखित 'अल्फाबेटम ब्राह्मणिकम' में मिलता है।

मैथिली साहित्य का इतिहास

लगभग 700 ईसवी के आसपास से कई प्राकृत और अपभ्रंश शब्दों को अपने साथ लेते हुए मैथिली साहित्य की रचना की जाने लगी। उसका प्रमाण मैथिली के आदि कवि तथा सर्वाधिक ज्ञात कवि विद्यापति की रचनाएं हैं, जिन्होंने मैथिली के अतिरिक्त संस्कृत तथा अवहट्ट में भी कई रचनाएं कीं। ये वे प्रमुख दोनों भाषाएं हैं, जहां से मैथिली का विकास हुआ। लगभग सवा से डेढ़ करोड़ लोग आज मैथिली को अपनी मातृभाषा के रूप में प्रयोग करते हैं और उनके प्रयोगकर्ता भारत में ही नहीं अपितु विश्व के विभिन्न हिस्सों में फैले हैं। मैथिली नाम का प्रयोग आधुनिक काल में हुआ है। इस नाम का उल्लेख सर्वप्रथम सन् 1801 ईस्वी में कॉल ब्रेक ने अपने लेख में किया। ग्रियर्सन के भाषा सर्वेक्षण के अनुसार मिथिलांचल और आसपास के क्षेत्रों में इस भाषा को बोलने वाले सर्वाधिक संख्या में हैं। वो मैथिल कोकिल विद्यापति (1350-1450) ही थे जो मैथिली में अपनी कविताओं की रचना कर लोगों के दिल में उतर गए, वो भी उस समय जब राज्य की राजभाषा संस्कृत थी और इसे साहित्यिक भाषा के रूप में भी प्रयोग किया जाता था। इन्हीं के प्रयासों का नतीजा था कि साहित्य में संस्कृत की जगह मैथिली ज्यादा जन प्रिय होने लगी।

मैथिली साहित्य को तीन भागों में बाँट कर इसे समझा जा सकता है -

प्राचीन साहित्य (700-1350 ईस्वी)

मैथिली भाषा का उद्गम अपभ्रंश भाषाओं से माना जाता है। पाल और सेन वंशों के शासनकाल में मैथिली का विकास एक जनभाषा के रूप में हुआ। विद्वान मानते हैं कि संस्कृत, पालि और प्राकृत भाषाओं से मैथिली में कई शब्द एवं शैलियाँ आईं। यह अंतराल मैथिली में कसीदे, दोहे और गानों का था। मैथिल लेखक पूर्व कवि कोकिल पहले गद्य 'वर्णरत्नाकर' के रचियता ज्योतिरीश्वर ठाकुर प्रमुख थे। 'वर्णरत्नाकर' दक्षिणी नेपाली भाषा के साथ-साथ उत्तर भारतीय भाषा का पहला विश्वकोश भी है।

मध्यकालीन साहित्य (1350-1830 ईस्वी)

मैथिली के लिए यह दौर मैथिली साहित्य का स्वर्ण युग कहा जाता है। साहित्यिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण था क्योंकि इसी समय से मैथिली साहित्य में कहानियों और नाट्य लेखन का श्रीगणेश हुआ। कवि कोकिल विद्यापति ने मैथिली को साहित्यिक ऊँचाइयों तक पहुँचाया। विद्यापति ने प्रेम, भक्ति और श्रृंगार पर आधारित पदों की रचना की। उनकी

रचनाओं में राधा-कृष्ण के प्रेम, शिव-पार्वती के घरेलू जीवन का अत्यंत कोमल चित्रण मिलता है। इसके अलावा नेपाल के तराई क्षेत्र मोरंग के प्रवासी मजदूरों की पीड़ा विषय पर उनके 1000 से अधिक अमर गीत हैं। विद्यापति के कारण मैथिली को राजदरबारों और जनमानस में एक नई पहचान मिली। साथ ही इसी दौर में मैथिली भाषा को सींच कर एक विशाल वृक्ष बनाया गया। इस युग के महत्वपूर्ण लेखक थे विद्यापति (1350-1450), श्रीमंत शंकरदेव (1449-1568) और गोविंद दास।

आधुनिक साहित्य (1830 से अब तक)

19वीं और 20वीं शताब्दी में मैथिली भाषा ने पुनः जागरण का अनुभव किया। इस काल में साहित्यकारों ने मैथिली गद्य और कविता को समृद्ध किया। 'विद्यापति पर्व', 'सीमंतिनी उपाख्यान' और 'पराशर शांति' जैसी रचनाएँ मैथिली साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं। भाषायी विकास के इस इस दौर में आते-आते मैथिली ने अपने पाँव पसारना शुरू कर दिया था। उसने अपना ध्यान केन्द्रित किया पत्र-पत्रिकाओं पर और इसका मूल केंद्र था उस समय का जनकपुर। अप्रैल 2010 में भारत की बाइबिल सोसायटी द्वारा नेपाल के बाइबिल अनुवादकों के संयुक्त कॉपीराइट के तहत एक नए वसीयतनामा का मैथिली में अनुवाद किया गया।

मैथिली भाषा, लिपि एवं रूपांतर

मैथिली भाषा के इतिहास की बात करें तो पहले इसे मिथिलाक्षर, तिरहुतिया तथा कैथी लिपि में लिखा जाता था, जो ब्राह्मी लिपि (3 ई.पू. की लिपि) से अवतरित है। ये लिपियाँ बांग्ला और असमिया लिपियों से मिलती-जुलती थीं। कालांतर में इसे लिखने के लिए हिंदी की तरह देवनागरी -लिपि का प्रयोग किया जाने लगा। मैथिल ब्राह्मणों में आज भी मैथिली लिपि प्रचलित है। यह बांग्ला से बहुत मिलती जुलती है। इनके साहित्य कृतियों के लिए अब नागरी का प्रयोग होता है। अब नागरी लिपि का प्रयोग भाषा के अन्य कई कार्यों में धीरे धीरे शुरू होने लगा है। उत्तर बिहार और नेपाल के सीमावर्ती क्षेत्रों में अन्य जातियों के लोग आज भी इन स्थानीय रूपांतरों के साथ-साथ कैथी लिपि का भी प्रयोग करते हैं।

ऐसे हुआ मैथिली का प्रचार प्रसार

महेश्वर सिंह (दरभंगा राज के शासक) के निधन के बाद जब 1860 में दरभंगा राज पर ब्रिटिश सरकार ने कब्जा कर लिया था, इनके उत्तराधिकारी महाराज लक्ष्मेश्वर सिंह,

जिनका मैथिली के प्रति एक भावुक दृष्टिकोण था, ने इसके प्रचार की नींव रखी। इसे मैथिली भाषा के धुरंधर श्री एम एम परमेश्वर मिश्रा, चंदा झा, मुंशी रघुनंदन दास जैसे कई लोगों ने व्यक्तिगत प्रयास कर न सिर्फ इसका अस्तित्व बचाए रखा बल्कि इसको पल्लवित-पुष्पित और फलीभूत करने में अपना सक्रिय योगदान दिया। साथ ही 'मैथिली हित साधना', 'मिथिला मोड़', 'मिथिला मिहिर' का प्रकाशन आने वाले समय में लेखकों को प्रोत्साहित करता रहा। मैथिली रूपी इस पेड़ को और छायाप्रद बनाने के लिए 1910 में पहला सामाजिक संगठन 'मैथिल महासभा' की स्थापना की गई।

इस महासभा के अथक प्रयासों के बाद 1917 में कोलकाता विश्वविद्यालय में इसको क्षेत्रीय भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त हुई और बाद में अन्य विश्वविद्यालयों ने भी इसे मान्यता दी।

'बाबू भोला लाल दास', जिन्होंने सबसे पहले मैथिली व्याकरण की रचना की, ने इसके साथ- साथ गद्य 'कुसुमांजलि' और एक पत्रिका 'मैथिली' का संपादन किया।

1965 शायद आधुनिक मैथिली साहित्य के लिए एक स्वर्ण वर्ष था जब साहित्य में अकादमी द्वारा मैथिली को स्वीकार कर लिया गया और मैथिली साहित्य को बढ़ावा देने के लिए एक संगठन की नींव रखी गई।

मैथिली का क्षेत्र विस्तार

मैथिली का क्षेत्र वर्तमान बिहार के संपूर्ण उत्तरी भाग में पूर्वी चंपारण, मुजफ्फरपुर, मुंगेर, भागलपुर, दरभंगा, मधुबनी, पूर्णिया, कटिहार तथा उत्तरी संथाल परगना में है। परंतु यह मूल रूप से बिहार के मधुबनी, दरभंगा, सुपौल, सहरसा और पूर्णिया जिले में बोली जाती है। साथ ही नेपाल जहां की दूसरी प्रमुख भाषा मैथिली है। मुख्य रूप से सरलाही, महोत्तरी, धनुषा, सुनसरी, सिराहा, सप्तरी तथा जनकपुर के लगभग कई इलाकों में लगभग सभी जातियों तथा धर्म के लोगों द्वारा भी बोली जाती है। इतना ही नहीं आज मैथिली भागलपुर और तिरहुत प्रमंडल के कई इलाकों के साथ साथ पश्चिम बंगाल के तटवर्ती क्षेत्रों मालदा और उत्तर और दक्षिण दिनाजपुर में भी बोली जा रही है।

मैथिली की उपबोलियां

मैथिली की कुल छः उप बोलियां हैं। उत्तरी मैथिली, दक्षिणी मैथिली, पूर्वी मैथिली,

पश्चिमी मैथिली, छिका छिकी तथा जुलाहा बोली। कुछ लोग, जो पूर्वी सीतापुर तथा मधुबनी डिविजन के विभिन्न क्षेत्रों में रहते हैं, इस बोली को केंद्रीय जनसाधारण की मैथिली का नाम देते हैं। इस प्रकार इसकी बोलियों की संख्या कुल सात हो जाती है। ज्ञात हो कि इनमें उतरी मैथिली ही मैथिली का परिनिष्ठित रूप है, जिसे उत्तरी दरभंगा, मधुबनी तथा आसपास के ब्राह्मणों द्वारा विशेष रूप से प्रयोग की जाती है। मैथिली के बारे में कहा भी जाता है कि बिहारी बोलियों में सिर्फ मैथिली ही साहित्यिक दृष्टि से संपन्न है। अगर भौगोलिक विविधताओं की बात करें तो बंतर, बरमेली, मुसर और टाटी जैसी कुछ बोलियां सिर्फ नेपाल में बोली जाती हैं जबकि कोरथा, जोलाहा और ठेट बोलियां भारत में बोली जाती हैं।

अगर बोलियों के सार की बात करें तो मधुबनी में बोले जाने वाली मैथिली को स्टैंडर्ड मैथिली माना जाता है। पुस्तको में जो लिखा जाता है, वह केंद्रीय मैथिली समूह की बोलियों का अर्ध- मानक रूप है, जो हिमालय की तराई और दरभंगा तथा कोशी प्रभागों में बोली जाती है।

मैथिली कैलेंडर या मिथिलाक्षर पंचांग (तिरहता पंचांग)

आज भी भारत और नेपाल के मैथिली समुदाय के लोग मैथिली कैलेंडर मिथिला पंचांग को मानते हैं। आज इसे बहू प्रचलित प्रिंट कैलेंडरों में से एक माना जाता है। यह अपना नया साल बैसाख महीने से शुरू करता है जो सौर कैलेंडर नक्षत्र के पहले दिन से शुरू होता है। अंग्रेजी कैलेंडर के हिसाब से अक्सर अप्रैल महीने में शुरू होता है। इसे अलग-अलग राज्यों में अलग- अलग नाम से जाना जाता है। पश्चिम बंगाल में पोहेला (पहला) वैशाख, आसाम में रंगाली बिहू' तमिलनाडु में पुत्तांडु' और पंजाब में बेसाखों' के रूप में मनाया जाता है। पर ये सभी नव वर्ष के नव-पर्व लगभग समान समय में आते हैं, जो अपने-अपने क्षेत्रों में नए साल की शुरुआत के द्योतक होते हैं।

मैथिली के प्रमुख साहित्यकार, उनकी कृतियाँ

मैथिली भाषा का साहित्यिक इतिहास अत्यंत समृद्ध रहा है। यह न केवल सांस्कृतिक और धार्मिक चेतना का संवाहक रहा, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का माध्यम भी बना। मैथिली के प्रमुख साहित्यकारों, उनकी महत्त्वपूर्ण कृतियों और समकालीन साहित्यिक विकास पर एक नज़र:

क्रम	नाम	कृतियाँ
1.	विद्यापति (14वीं शताब्दी)	पदावली — राधा-कृष्ण पर आधारित श्रृंगारिक पद कीर्तिलता और कीर्तिपताका — ऐतिहासिक आख्यान योगदान: मैथिली को साहित्यिक स्वरूप देने वाले प्रथम कवि। उन्हें "मैथिली कविता के जनक" ' मैथिल कोकिल' के रूप में जाना जाता है।
2.	ललन झा	विद्यापति पर्व, धरोहर योगदान: आधुनिक मैथिली गद्य लेखन को एक नई दिशा देने वाले साहित्यकार।
3.	हरिमोहन झा	खट्टर काका के तरंग — व्यंग्यात्मक लेखन का श्रेष्ठ उदाहरण पराशर शांति — सामाजिक एवं पारिवारिक विषयों पर आधारित उपन्यास योगदान: मैथिली व्यंग्य साहित्य में क्रांति लाने वाले लेखक।
4.	राजकमल चौधरी	मछली मरे चुल्हि में (उपन्यास) नई कविता संग्रह योगदान: प्रगतिशील, विद्रोही स्वर और यथार्थवादी दृष्टिकोण वाले कवि व उपन्यासकार।
5.	नागार्जुन (वैद्यनाथ मिश्र)	पत्रहीन नग्न गाछ (कविता संग्रह) योगदान: हिंदी और मैथिली दोनों भाषाओं में प्रभावशाली लेखन। समाजवादी विचारधारा से प्रभावित।
6.	डॉ. रामदयाल रंजन	स्वर्गाक गंध रेमन बर्फक देश में योगदान: प्रवासी जीवन और वैश्विक अनुभवों को मैथिली कविता में व्यक्त करने वाले कवि।

आचार्य रामलोचन सरन, सुरेन्द्र झा सुमन (साहित्य अकादमी में मैथिली का प्रतिनिधित्व), सुधांशु शेखर चौधरी (साहित्य एकादमी सम्मान प्राप्त), बलदेव मिश्र, राजकमल चौधरी, गजेन्द्र ठाकुर, परिचय दास, ललन झा, हरिमोहन झा, डॉ. राजकुमार रंजन के अलावा नवीन मैथिली साहित्य के प्रमुख समकालीन साहित्यकारों में उमेश मंडल (समकालीन मैथिली कविता में महत्वपूर्ण नाम), अशोक झा (एक प्रभावशाली कथाकार), कविता झा

(महिला लेखन की एक मजबूत आवाज़), डॉ. कमलेश झा (आलोचक, निबंधकार, शोध साहित्यकार और अनुवादक), अरुणाभ सहाय (मैथिली नाटक और मंचीय साहित्य में सक्रिय), डॉ. बिनोद बिहारी वर्मा (मैथिली लोक संस्कृति), प्रवीण नारायण चौधरी (डिजिटल युग के लेखक और मैथिली भाषा में ब्लॉग लेखन को बढ़ावा देने वाले साहित्यकार) का नाम शुमार है जो आज मैथिली के विकास हेतु संकल्पित हैं।

मैथिली साहित्य का वर्तमान दौर एक सृजनात्मक पुनर्जागरण का समय है। यहाँ परंपरा और आधुनिकता का सुंदर समन्वय हो रहा है। प्रमुख साहित्यकारों ने इसकी नींव रखी और आज की पीढ़ी उसे नयी ऊँचाइयों पर ले जा रही है। मैथिली अब सीमित भाषा नहीं रही, यह वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान बना रही है। मैथिली का समकालीन साहित्य न केवल भाषा को जीवंत बनाए हुए है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन और आत्मचिंतन का माध्यम भी बन रहा है। नए साहित्यकारों की लेखनी मैथिली भाषा को आधुनिकता से जोड़ रही है और यह दिखाता है कि मैथिली न केवल जीवित है, बल्कि भविष्य की ओर अग्रसर भी है। हाल ही में डिजिटल मीडिया में मैथिली को यूनिकोड स्क्रिप्ट के अंतर्गत एनकोडिंग करने हेतु एक ड्राफ्ट भी तैयार किया गया है। कुल मिलाकर आप यह कह सकते हैं कि मैथिली साहित्य न सिर्फ मिथिला की आत्मा और भारत की सांस्कृतिक धरोहर का जीवंत प्रतिबिंब है, अपितु यह वैश्विक पहचान बनाकर लोकप्रिय हो रही है।

सावन सौरभ

संथाली भाषा का सफर और साहित्य का विकास

बाहा ज़ोम रे दोन ओरक, सारी सरजों काना तक
सेरेंग दहर काना बोंगा, होरोम होर काना चोंगा।

अर्थात बाहा नृत्य में फूल खिलते हैं, साड़ी पहनी लड़कियां लय में झूमती हैं, धरती इन संगीतों से गुंजायमान है और हमारा हृदय खुशी से झूम उठता है। संथाली भाषा की उक्त पंक्तियां संथालियों के प्रकृति प्रेम का बोध कराती हैं।

संथाली, भारत की प्राचीन और समृद्ध भाषाओं में से एक है जो ऑस्ट्रो-एशियाटिक भाषा परिवार की मुंडा शाखा से संबंधित है और मुख्य रूप से भारत के झारखंड, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, बिहार और असम राज्यों में बोली जाती है। इसके अलावा, यह बांग्लादेश, नेपाल और भूटान के कुछ हिस्सों में भी बोली जाती है। करोड़ों लोगों द्वारा बोली जाने वाली यह भाषा, भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची की 22 भाषाओं में से एक है। संथाली भाषा न केवल एक संचार का माध्यम है, बल्कि संथाली संस्कृति, इतिहास और पहचान का एक महत्वपूर्ण वाहक भी है।

संथाली भाषा के उद्गम को लेकर कई मत और अध्ययन मौजूद हैं। भाषाई अध्ययनों के अनुसार, मुंडा भाषाएँ लगभग 4000-3500 वर्ष पूर्व इंडोचीन से ओडिशा के तट पर आई थीं और फिर इंडो-आर्यन प्रवास के बाद फैलीं। संथाली भाषा, मुंडा भाषा परिवार की खेरवारियन शाखा की सबसे प्रमुख भाषा है, जिसका संबंध हो और मुंडारी जैसी भाषाओं से है।

संथाली लोगों का स्वयं का मानना है कि उनकी भाषा और संस्कृति बहुत प्राचीन है। उनकी लोककथाओं और पारंपरिक गीतों में उनके प्राचीन इतिहास और जीवनशैली का वर्णन मिलता है। वे स्वयं को 'होड़' (मनुष्य) या 'होड़ होपन' (मनुष्य के बच्चे) कहते हैं, जो उनकी पहचान और भाषा के प्रति उनके गहरे सम्मान को दर्शाता है।

उन्नीसवीं शताब्दी तक संथाली भाषा मुख्य रूप से मौखिक रूप में ही विद्यमान थी। ज्ञान और परंपराएँ पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप से हस्तांतरित होती थीं। इस दौरान, संथाली समाज में समृद्ध लोककथाएँ, लोकगीत, मिथक और पारंपरिक ज्ञान मौजूद थे, जो उनकी संस्कृति और इतिहास को जीवित रखते थे।

संथाली साहित्य के विकास को मुख्य रूप से दो चरणों में विभाजित किया जा सकता है: मौखिक साहित्य और लिखित साहित्य।

1. मौखिक साहित्य (18वीं शताब्दी तक) -

संथाली साहित्य का प्रारंभिक रूप मौखिक था। इस काल में, संथाली लोगों के पास अपनी भावनाओं, अनुभवों, ज्ञान और इतिहास को व्यक्त करने का एकमात्र माध्यम उनकी मौखिक परंपरा थी। मौखिक साहित्य में निम्नलिखित प्रमुख रूप शामिल थे:

लोककथाएँ (कातनी): संथाली लोककथाएँ पीढ़ी दर पीढ़ी सुनाई जाती थीं और इनमें नैतिकता, सामाजिक रीति-रिवाज, प्रकृति और अलौकिक शक्तियों से संबंधित कहानियाँ शामिल होती थीं। ये कहानियाँ मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा का भी महत्वपूर्ण स्रोत थीं।

लोकगीत (दुरंग): संथाली लोकगीत विभिन्न अवसरों और त्यौहारों पर गाए जाते थे। इनमें प्रेम, प्रकृति, कृषि, सामाजिक जीवन और धार्मिक विश्वासों से संबंधित गीत शामिल होते थे। इन गीतों में संथाली संस्कृति की गहरी झलक मिलती है।

मिथक (कुकुम): संथाली मिथक उनकी सृष्टि, देवताओं और पूर्वजों से संबंधित कहानियाँ हैं। ये मिथक उनके धार्मिक और आध्यात्मिक विश्वासों का आधार हैं और उनकी सामाजिक संरचना को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

कहावतें और मुहावरे (ओड़ाक् आर बाखोन): संथाली भाषा में समृद्ध कहावतें और मुहावरे हैं, जो जीवन के अनुभवों और बुद्धिमत्ता को संक्षिप्त रूप में व्यक्त करते हैं। ये भाषा को अधिक जीवंत और प्रभावशाली बनाते हैं।

पहेलियाँ (कुदुम): पहेलियाँ मनोरंजन और बौद्धिक विकास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा थीं। ये समुदाय के सदस्यों के बीच बातचीत और ज्ञान साझा करने का एक माध्यम थीं।

मौखिक साहित्य संथाली संस्कृति की नींव भी और इसने उनकी सामाजिक एकजुटता और सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

2. लिखित साहित्य (19वीं शताब्दी से वर्तमान तक)-

संथाली साहित्य के लिखित रूप का विकास 19वीं शताब्दी में यूरोपीय मिशनरियों

और संथाली बुद्धिजीवियों के प्रयासों से शुरू हुआ।

मिशनरियों का योगदान: ईसाई मिशनरियों ने संथाली भाषा और साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने बाइबल और अन्य धार्मिक ग्रंथों का संथाली में अनुवाद किया। लार्स ओल्सेन स्क्रेफ़्सरूड और पॉल ओलाफ बॉडिंग जैसे मिशनरी विद्वानों ने संथाली व्याकरण, शब्दकोश और लोककथाओं का संग्रह तैयार किया। 1895 में लार्स ओल्सेन स्क्रैफ्सुड द्वारा बाइबिल का पहला संथाली अनुवाद प्रकाशित हुआ। मिशनरियों ने संथाली भाषा को लिखने के लिए रोमन, बंगाली और उड़िया लिपियों का उपयोग किया।

ओल चिकी लिपि का विकास: संथाली भाषा के लिए एक स्वदेशी लिपि की आवश्यकता महसूस की गई, क्योंकि अन्य लिपियाँ संथाली ध्वनियों को पूरी तरह से व्यक्त करने में सक्षम नहीं थीं। इस आवश्यकता को 1925 में पंडित रघुनाथ मुर्मू ने पूरा किया, जिन्होंने 'ओल चिकी' नामक एक नई लिपि का आविष्कार किया। ओल चिकी एक वर्णमाला लिपि है और इसमें 30 अक्षर और पाँच बुनियादी डायक्रिटिक्स हैं। यह लिपि संथाली भाषा की ध्वन्यात्मक संरचना के लिए बहुत उपयुक्त है और इसे संथाली समुदाय के बीच व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है। पंडित रघुनाथ मुर्मू को संथाली समुदाय में 'गुरु गोमके' के रूप में सम्मानित किया जाता है और ओल चिकी लिपि का आविष्कार संथाली भाषा और साहित्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

लिखित साहित्य का उदय:ओल चिकी लिपि के विकास के बाद, संथाली में मौलिक लेखन की शुरुआत हुई। पंडित रघुनाथ मुर्मू ने स्वयं कई पुस्तकें लिखीं, जिनमें नाटक, कविताएँ और व्याकरण शामिल हैं। उनकी प्रसिध्द रचनाओं में `डारगे धान', 'सिधु-कान्हू' 'बिदु चंदन' और 'खेरवाल बिर पंडित' शामिल हैं।

आधुनिक संथाली साहित्य: 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और 21वीं शताब्दी में संथाली साहित्य का तेजी से विकास हुआ। कई संथाली लेखकों, कवियों और नाटककारों ने विभिन्न साहित्यिक रूपों में योगदान दिया। इस दौरान उपन्यास, लघु कथाएँ, कविता संग्रह, नाटक और निबंध प्रकाशित हुए। संथाली साहित्य में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मुद्दों को उठाया गया है।

प्रमुख साहित्यिक कृतियाँ और लेखक: आधुनिक संथाली साहित्य में कई महत्वपूर्ण कृतियाँ और लेखक हुए हैं। कुछ उल्लेखनीय लेखकों में भोगला सोरेन, सारदा प्रसाद किस्कू, अर्जुन चरण हेम्ब्रम, दमयंती बेशरा, और हंसदा सोवेंद्र शेखर शामिल हैं। उनकी रचनाएँ संथाली जीवन, संघर्षों, परंपराओं और आकांक्षाओं को दर्शाती हैं।

साहित्यिक संगठन और पत्रिकाएँ: संथाली साहित्य के विकास और प्रचार के लिए कई साहित्यिक संगठन और पत्रिकाएँ स्थापित हुई हैं। ये संगठन संगोष्ठियों, सम्मेलनों और प्रकाशनों के माध्यम से संथाली लेखकों को एक मंच प्रदान करते हैं और संथाली साहित्य को व्यापक दर्शकों तक पहुँचाने में मदद करते हैं।

शैक्षणिक मान्यता और विकास: संथाली भाषा को 2003 में भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया गया और 2004 में साहित्य अकादमी ने इसे एक स्वतंत्र साहित्यिक भाषा के रूप में मान्यता दी। इसके बाद से, विभिन्न विश्वविद्यालयों और शैक्षणिक संस्थानों में संथाली भाषा और साहित्य का अध्ययन और अध्यापन शुरू हुआ है। यह संथाली साहित्य के विकास और संरक्षण के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है।

संथाली साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण का गहरा चित्रण मिलता है। उनकी लोककथाओं, गीतों और कविताओं में जंगल, पहाड़, नदियाँ और वन्यजीव महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रकृति से सान्निध्य के कारण संथाली संस्कृति में सामुदायिक भावना का विशेष महत्व है और यह उनके साहित्य में भी परिलक्षित होता है। उनकी कहानियाँ और गीत अक्सर सामूहिक जीवन और सामाजिक बंधनों को दर्शाते हैं।

संथाली साहित्य उनकी प्राचीन परंपराओं, रीति-रिवाजों, त्यौहारों और सामाजिक मूल्यों को जीवित रखने और अगली पीढ़ी तक पहुँचाने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। आधुनिक संथाली साहित्य में अक्सर संथाली लोगों के ऐतिहासिक और समकालीन संघर्षों, सामाजिक अन्याय और अपनी पहचान तथा अधिकारों के लिए उनके प्रतिरोध को दर्शाया जाता है। संथाली साहित्य में मौखिक परंपरा की समृद्ध विरासत आज भी जीवित है और यह उनके लिखित साहित्य को गहराई और विविधता प्रदान करती है।

संथाली भाषा का उदगम प्राचीन है और यह मुंडा भाषा परिवार की एक महत्वपूर्ण शाखा है। सदियों तक मौखिक रूप में विद्यमान रहने के बाद, 19वीं शताब्दी में मिशनरियों

और विशेष रूप से पंडित रघुनाथ मुर्मू के ओल चिकी लिपि के आविष्कार के साथ संथाली साहित्य ने एक नया आयाम प्राप्त किया। आज, संथाली साहित्य विभिन्न रूपों में विकसित हो रहा है और यह न केवल संथाली समुदाय के लिए बल्कि भारतीय साहित्य के लिए भी एक महत्वपूर्ण योगदान है। संथाली भाषा और साहित्य का विकास उनकी सांस्कृतिक पहचान, इतिहास और ज्ञान को संरक्षित रखने और भविष्य की पीढ़ियों तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहेगा।

बेबी रिंकी पुरती

भाषा विकास संबंधी सरकारी प्रयास

"नियमों से नहीं, प्रयोग से बढ़ती है भाषा,
भारत सरकार का प्रयास है – राजभाषा हिंदी बने कारोबार की परिभाषा"

भारत भाषाई विविधता वाला देश है, जहाँ 2011 की जनगणना के अनुसार 19,500 से अधिक भाषाएँ या बोलियाँ मातृभाषा के रूप में बोली जाती हैं। यह भाषाई बहुलता देश की सांस्कृतिक विरासत और राष्ट्रीय पहचान का एक अभिन्न अंग है। स्वतंत्रता के पश्चात्, भारत के संविधान निर्माताओं ने इस जटिल भाषाई परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए एक सुदृढ़ भाषा नीति की आवश्यकता महसूस की। इस नीति का उद्देश्य राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देना, प्रशासनिक कार्यों में सुगमता सुनिश्चित करना और विभिन्न भाषाई समुदायों की सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखना था। इसी विचार के साथ, भारतीय संविधान सभा द्वारा दिनांक 14 सितंबर 1949 को हिंदी को संघ की राजभाषा बनाए जाने का प्रस्ताव पारित किया गया और दिनांक 26 जनवरी, 1950 से पूरे देश में लागू किया गया।

भारत की भाषा नीति का आधार इसके संविधान में निहित है, विशेषकर भाग 17 (अनुच्छेद 343 से 351) में राजभाषा संबंधी प्रावधानों में। संवैधानिक प्रावधानों को व्यवहार में लाने के लिए राजभाषा अधिनियम, 1963 और राजभाषा नियम, 1976 महत्वपूर्ण कानूनी उपकरण हैं।

संविधान की आठवीं अनुसूची भारतीय भाषाओं की उस सूची का उल्लेख करती है जिन्हें विशेष मान्यता प्राप्त है। प्रारंभ में वर्ष 1950 में आठवीं अनुसूची में 14 भाषाएँ शामिल थीं – असमिया, बांग्ला, गुजराती, हिंदी, कन्नड, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, ओड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगू और उर्दू। समय के साथ आठवीं अनुसूची में भाषाओं की संख्या बढ़कर 22 हो चुकी है। सिंधी (1967 में), कोंकणी, मणिपुरी और नेपाली (1992 में) तथा बोडो, डोगरी, मैथिली और संथाली (2003 में) को संविधान संशोधनों द्वारा इस सूची में जोड़ा गया। आठवीं अनुसूची में शामिल ये भाषाएँ संघ द्वारा औपचारिक मान्यता प्राप्त भाषाएँ हैं। इनके महत्व को रेखांकित करते हुए संविधान निर्माताओं ने दो उद्देश्य बताए थे: प्रथम, इन भाषाओं के प्रतिनिधियों को शामिल कर हिंदी के प्रयोग की प्रगति की समीक्षा हेतु संसदीय समिति गठित करना; और द्वितीय, हिंदी के विकास के लिए इन भाषाओं के शब्द-भंडार एवं अभिव्यक्तियों का उपयोग करना। वस्तुतः आठवीं अनुसूची

का मूल उद्देश्य हिंदी को देशभर की भाषाओं से समृद्ध करना था और साथ ही प्रमुख क्षेत्रीय भाषाओं को सांकेतिक सम्मान देना था।

हिंदी को सरकारी कामकाज में प्रभावी रूप से अपनाने के लिए भारत सरकार, गृह मंत्रालय के अंतर्गत जून 1975 में एक स्वतंत्र विभाग बनाया गया जिसे राजभाषा विभाग कहते हैं। यह विभाग संघ की राजभाषा संबंधी संवैधानिक प्रावधानों और राजभाषा अधिनियम के कार्यान्वयन हेतु उत्तरदायी है। राजभाषा विभाग विभिन्न मंत्रालयों/कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग की प्रगति की निगरानी करता है और इसे बढ़ावा देने के लिए नीतियाँ बनाता है। वर्ष 1976 में संसद की एक राजभाषा समिति का गठन भी किया गया जो सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग का मूल्यांकन करती है और राष्ट्रपति को रिपोर्ट देती है।

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के प्रमुख कार्य और योजनाएँ :

• **वार्षिक कार्यक्रम:** राजभाषा विभाग प्रतिवर्ष केंद्र सरकार के कार्यालयों द्वारा कार्यान्वयन के लिए राजभाषा हिंदी के प्रसार और प्रगामी प्रयोग हेतु वार्षिक कार्यक्रम तैयार करता है, जिसमें विभिन्न लक्ष्यों का निर्धारण किया जाता है।ये लक्ष्य हिंदी में पत्राचार, टिप्पणी लेखन और अन्य प्रशासनिक कार्यों के प्रतिशत से संबंधित होते हैं।

• **प्रोत्साहन योजनाएँ:** सरकारी कर्मचारियों को हिंदी में डिक्टेशन देने और मूल रूप से हिंदी में कार्य करने के लिए नकद पुरस्कार दिए जाते हैं। इसके अतिरिक्त, राजभाषा कीर्ति पुरस्कार और राजभाषा गौरव पुरस्कार भी विभिन्न केंद्रीय संस्थानों द्वारा प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ हिंदी गृह-पत्रिकाओं को और हिंदी में उत्कृष्ट कार्य करने वाले व्यक्तियों/संस्थानों को दिए जाते हैं, जिससे हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा मिलता है।

• **प्रशिक्षण:** राजभाषा विभाग की हिंदी शिक्षण योजना के अंतर्गत सरकारी कार्मिकों को सेवाकालीन निःशुल्क हिंदी भाषा (प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ, पारंगत स्तर), हिंदी टंकण और हिंदी आशुलिपि का प्रशिक्षण दिया जाता है।केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, जिसकी स्थापना 1985 में दिल्ली में हुई थी, इस योजना के अंतर्गत एक अधीन संस्थान के रूप में कार्य करता है और हिंदी के प्रचार-प्रसार की जिम्मेदारी निभाता है।

• **शब्दावली निर्माण और प्रकाशन:** प्रशासनिक शब्दावली तैयार करना और अंग्रेजी के लगभग 5000 शब्दों के सरल हिंदी पर्याय विकसित करना राजभाषा विभाग

के महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है, ताकि सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रयोग सरल और सहज हो सके।विभाग एक त्रैमासिक पत्रिका 'राजभाषा भारती' का प्रकाशन भी करता है, जिसमें विभिन्न कार्यालयों की राजभाषा संबंधी गतिविधियों की जानकारी होती है।

• **निगरानी और समीक्षा:** राजभाषा कार्यान्वयन समितियों (केंद्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति, राजभाषा कार्यान्वयन समिति और विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति) द्वारा तिमाही बैठकों के माध्यम से राजभाषा नियमों और अनुदेशों के कार्यान्वयन की नियमित रूप से निगरानी की जाती है। प्रत्येक तिमाही की समाप्ति के 30 दिनों के भीतर तिमाही प्रगति रिपोर्ट और वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट राजभाषा विभाग को ऑनलाइन उपलब्ध कराई जाती हैं, जिससे कार्यान्वयन की स्थिति का आकलन किया जा सके।

सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रयोग विगत दशकों में निःसंदेह बढ़ा है। राजभाषा विभाग की स्थापना के बाद से केंद्र सरकार के कार्यालयों और विभागों में सरकार की राजभाषा नीति का अनुपालन तथा सरकारी काम-काज में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। शीर्ष नेतृत्व द्वारा हिंदी के प्रयोग को प्रोत्साहन मिला है, जिससे पूरे प्रशासनिक तंत्र को प्रेरणा मिलती है। हिंदी को राष्ट्रीय एकता का अभिन्न अंग और देश की जनता की अभिव्यक्ति का सर्वोत्तम शक्तिशाली तथा प्रभावशाली माध्यम माना जाता है, जो सरकार की नीति का मूल आधार है। विश्व स्तर पर भी हिंदी के जानकार तेजी से बढ़ रहे हैं, और संयुक्त राष्ट्र में भी हिंदी की पहुँच बढ़ाने के लिए परियोजनाएँ शुरू की गई हैं, जिससे हिंदी की वैश्विक पहचान मजबूत हो रही है।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास) की स्थापना भारत सरकार की राजभाषा नीति के प्रभावी क्रियान्वयन के उद्देश्य से की गई थी। इसका मुख्य उद्देश्य नगर स्तर पर स्थित सभी केंद्र सरकार के कार्यालयों, सार्वजनिक उपक्रमों, बैंकों, और अन्य संस्थानों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देना है। नराकास इन संस्थानों को एक साझा मंच प्रदान करता है जहाँ वे अपनी भाषा संबंधी गतिविधियों को साझा कर सकते हैं, एक-दूसरे से प्रेरणा ले सकते हैं तथा बेहतर कार्यान्वयन की दिशा में कार्य कर सकते हैं।

नराकास की भूमिका केवल निरीक्षण और समीक्षात्मक नहीं होती, बल्कि यह एक प्रेरणादायक और सहभागी संस्था के रूप में कार्य करती है। यह समय-समय पर राजभाषा कार्यशालाओं, प्रशिक्षण कार्यक्रमों तथा प्रतियोगिताओं का आयोजन करती है, जिससे कर्मचारियों में हिंदी के प्रयोग की दक्षता और आत्मविश्वास बढ़ता है। निबंध, वाद-

विवाद, प्रश्नोत्तरी, सुलेख और अनुवाद प्रतियोगिताएं न केवल ज्ञानवर्धक होती हैं, बल्कि कार्यालयीन कार्यों में हिंदी के सहज प्रयोग को भी प्रोत्साहित करती हैं।

नराकास उत्कृष्ट कार्य करने वाले कार्यालयों और व्यक्तियों को पुरस्कृत कर उन्हें अन्य के लिए आदर्श बनाती है। यह प्रतिस्पर्धा की सकारात्मक भावना उत्पन्न करती है जिससे कार्यालयों में हिंदी प्रयोग की गति बढ़ती है। साथ ही, नराकास राजभाषा नियम, अधिनियम एवं सरकार की नीतियों से संबंधित जानकारी भी कार्यालयों तक पहुंचाती है तथा उनके क्रियान्वयन में सहायता करती है।

तकनीकी युग में नराकास ई-उपकरणों और डिजिटल माध्यमों को अपनाकर हिंदी के प्रचार को और सशक्त बना रही है। राजभाषा पोर्टल, ई-फाइलिंग, अनुवाद टूल्स, और अन्य सॉफ्टवेयर के उपयोग से कार्यालयीन कार्यों में हिंदी का प्रयोग सुगम एवं प्रभावी हो रहा है।

इसके अतिरिक्त, नराकास सांस्कृतिक कार्यक्रमों जैसे हिंदी दिवस, कवि सम्मेलन, नाटक, और संगीत कार्यक्रमों के माध्यम से कर्मचारियों में हिंदी के प्रति आत्मीयता और गौरव की भावना को भी सुदृढ़ करती है। ऐसे आयोजनों से हिंदी केवल एक दफ्तर की भाषा न रहकर एक जीवंत और प्रेरक भाषा के रूप में उभरती है।

आज के डिजिटल युग में यह आवश्यक हो गया है कि हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार तकनीकी माध्यमों से हो, ताकि वह समय के साथ कदम से कदम मिला सकें। सरकार ने इस दिशा में अनेक ई-टूल्स विकसित किए हैं, जो हिंदी को डिजिटल मंच पर सशक्त बना रहे हैं।

इन प्रयासों में सबसे प्रमुख है "भाषिणी", जो राष्ट्रीय भाषा अनुवाद मिशन के अंतर्गत संचालित एक डिजिटल प्लेटफॉर्म है। इसका उद्देश्य है कि सभी भारतीय नागरिक अपनी मातृभाषा में सरकारी सेवाओं और डिजिटल जानकारी का लाभ उठा सकें। इसके माध्यम से भाषाई अवरोध समाप्त हो रहे हैं और हिंदी को टेक्नोलॉजी से जोड़ने का कार्य तीव्र गति से हो रहा है। इसमें वॉइस टाइपिंग, टेक्स्ट-टू-स्पीच और अनुवाद जैसी एआई आधारित सेवाएं दी जाती हैं।

सरकार द्वारा e-Anuvad पोर्टल भी विकसित किया गया है, जो मंत्रालयों और सरकारी कार्यालयों को अपने दस्तावेज़ों का हिंदी अनुवाद करने में मदद करता है।

इसके अतिरिक्त अनुवादिनी नामक एक और ई-टूल है, जिसे आईआईटी बीएचयू द्वारा विकसित किया गया है। यह विशेष रूप से तकनीकी और वैज्ञानिक दस्तावेजों के हिंदी अनुवाद हेतु प्रयुक्त होता है। ये सभी उपकरण हिंदी के प्रयोग को सरल, सुलभ और तकनीकी रूप से समर्थ बना रहे हैं।

राजभाषा विभाग का पोर्टल (rajbhasha।gov।in) भी हिंदी में ई-सामग्री का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इसके माध्यम से हिंदी प्रशिक्षण मॉड्यूल, रिपोर्ट, आदेश, शब्दकोश, प्रतियोगिताएं और हिंदी साहित्य उपलब्ध होते हैं। इसके अलावा UMANG, Diksha, Aarogya Setu, CoWIN जैसे सरकारी मोबाइल ऐप्स को भी हिंदी में उपलब्ध कराया गया है, ताकि आम नागरिक अपनी भाषा में डिजिटल सेवाओं का लाभ उठा सकें।

आज सरकार ऑनलाइन हिंदी प्रतियोगिताएं, क्विज़, टिपण्णी लेखन इत्यादि भी आयोजित करती है, जिससे न केवल सरकारी कर्मचारियों में बल्कि विद्यार्थियों और आम नागरिकों में भी हिंदी के प्रति रुचि और प्रयोग बढ़ा है। ये ई-टूल्स न केवल कार्यक्षमता को बढ़ाते हैं बल्कि भाषा के प्रचार-प्रसार में तकनीकी सहायक बनकर हिंदी को आधुनिक बनाते हैं।

सरकार द्वारा अपनाए गए ये डिजिटल उपाय न केवल प्रशासनिक कार्यों में हिंदी को सक्षम बना रहे हैं, बल्कि यह सुनिश्चित भी कर रहे हैं कि हिंदी तकनीक के साथ आगे बढ़े और एक वैश्विक भाषा के रूप में स्थापित हो सके। तकनीक और भाषा का यह संगम वास्तव में भारत को भाषा-सशक्त राष्ट्र की ओर अग्रसर कर रहा है।

हिंदी केवल एक भाषा नहीं, बल्कि भाव है,
तकनीक से जुड़कर बन रही आज विकास की राह है।

सुधीर भोला कृष्णा प्रसाद

भाषा सेतु की भूमिका में ई – टूल्स

भाषा मानव समाज का एक मूलभूत पहलू है, जो विचारों एवं भावनाओं की अभिव्यक्ति और सांस्कृतिक विरासत को जीवित रखने का एक शक्तिशाली माध्यम है। भाषा लोगों को जोड़ती है और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देती है। उदाहरण के लिए, हिंदी भाषा ने भारत को एकता के सूत्र में पिरोने का काम किया है और देश की सांस्कृतिक विविधता को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वैश्विक मंचों पर हिंदी के प्रयोग ने इसके वैश्विक कद को मजबूत किया है, जिससे देश की युवा पीढ़ी भाषा से जुड़ने के लिए प्रेरित हुई है। भाषा की विविधता, जहाँ एक ओर हमारे भारतवर्ष की विशिष्ट पहचान है, वहीं दूसरी ओर विचारों के आदान – प्रदान एवं ज्ञान के प्रसार में अवरोध भी पैदा करती सकती है। ऐसे में, ई – टूल्स (इलेक्ट्रॉनिक उपकरण) एक शक्तिशाली भाषा सेतु के रूप में उभरकर सामने आए हैं, जो विभिन्न भाषाओं के बीच खाई को पाटने और सहज संचार को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। ई-टूल्स की भाषा सेतु के रूप में भूमिका, केवल तकनीकी प्रगति का परिणाम नहीं है, बल्कि वैश्विक समाज की बढ़ती आवश्यकता का परिणाम है जो भाषाई बाधाओं से उत्पन्न सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विभाजन को पाटने के लिए है।

ई-टूल्स की दुनिया विशाल और विविध है, जिसमें साधारण अनुवाद ऐप्स से लेकर जटिल मशीन लर्निंग-आधारित प्लेटफ़ॉर्म तक शामिल हैं। ये केवल शब्दों का अनुवाद नहीं करते, बल्कि सांस्कृतिक संदर्भों और अर्थों को समझने में भी सहायता प्रदान करते हैं, जिससे एक अधिक समग्र और प्रभावी संचार संभव हो पाता है। ई-टूल्स ने दुनिया भर में सूचना एवं ज्ञान तक पहुँच को लोकतांत्रिक बनाने में अहम भूमिका निभाई है। सामान्य जन मानस, शिक्षक एवं विद्यार्थी भाषा की परवाह किए बिना अपनी या विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित सामग्री, समाचार और शोध पढ़ सकते हैं। छात्र विभिन्न भाषाओं में ऑनलाइन पाठ्यक्रमों और शैक्षिक सामग्री तक पहुँच बना सकते हैं, जिससे सीखने के अवसर व्यापक हो जाते हैं। वैश्विक व्यापार और संचार के लिए भी ई टूल्स भाषा सेतु के रूप में अपनी भूमिका निभाते हैं, उदाहरण के लिए, बहुभाषी वेबसाइटें व्यापक दर्शकों तक पहुंचती हैं, क्योंकि समान्यतः उपभोक्ता अपनी मूल भाषा में उत्पाद पृष्ठ पढ़ने पर आकृष्ट होने की अधिक संभावना रखते हैं, जिससे व्यापार के अवसरों का विस्तार होता है।

ई-टूल का प्रकार	उदाहरण	मुख्य कार्य
अनुवाद उपकरण	कंठस्थ 2.0, ई-महाशब्दकोश, माइक्रोसॉफ़्ट ट्रांसलेटर, गूगल ट्रांसलेटर आदि	भाषाओं के बीच अनुवाद को सुगम बनाना, समय और लागत बचाना, एकरूपता और उत्कृष्टता सुनिश्चित करना, वास्तविक समय में अनुवाद प्रदान करना।
भाषा सीखने के प्लेटफॉर्म	लीला, डुओलिंगो	व्यक्तिगत और अनुकूल सीखने के अनुभव प्रदान करना, बोलने और सुनने के कौशल का अभ्यास कराना, सीखने को आकर्षक और मजेदार बनाना।
बहुभाषी संचार प्लेटफॉर्म	व्हाट्स ऐप, माइक्रोसॉफ़्ट टीम्स	वास्तविक समय में संचार को सुगम बनाना, सहयोग को बढ़ावा देना, व्यापक पहुंच प्रदान करना, मल्टीमीडिया सामग्री प्रस्तुत करना।
टंकण टूल्स	माइक्रोसॉफ़्ट इंडिक इनपुट टूल, गूगल इंडिक इनपुट टूल, विंडोज फोनेटिक कीबोर्ड, गूगल कीबोर्ड, गूगल वॉइस टाइपिंग आदि	इनके उपयोग से कई भाषाओं में टंकण सरल हो गया है। प्रशिक्षण एवं लागत में बचत होती है।
अन्य डिजिटल भाषाई उपकरण	ब्लॉगिंग प्लेटफॉर्म, पॉडकास्टिंग प्लेटफॉर्म	बहुभाषी मल्टीमीडिया सामग्री निर्माण को सक्षम करना, विभिन्न सीखने की शैलियों को पूरा करना, रचनात्मक अभिव्यक्ति को बढ़ावा देना।
एआई आधारित चैट टूल्स	चैट जीपीटी, गूगल जेमिनी, परप्लेक्सिटी आदि	अधिक सटीक, सुसंगत और स्वाभाविक लगने वाले अनुवाद परिणाम उत्पन्न करना। संदर्भ और भाषाई पैटर्न की बेहतर समझ। समर्थित भाषाओं में सूचना, लेख, रचनाएँ आदि का निर्माण।

अनुवाद करने वाले ई टूल्स भाषाओं के बीच अनुवाद को सुगम बनाते हैं, समय और लागत की बचत करते हुए एकरूपता और उत्कृष्टता सुनिश्चित करते हैं। उदाहरण के लिए भाषिणी ऐप के द्वारा त्वरित अनुवाद प्राप्त किया जा सकता है। अंग्रेजी भाषा के साथ 22 भारतीय भाषाओं में अनुवाद की क्षमता के साथ यह ऐप भाषा सेतु का कार्य करता है। भाषिणी में वार्तालाप की सुविधा भी दी गई है जिससे दो भिन्न भाषा बोलने वाले व्यक्तियों में संवाद स्थापित हो सकता है। इसी प्रकार के ई टूल्स बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा भी विकसित किए गए हैं जो त्वरित अनुवाद प्रदान कर भाषाई विविधता से उत्पन्न बाधाओं को पाट देते हैं। भारत सरकार एवं सी-डैक, पुणे द्वारा विकसित कंठस्थ 2.0 टूल, एक अनुवाद सारथी के रूप में विभिन्न कार्यालयों में भाषा अनुवाद को सुगम बनाते हुए कार्यालयीन कामकाज को समावेशी बनाने का कार्य करता है। यह टूल मशीन लर्निंग-आधारित प्लेटफ़ॉर्म है जो स्मृति आधारित अनुवाद करता है। ई – महाशब्दकोश, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा ऑनलाइन शब्दावली जैसे टूल्स हमें भाषाई ज्ञानवर्धन करने में सक्षम करते हैं। ई – टूल्स के माध्यम से विभिन भाषाओं में टंकण सरलता से किया जा सकता है। यह टूल्स मैनुयल टंकण के साथ - साथ बोलकर अर्थात वॉइस टाइपिंग आधारित भी हैं। अब केवल बोलकर आलेख, पत्र आदि का टंकण भारतीय भाषाओं में किया जा सकता है। यह भाषाई विविधता से उत्पन्न बाधाओं का एक समावेशी समाधान है।

भाषा सेतु के रूप में ई टूल्स की भूमिका का सबसे पुख्ता उदाहरण (प्रूफ ऑफ कान्सैप्ट), प्रसिद्ध ऑनलाइन प्लैटफ़ार्म "यूट्यूब" पर उपलब्ध माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी एवं माइक्रोसॉफ़्ट के संस्थापक बिल गेट्स के बीच संवाद है। प्रधानमंत्री महोदय हिंदी भाषा में वार्तालाप कर रहे हैं वहीं बिल गेट्स अंग्रेजी भाषा में, दुभाषिया का कार्य ई टूल्स के माध्यम से प्रतिस्थापित किया गया है। दोनों व्यक्ति अपनी अलग-अलग मूल भाषा में संवाद करते है। आम नागरिक जीवन में सरकार के प्रयासों से अब ई टूल्स के उपयोग से सरकारी सेवाएँ नागरिकों को उनकी अपनी भाषा में प्रदान की जा रहीं हैं। केंद्रीकृत लोक शिकायत निवारण एवं मॉनीटरिंग प्रणाली (सी.पी.जी.आर.ए.एम.एस.) एक बहुभाषीय पोर्टल है जहाँ पीड़ित नागरिक कहीं से भी और कभी भी शिकायतें दर्ज कर सकते हैं। इसी तरह से अगर हम राष्ट्रीय ट्रेन पूछताछ प्रणाली का भी अवलोकन करें तो इस पोर्टल पर भी उन्नत उपयोगकर्ता अनुभव के लिए विभिन्न भाषाओं में यह पोर्टल

उपलब्ध है। सरकार द्वारा ई – टूल्स के प्रयोग से विकसित इसी प्रकार के कई पोर्टल्स ने सरकारी सेवाओं एवं योजनाओं तक पहुँच नागरिकों हेतु भाषाई विविधता का समावेशन कर सरल बनाया है। प्राकृतिक आपदाओं या मानवीय संकटों के दौरान, ई-टूल्स विभिन्न भाषाओं में आपातकालीन जानकारी के प्रसार और प्रभावित लोगों के साथ संचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। स्वास्थ्य सुविधाओं की पहुँच को बढ़ाने में भाषा सेतु के रूप में ई – टूल्स ने अपनी भूमिका निभाई है। डॉक्टर और मरीज विभिन्न भाषाओं में संवाद कर सकते हैं, जिससे समाज में भाषाई बाधाओं के कारण हाशिए पर पड़े लोगों तक मूलभूत स्वास्थ्य सेवाएं पहुँच रही हैं।

वित्तीय क्षेत्र में भी सरकार की नीतियों के अनुपालन में भाषा सेतु के रूप में ई – टूल्स का प्रयोग कर वित्तीय संस्थाएँ अपने ग्राहकों एवं सामान्य जन – मानस में अपने उत्पाद एवं सेवाएँ स्थानीय भाषा में उपलब्ध कर रहे हैं। यूनियन बैंक ऑफ इंडिया का मोबाइल बैंकिंग ऐप 'व्योम' 13 भाषाओं में उपलब्ध है। साथ ही, बैंक की कॉर्पोरेट वेबसाइट में उपलब्ध चैटबॉट 9 भाषाओं में सेवाएँ प्रदान करता है। ई – टूल्स के प्रयोग से ही वित्तीय संगठन देश के विकास में प्रत्येक नागरिक को जोड़ने में प्रयासरत हैं।

ई-टूल्स भाषा सीखने में शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं, क्षमता एवं प्रगति के अनुरूप अनुभव प्रदान करते हैं। भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग एवं सी – डैक द्वारा निर्मित लीला ऐप हिंदी भाषा को सीखने हेतु 15 भाषाओं के माध्यम से पाठ उपलब्ध कराता है। इस ऐप के उपयोग से अपनी मूल भाषा के माध्यम से हिंदी सीखी जा सकती है। ऑनलाइन भाषा सीखने के प्लेटफॉर्म इंटरैक्टिव पाठ और देशी वक्ताओं के साथ अभ्यास के अवसर प्रदान करते हैं, जिससे शिक्षार्थियों को बोलने और सुनने के कौशल का अभ्यास करने के लिए एक सुरक्षित और सुलभ वातावरण मिलता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) एवं मशीन लर्निंग (एमएल) जैसी उन्नत प्रौद्योगिकियाँ ई टूल्स की क्षमता में क्रांति ला रही हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) मशीनों को मानव जैसी बुद्धि प्रदान करने का विज्ञान है, जबकि मशीन लर्निंग (एमएल) एआई की एक उपशाखा है जो अनुभव से सीखने और सुधार करने के लिए एल्गोरिदम का उपयोग करती है। एआई-संचालित स्वचालन दोहराए जाने वाले कार्यों को सुव्यवस्थित करता है, दक्षता

बढ़ाता है, और मनुष्यों की तुलना में तेजी से डेटा-संचालित निर्णय लेने में मदद करता है। यह भाषा प्रसंस्करण में गति और पैमाने को सक्षम बनाता है। मशीन लर्निंग विभिन्न भाषाओं में समानांतर ग्रंथों की विशाल मात्रा का विश्लेषण करते हैं, जिससे दिए गए इनपुट के लिए सबसे संभावित अनुवाद का अनुमान लगाया जा सकता है। यह अनुवाद की सटीकता के लिए आधारशिला है। एआई, एमएल, डीप लर्निंग और प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण (एनएलपी) को भाषा बाधाओं को तोड़ने, ग्राहक सेवा में सुधार करने और जानकारी तक पहुंच बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए परिभाषित किया गया है। भाषिणी ऐप में वार्तालाप को कई भारतीय भाषाओं में त्वरित अनुवाद किए जाने हेतु एआई का प्रयोग किया जा रहा है। वह दिन दूर नहीं जब बैठकों में प्रतिभागी अपनी मूल भाषा का प्रयोग कर सकेंगे और सम्प्रेषण में कोई बाधा नहीं आएगी।

ई-टूल्स की सीमाओं को स्वीकार करना महत्वपूर्ण है। इनमें सटीकता और संदर्भ की कमी, सांस्कृतिक बारीकियों और मुहावरों को समझने में कठिनाई, कम-संसाधन वाली भाषाओं के लिए अपर्याप्त समर्थन, प्रशिक्षण डेटा में पक्षपात, गोपनीयता और नैतिक चिंताएँ एवं सृजनशीलता का अंतर्निहित अभाव शामिल हैं। ये चुनौतियां केवल तकनीकी बाधाएं नहीं हैं, बल्कि उनके गहरे सामाजिक-सांस्कृतिक और नैतिक परिणाम भी हैं, जो गलत संप्रेषण एवं संभावित दुरुपयोग का कारण बन सकते हैं। इन चुनौतियों का समाधान करना आवश्यक है। इसमें निरंतर अनुसंधान और विकास, मजबूत नियामक ढांचे का निर्माण, नैतिक दिशानिर्देशों का अनुपालन, और मानव-केंद्रित डिजाइन पर ध्यान केंद्रित करना शामिल है, विशेष रूप से भाषाई विविधता और सांस्कृतिक अखंडता को बनाए रखने के लिए। कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग में निरंतर प्रगति इन उपकरणों को और भी अधिक शक्तिशाली और सटीक बनाती जा रही है।

जैसे-जैसे दुनिया परस्पर जुड़ती जा रही है, ई-टूल्स भाषा सेतु बने रहेंगे, जो हमें अपनी भाषाई पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना एक-दूसरे के करीब लाएंगे। यह केवल शब्दों के अनुवाद से कहीं अधिक है; यह विचारों के आदान-प्रदान, समझ को बढ़ावा देने और एक अधिक समावेशी वैश्विक समाज के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करता है। ई-टूल्स ने वास्तव में हमारी दुनिया को बदल दिया है, और भविष्य में उनकी भूमिका केवल बढ़ेगी,

जिससे भाषा आपसी संवाद के लिए बाधा नहीं रहेगी, बल्कि दुनिया भर के लोगों को जोड़ने वाला एक सेतु बन जाएगी।

सीखें – सिखाएँ, भाषा अपनाएँ
ई – टूल्स से हम नया कल बनाएँ।
हर भाषा सम्मान पाए,
डिजिटल युग में भारत को विश्वगुरु बनाएँ।

आदर्श कुमार सिंह

भाषा सौहार्द इंद्रधनुष: शब्द और संबंध

भारत एक विविधताओं से भरा विशाल देश है। इसके विशाल विस्तार में अनेक भाषाओं की समृद्ध विरासत है। प्रत्येक भाषा का अपना अनूठा इतिहास और सांस्कृतिक महत्व है। आज़ादी के बाद इन भाषाओं के संरक्षण और संवर्धन के महत्व को समझते हुए भारत के संविधान में उचित प्रावधान किए गए। राज्यों का भाषाओं के आधार पर पुनर्गठन किया गया। तदुपरांत विभिन्न राज्य सरकारों ने यह सुनिश्चित करने के लिए उपाय लागू किए कि स्कूलों और कॉलेजों में राज्य की भाषाओं को प्रमुखता से पढ़ाया जाए। इसके अतिरिक्त, प्रशासन में राज्य की भाषाओं को प्रमुखता देने के लिए कदम उठाए गए। राज्य की भाषाओं में कला और साहित्य को प्रोत्साहित किया गया। इन सब कदमों के कारण इन भाषाओं का प्रसार हुआ और ये भाषाएं और अधिक समृद्ध हुई।

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया ने अपनी अखिल भारतीय उपस्थिति के साथ, स्थानीय भाषाओं के महत्व को पहचाना है और इन भाषाओं में अपनी सेवाएँ प्रदान करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए। ग्राहकों द्वारा उपयोग किए जाने वाले फॉर्म, उत्पादों के बारे में साहित्य और विज्ञापन सामग्री, इंटरनेट और मोबाइल बैंकिंग सेवाएँ, एटीएम और पोस मशीनें ग्राहकों की सुविधा के लिए हिंदी और अंग्रेजी के साथ-साथ स्थानीय भाषाओं में भी डिज़ाइन की गई। इन सभी कदमों का उद्देश्य ग्राहकों को अपनी पसंदीदा भाषा में बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराई जा सके, जिससे सेवाओं के बारे में उनका समग्र अनुभव बेहतर हो सके।

ग्राहक संतुष्टि को बढ़ाने के लिए बैंक ने शाखाओं में पदस्थ गैर-स्थानीय कर्मचारियों को स्थानीय भाषाएँ सिखाने की पहल की है। 26 जून 2024 को बैंक के केंद्रीय कार्यालय में प्रबंध निदेशक एवं सीईओ की अध्यक्षता में आयोजित राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में लिए गए निर्णय के अनुसार, "यूनियन बैंक भाषा सौहार्द इंद्रधनुष" कार्यक्रम शुरू किया गया। इस कार्यक्रम में बैंक के गैर-स्थानीय अधिकारियों को व्यावहारिक संवादात्मक स्थानीय भाषा कौशल सिखाने के लिए 30 घंटे का प्रशिक्षण मॉड्यूल डिज़ाइन किया गया। आठ सप्ताह तक चलनेवाली कक्षाएं कार्यालय समय के दौरान सप्ताह में दो बार आयोजित की जाती हैं। पाठ्यक्रम में संवाद कौशल, अक्षरों और संख्याओं को पहचानना, और बुनियादी पढ़ने और लिखने के कौशल शामिल हैं। प्रशिक्षण पूर्ण रूप से

व्यावहारिक पद्धति से आयोजित किया जाता है। प्रशिक्षण प्रदान करने में विभिन्न कुशल स्वयंसेवी और निजी संगठनों को इस उद्देश्य के लिए सूचीबद्ध किया गया है।

प्रशिक्षण का पहला बैच तेलुगु भाषा में हैदराबाद और कन्नड भाषा में मंगलूरु में पूरा हुआ। इसके आलावा, विशाखपट्टणम और विजयवाडा में तेलुगू भाषा में, तिरुवनंतपुरम, कोल्लम, त्रिश्शूर, एर्णाकुलम, कोट्टयम एवं कोष्षीकोड में मलयालम भाषा प्रशिक्षण तथा बेंगलूरु, उडुपी, मैसूरु में कन्नड भाषा प्रशिक्षण आयोजित किया गया। साथ ही, चेन्नै में तमिल और कोलकाता में बांग्ला भाषा प्रशिक्षण का भी आयोजन किया गया। सफल उम्मीदवारों को उनके प्रयासों और उपलब्धियों को मान्यता देते हुए प्रमाण पत्र भी प्रदान किए गए।

प्रशिक्षण कार्यक्रम के पूरक के रूप में बैंक ने तेलुगू, तमिल, कन्नड, मलयालम, बांग्ला, असमिया और मराठी में अध्ययन सामग्री तैयार की है। इस अध्ययन सामग्री में विभिन्न अवसरों पर प्रयुक्त किए जाने वाले शब्द और वाक्यांश शामिल हैं, जो प्रशिक्षुओं को अपने भाषा कौशल का अभ्यास और सुधार करने में मदद करते हैं।

"यूनियन बैंक भाषा सौहार्द इंद्रधनुष" कार्यक्रम का अंतिम लक्ष्य सभी गैर-स्थानीय अधिकारियों में स्थानीय भाषा में संवाद कौशल विकसित करना है। ऐसा करके, बैंक का उद्देश्य ग्राहकों की संतुष्टि बढ़ाना और अपने कर्मचारियों और ग्राहकों के बीच भाषाई सामंजस्य की भावना को बढ़ावा देना है।

इस पहल का प्रभाव उल्लेखनीय रहा है। कर्मचारियों ने बताया है कि ग्राहकों के साथ उनकी स्थानीय भाषाओं में बातचीत करने से उनका आत्मविश्वास बढ़ा है, जिससे ग्राहक सेवा में सुधार हुआ है। ग्राहकों ने अपनी पसंदीदा भाषा में संवाद करने के लिए बैंक द्वारा किए गए प्रयास की सराहना की है, जिससे बैंक के प्रति उनका विश्वास और निष्ठा मजबूत हुई है।

कमचारियों द्वारा अपने कार्यभार के साथ प्रशिक्षण का पूर्ण लाभ उठाने की सुविधा प्रदान करने के लिए बैंक ने लचीला प्रशिक्षण कार्यक्रम और अतिरिक्त सहायता प्रदान की है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि कर्मचारी अपने कार्य निष्पादन से समझौता किए बिना इसमें भाग ले सकें।

भविष्य को देखते हुए, यूनियन बैंक "भाषा सौहार्द इंद्रधनुष" कार्यक्रम का विस्तार

करके और अधिक भाषाओं व क्षेत्रों को इसमें शामिल करने की योजना बना रहा है। बैंक का लक्ष्य उन्नत भाषा प्रशिक्षण मॉड्यूल को शामिल करना और ऑनलाइन प्रशिक्षण विकल्प प्रदान करने के लिए प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना भी है। भविष्य की योजनाएँ ग्राहकों को उच्च कोटी की सेवाएं प्रदान करने के बैंक के संकल्प को मज़बूती प्रदान करेंगी। इससे अधिक संख्या में कर्मचारी भी लाभान्वित हो सकेंगे।

अंततः, "यूनियन बैंक भाषा सौहार्द इंद्रधनुष" पहल भाषाई सामंजस्य को बढ़ावा देने और ग्राहक संतुष्टि बढ़ाने का एक सराहनीय प्रयास है। स्थानीय भाषाओं के महत्व को पहचानकर और इन भाषाओं में सेवाएँ प्रदान करने के लिए सक्रिय कदम उठाकर, यूनियन बैंक अन्य संगठनों के लिए एक सकारात्मक उदाहरण स्थापित कर रहा है। भाषाई विविधताओं वाले हमारे देश में भाषाई अंतर को पाटने और एक अधिक समावेशी एवं ग्राहक-अनुकूल बैंकिंग अनुभव प्रदान करने में यह प्रशिक्षण कार्यक्रम अत्यंत सफल रहा है।

देवकांत पवार

बैंकिंग में स्थानीय भाषा का महत्व

प्रसिद्ध भाषाई मनोवैज्ञानिक अजीत मोहंती कहते हैं "भाषा हमें मानव बनाती है"। भाषा के माध्यम से हम अपने विचार और भावनाएं व्यक्त कर सकते हैं और एक दूसरे के साथ जानकारी साझा कर सकते हैं और प्राप्त जानकारी का विश्लेषण कर सकते हैं। परंतु भाषा की भूमिका केवल संप्रेषण का माध्यम होने तक ही सीमित नहीं है बल्कि भाषा किसी भी देश के सामाजिक व्यवस्था और सांस्कृतिक संरचना का एक अत्यंत महत्वपूर्ण तत्व होता है। भाषा में विविधता, में भारत की सांकृतिक विरासत का एक अभिन्न अंग है। भारत सरकार द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार देश में 1652 भाषाएं और बोलियों को संप्रेषण के माध्यम के तौर पर उपयोग किया जाता है, जिनकी जड़ें पांच विशिष्ट भाषा परिवार में पाई जाती है। हालांकि नई शिक्षा नीति 2020 के औपचारिक दस्तावेज में इस विषय पर चिंता व्यक्त की गई है, क्योंकि गत 5 दशकों के दौरान भारत ने लगभग 220 भाषाओं और बोलियां को खो दिया है और यह दस्तावेज यूनेस्को की एक रिपोर्ट का संदर्भ देते हुए इस गंभीर विषय का भी उल्लेख करती है कि लगभग 197 अन्य भाषाएं लुप्त होने की कगार पर खड़ी है, इसके बावजूद भारत का वर्णन आज भी एक बहुभाषी समाज के तौर पर किया जाता है।

कोस कोस पर बदले पानी चार कोस पर वानी यह प्रसिद्ध पंक्ति भारत के बहुभाषी सांस्कृतिक धरोहर का संभवत: सबसे सटीक वर्णन है, या फिर यह कहिए कि इस प्रसिद्ध पंक्ति का सबसे सटीक उदाहरण यदि कोई है तो वह भारत है। इसके आधार पर यह कहना गलत नहीं होगा कि भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक ढांचे के मुख्य स्तंभों में भाषा शामिल है। विशेष रूप से किसी भी ऐसी संस्था या व्यवस्था जिसकी कार्य प्रणाली में सामान्य लोगों के साथ संपर्क करना अनिवार्य होता है उसके सुचारू संचालन और विस्तार में भाषा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में इस भूमिका का स्वरूप और प्रभाव को समझने के लिए यदि किसी विशिष्ट क्षेत्र का उदाहरण दिया जा सकता है तो वो बैंकिंग क्षेत्र है। ग्राहकों के साथ संपर्क और सतत संप्रेषण बैंकों की कार्य प्रणाली का अभिन्न अंग है और ग्राहक अनुभव बैंकों द्वारा प्रदान की जा रही

सेवाओं की गुणवत्ता का कदाचित सबसे सटीक सूचक है। इस विषय में भाषा किस तरह का योगदान दे सकती हैं इसकी चर्चा में जिन बिंदुओं का विश्लेषण करना प्रासंगिक होगा उनमें निम्नलिखित शामिल है:-

1) करोबार के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति में स्थानीय भाषा की भूमिका।

2) बैंक द्वारा प्रदान की जा रही सेवाओं की गुणवत्ता का आंकलन किन मानकों के आधार पर किया जा सकता है।

3) गुणवत्ता के निर्धारित मानकों पर अच्छा कार्यनिष्पादन दर्ज करने के लिए बैंक किस प्रकार के कदम ले सकते हैं और इस प्रक्रिया में भाषा की क्या भूमिका होगी।

इन बिन्दओं की संक्षिप्त चर्चा निम्नलिखित है:-

व्यवसाय के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति में स्थानीय भाषा की भूमिका:- किसी भी व्यवसाय की स्थापना कुछ निर्धारित लक्ष्यों के साथ की जाती है और व्यवसाय का परिचालन और नियोजन इन्ही लक्ष्यों की प्राप्ति के उद्देश्य से प्रेरित होता है । अर्थशास्त्र के सिद्धांतों में व्यवसायिक इकाइयों की स्थापना के कुछ आर्थिक और गैर-आर्थिक उद्देश्यों का उल्लेख मिलता है, जिनमें अत्यधिक लाभ कमाना, संबंधित बाजार क्षेत्र में अपने हिस्से को बढ़ाना,व्यवसाय के भागीदारों की पूंजी निवेश के मूल्य में बढ़ोतरी जैसे आर्थिक स्वरूप के उद्देश्यों के साथ ग्राहक सेवा, दीर्घकाल में प्रतिस्पर्धा में बने रहना और समाज के प्रति अपने दायित्वों को निभाना जैसे गैर आर्थिक लक्ष्य शामिल है। बैंक वित्त प्रणाली में मध्यस्थ की भूमिका निभाता है जो लोगों से जमाराशि संग्रहित करके ऋण के रूप में संभावित उधारकर्ताओं को उपलब्ध कराता हैं। सामान्यतः ऋण उत्पादों पर ब्याज दर जमा उत्पादों से अधिक होती है और यह अंतर बैंक के दृष्टिकोण से लाभ का मुख्य स्रोत है जिसे अपनी गतिविधियों के माध्यम से बैंक बढ़ाने का प्रयास करता हैं इससे स्पष्ट है कि किसी भी अन्य व्यवसाय की तरह ही लाभ कमाना बैंकों का मुख्य लक्ष्यों में शामिल है परंतु भारतीय बैंकिंग के परिप्रेक्ष्य में यह देखा जा सकता है कि बैंक राष्ट्रीयकरण जैसी कई नीतियों का क्रियान्वयन सामाजिक परिवर्तन जैसे गैर-लाभ लक्ष्यों से प्रेरित रहा है।

आज भी भारतीय बैंक इन दो मुख्य लक्ष्यों को समानांतर रूप से पूरा करने का प्रयास कर रहे हैं(लाभ एवं गैर लाभ)।

बैंक द्वारा प्रदान की जा रही सेवाओं की गुणवत्ता का आंकलन किन मानकों के आधार पर किया जा सकता है।

किसी भी क्षेत्र के प्रदर्शन का आकलन स्वाभाविक रूप से इस पर निर्भर होता है कि वह अपने निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति में कितना सफल रहा है और यह सिद्धांत बैंकों पर भी लागू है ।

ग्राहक सेवा का स्तर बैंकों की कार्य कुशलता का एक महत्वपूर्ण सूचक है। ग्राहक सेवा स्तर के अनेक कारण है जिनमें संप्रेषण के माध्यम के तौर पर भाषा शामिल है । बैंक अपने व्यवसाय का विस्तार और वृद्धि के लिए ग्राहकों को अपने विभिन्न उत्पादों की जानकारी देते हैं और उन्हें विश्वास दिलाने का प्रयास करते हैं कि यह उत्पाद उनके लिए किस प्रकार से लाभदायक हो सकता है। इन प्रयासों की सफलता इस बात पर निर्भर करती है ग्राहक कि बैंक द्वारा दी जा रही जानकारी को समझ रहा है और उसके आधार पर उत्पादों का चयन कर रहा है। इसलिए स्वाभाविक है कि जानकारी किस भाषा में दी जा रही है यह बहुत मायने रखता है। यदि जानकारी ग्राहक की मातृभाषा या ऐसे किसी स्थानीय/क्षेत्रीय भाषा में दी जा रही है जिसके संग ग्राहक सहज है तभी वह दी गई जानकारी को समझ पाएगा अन्यथा बैंक के उत्पाद चाहे कितने भी आकर्षक स्वरूप के हो ग्राहक उनका लाभ नहीं समझ पाएगा।

इसी तरह जब कोई बैंक अपनी व्यावसायिक गतिविधियों के भौगोलिक विस्तार की योजना बनाते हैं तब आवश्यक है कि जिन इलाकों में विस्तार प्रस्तावित है वहां के ग्राहकों के साथ स्थानीय भाषा में संपर्क स्थापित किया जाए उदाहरण के लिए जब कोई बैंक किसी नए इलाके में अपनी शाखा की स्थापना करती है तब प्रारंभिक तौर में आवश्यक है कि वहां ऐसे कर्मचारियों की नियुक्ति की जाए जो उस इलाके की स्थानीय भाषा में निपुण हो या कार्यसाधाक ज्ञान प्राप्त हो, या कम से कम स्थानीय भाषा के साथ परिचित हो, इससे संभावित ग्राहक के साथ संपर्क स्थापित करने में सहायता होगी ।

गुणवत्ता के निर्धारित मानकों पर अच्छा कार्यनिष्पादन दर्ज करने के लिए बैंक किस प्रकार के कदम ले सकते हैं और इस प्रक्रिया में भाषा की क्या भूमिका होगी।

किसी बैंकिंग उत्पाद के विषय में कर्मचारी जो जानकारी दे रहे हैं और ग्राहकों को जो समझ आ रहा है उसमें कोई संशय नहीं होना चाहिए ।बैंकिंग क्षेत्र में ग्राहक सेवा के स्तर का एक नया सूचक है कि बैंकिंग सेवाओं की सुगमता, यह सामान्य जानकारी का विषय है कि आर्थिक परिप्रेक्ष्य में कुछ ऐसी सेवाएं रही हैं जिनके प्रारंभिक दौर में उपलब्धता किसी विशिष्ट भाषा तक सीमित रही है जब इन सेवाओं को अन्य भाषा में उपलब्ध कराया गया तब उनके विस्तार का एक बड़ा माध्यम बन गई। यहां इंटरनेट सेवाएं और डिजिटल बैंकिंग उत्पादों का उदाहरण देना प्रासंगिक होगा, इंटरनेट सेवाएं प्रारंभिक दौर में केवल अंग्रेजी में उपलब्ध थी जिसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि इनका लाभ केवल वही व्यक्ति ले पाए जो अंग्रेजी भाषा से परिचित थे। इंटरनेट सुविधा उपलब्ध कराने वाली कंपनी के दृष्टिकोण से यह ऐसा विषय था जो भारत जैसे देशों में इंटरनेट के उपयोग को प्रतिबंधित कर रहा था परंतु जब इंटरनेट सेवाओं को भारतीय भाषाओं में भी उपलब्ध किया जाने लगा तब इस क्षेत्र के विस्तार की नई गति प्राप्त हुई और भारत में इंटरनेट उपयोग करने वालों की संख्या में भारी बढ़ोतरी दर्ज हुई।

इसी तरह भारत में डिजिटल बैंकिंग उत्पादों की पहल दो दशक पहले हुई थी परंतु प्रारंभिक दौर में यह सेवाएं केवल अंग्रेजी में उपलब्ध होने के कारण इनका बैंकिंग व्यवहार करने में उपयोग सीमित रहा। भारत आज अपनी डिजिटल बैंकिंग क्षेत्र में हुए विस्तार के विषय में पूरे विश्व के समक्ष एक उदाहरण के रूप में उभरा है भारतीय राष्ट्रीय भुगतान निगम (एनपीसीआई) द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार नवंबर 2024 में यूपीआई के माध्यम से किए गए लेनदेन की संख्या 1548।202 करोड़ तक पहुंच गई जिसका मूल्य रु। 21 55 187।40 करोड़ रहा। यह आंकड़ें दर्शाते हैं कि भारत में अब भुगतान के डिजिटल विकल्प सामान्य व्यक्तियों में प्रसिद्ध हो रहे हैं इसका श्रेय कई विषयों को दिया जा सकता है जिनमें से एक महत्वपूर्ण सुविधा स्वरूप का कारक है डिजिटल बैंकिंग सेवाओं का भारतीय भाषाओं में उपलब्धता। आज डिजिटल बैंकिंग विकल्प जैसे मोबाइल बैंकिंग, इंटरनेट बैंकिंग, भारत इंटरफेस फॉर मनी जिसे यूपीआई भी कहते हैं इत्यादि कई भारतीय भाषा में उपलब्ध है जिससे ग्राहकों को उनका उपयोग करने में सुविधा होती है।

बैंक और ग्राहक के संपर्क के कई आयाम होते हैं जिनमें निम्नलिखित शामिल है:

ग्राहक की आवश्यकताओं के अनुसार वस्तु या सेवा का चयन:- ग्राहक जब अपने किसी वित्तीय स्वरूप की आवश्यकताओं को पूरा करने के उद्देश्य से किसी बैंक के पास जाता है तो पहला पड़ाव होता है कि वह अपनी आवश्यकताओं के स्वरूप का विस्तृत रूप से वर्णन करें और बैंक कर्मचारी उसे समझ कर उस आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए उपलब्ध विकल्प में सबसे सटीक और उपयुक्त विकल्प का सुझाव ग्राहक को दें, उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति सेवानिवृत्ति के बाद प्राप्त राशि को निवेश करके बचत के विकल्पों की खोज में बैंक पहुंचता है तो पहला पड़ाव होगा कि व्यक्ति बैंक कर्मचारियों को अपनी अल्पकालिक और दीर्घकालिक आवश्यकताओं की विशेष जानकारी दें और कर्मचारी समझे कि वह उस व्यक्ति को उसकी आवश्यकता अनुसार विकल्पों का सुझाव दें, इस संवाद में भाषा एक निर्णायक भूमिका निभा सकती हैं। यदि सेवानिवृत व्यक्ति, कर्मचारी से उसी भाषा में चर्चा कर पता है जिसमें वह सहज है तो संप्रेषण की प्रक्रिया सफल होगी, संप्रेषण सार्थक तभी है "जब मैं जो बात,जैसी कह रहा हूँ आप भी उसे उसी तरह से समझें" ।

विवाद निवारण में भाषा की भूमिका: ग्राहक को यदि बैंक से कोई शिकायत है तो उसके निवारण में भी भाषा एक बड़ी भूमिका निभाता है। ग्राहक के पास विकल्प होना चाहिए कि वह अपनी शिकायत उसी भाषा में दर्ज करें जिसके माध्यम से संप्रेषण में वह सहज है और उसके निवारण संबंधी जानकारी भी उसे उसी भाषा में दी जाए। यह ग्राहक और बैंक दोनों की दृष्टियों से महत्वपूर्ण है क्योंकि यदि ग्राहक इस प्रक्रिया से संतुष्ट नहीं हुआ तो उसके अनुसार उसे हुए प्रत्यक्ष नुकसान के अलावा उसके मन में बैंक के प्रति नकारात्मक विचार उत्पन्न होगा जो अन्यथा बैंक को ग्राहक के परस्पर संबंधों को नकारात्मक रूप से प्रभावित करेगा।

उपरोक्त चर्चा से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बैंकिंग सेवा की गुणवत्ता मुख्य रूप से ग्राहक सेवा के स्तर पर निर्भर है और ग्राहक सेवा के स्तर को बनाए रखने में भाषाओं की भूमिका महत्वपूर्ण है किसी भी व्यक्ति के जीवन में भाषा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत के एक प्रांत में रहने वाला व्यक्ति जब रोजगार या पर्यटन के

लिए किसी दूसरे प्रांत में जाता है और वहां उसका परिचय उसकी बोली/ भाषा बोलने वाले व्यक्ति के साथ होता है तो उसे जितना आनंद का अनुभव होगा उसका वर्णन शब्दों में करना कठिन है। इसी तरह जब कोई भारतीय, विदेश जाता है और किसी भारतीय भाषा की गूंज उसके कानों पर पड़ती है तो उसे पराये लोगों के बीच रहते हुए भी एक गहरा अपनापन महसूस होता है, यह इस बात का संकेत है कि भाषा के साथ व्यक्ति की भावनाएं जुड़ी होती हैं भाषा व्यक्ति की पहचान होती है जो उसे एहसास दिलाता है कि वह भौतिक रूप से चाहे जहां हो परंतु मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक रूप से वह अपनी संस्कृति के साथ सदैव जुड़ा रहता है।

इसलिए जब बैंक किसी व्यक्ति के साथ उसकी मूल भाषा में संवाद करता है तो ग्राहक के रूप में उस व्यक्ति के मन में एक सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित होना स्वाभाविक है। सकारात्मक दृष्टिकोण से स्थापित संबंधों का भविष्य में सकारात्मक दिशा में आगे बढ़ने की संभावना अधिक होती है, यह कहना गलत नहीं होगा कि गुणवत्तापूर्ण बैंकिंग के मार्ग में भाषा एक सड़क भी साबित हो सकती है और विपरीत परिस्थितियों में अवरोध भी।

पूजा वर्मा

ग्राहक सेवा में भाषा से विश्वास

जीवन के सफर में हम सभी ग्राहक हैं। हम दुकान से सामान खरीदते हैं, बैंक में खाता खुलवाते हैं, ऑनलाइन सेवाओं का उपयोग करते हैं, यात्रा के लिए टिकट आरक्षित करते हैं। अनगिनत बार किसी न किसी ग्राहक सेवा से संपर्क करते हैं। ग्राहक सेवा का महत्व केवल सेवा या उत्पाद तक ही सीमित नहीं होता है, वरन यह किसी भी कारोबार की सफलता का मूल आधार भी होता है। आज के प्रतिस्पर्धी बाजार में ग्राहक सेवा किसी भी संस्था के लिए पहचान और प्रतिष्ठा का सबसे बड़ा स्तंभ होता है। सेवा में गुणवत्ता, समय पर समाधान, उचित मूल्य यह सब तो जरूरी है ही, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण तत्व है भाषा। भाषा ही वह माध्यम है जिसके जरिये ग्राहक और संस्था के बीच संवाद होता है और यही संवाद विश्वास का सूत्र बनती है।

एक पुरानी कहावत है, "वाणी में मर्यादा हो तो बैर मिट जाता है।" ग्राहक सेवा में भाषा की भूमिका केवल सूचना देने या समस्या सुलझाने तक सीमित नहीं होती। भाषा शैली ग्राहक के दिल में यह भरोसा पैदा करती है कि वह भी महत्वपूर्ण है, उसकी बात सुनी जा रही है और उसकी समस्या का समाधान किया जाएगा। यहाँ हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि भाषा से ग्राहक सेवा में विश्वास कैसे उत्पन्न होता है, उसके कौन-कौन से पहलू होते हैं, भाषा में कौन-सी विशेषताएँ आवश्यक हैं, और भाषा प्रयोग में हमें किन गलतियों से बचना चाहिए।

भाषा और विश्वास का मूल सिद्धांत: विश्वास कोई एक दिन में उत्पन्न नहीं होता। यह निरंतर संवाद, अनुभव और व्यवहार से बनता है। भाषा इस प्रक्रिया का मूल आधार होती है। मानव सभ्यता के आरंभ से ही भाषा केवल सूचना के आदान-प्रदान का माध्यम नहीं रही है, बल्कि यह रिश्तों, भावनाओं और विश्वास को व्यक्त करने का साधन भी रही है। किसी की बातें हमें दिलासा देती हैं, तो किसी की कठोर शब्द हमें चोट भी पहुँचाते है। यही सिद्धांत ग्राहक सेवा पर भी लागू होता है। यदि ग्राहक सेवा प्रतिनिधि की भाषा में ईमानदारी, सरलता और आदर होगा, तो ग्राहक को लगेगा कि संस्था विश्वसनीय है। यदि भाषा में भ्रम, झूठ या रूखापन होगा, तो ग्राहक का भरोसा टूट जाएगा। विश्वास और भाषा के इस संबंध को तीन मुख्य स्तरों पर समझा जा सकता है:

❖ **भावनात्मक स्तर:** भाषा से भावनाएँ जुड़ी होती हैं। अतः, सहानुभूति, आदर, विनम्रता, ये सब भाषा में झलकते हैं।

❖ **बौद्धिक स्तर:** भाषा से सूचनाएँ स्पष्ट होती हैं। अस्पष्ट या जटिल भाषा ग्राहक को असुरक्षित और संदिग्ध महसूस कराती है।

❖ **सामाजिक स्तर:** भाषा से सांस्कृतिक और सामाजिक जुड़ाव बनता है। ग्राहक की भाषा या बोली में संवाद उससे जुड़ाव को बढ़ाता है।

ग्राहक सेवा में भाषा की भूमिका: ग्राहक सेवा का उद्देश्य केवल उत्पाद या सेवा से जुड़ी समस्याओं का हल देना नहीं है, बल्कि ग्राहक के अनुभव को सुखद और भरोसेमंद बनाना है। इसमें भाषा की भूमिका निम्न प्रकार की हो सकती है:

❖ **समस्या को सही प्रकार से समझना और समझाना:** ग्राहक अपनी समस्या सेवा प्रतिनिधि को बताता है। अगर सेवा प्रतिनिधि समस्या को ध्यान से सुनकर सरल भाषा में उसका समाधान ग्राहक को समझाता है, तो ग्राहक को संतोष मिलता है, और उसे विश्वास होता है कि उसकी समस्या का समाधान हो जाएगा।

❖ **तनाव और नाराज़गी को कम करना:** ग्राहक अक्सर नाराज़ या परेशान होकर कॉल करता है। सहानुभूतिपूर्ण भाषा उसकी नाराज़गी को कम करती है तथा उसका मानसिक तनाव भी कम हो जाता है।

❖ **संस्था की छवि को दर्शाना:** ग्राहक सेवा में प्रयुक्त होने वाली भाषा ही संस्था की संस्कृति और सोच को दर्शाती है।

❖ **ग्राहक से दीर्घकालिक रिश्ता बनाना:** एक बार का अच्छा अनुभव ग्राहक को बार-बार लौटने पर मजबूर करता है। भाषा इसमें सेतु का कार्य करती है।

अच्छे संवाद के तत्व: भाषा के माध्यम से विश्वास उत्पन्न करने के लिए ग्राहक सेवा में संवाद के निम्न गुण होने चाहिए:

❖ **स्पष्टता:** भ्रमित करने वाली या अस्पष्ट भाषा ग्राहक के संदेह को बढ़ाती है। स्पष्ट शब्दों में जानकारी देना, प्रक्रिया समझाना और समय-सीमा बताना जरूरी होता है। उदाहरण स्वरूप यदि आप कहते है कि "आपका काम जल्दी हो जाएगा।" इससे बेहतर होगा आप कहें कि "आपका काम 06 घंटे में पूरा हो जाएगा।"

❖ **सरलता:** साधारणतया ग्राहक तकनीकी विशेषज्ञ नहीं होता है। कठिन शब्द या जटिल प्रक्रिया से वह उलझ जाता हैं। आसान भाषा में बात करें। उदाहरण स्वरूप यदि आप कहते है "आपका अनुरोध एस्केलेशन प्रोसस में है।" तो संभावना है कि ग्राहक को समझ में न आए, परंतु, यदि आप कहते है कि "हमने आपकी शिकायत वरिष्ठ अधिकारी को भेज दी है।" तो ग्राहक को अवश्य समझ में आएगा।

❖ **विनम्रता:** भाषा में आदर झलकना चाहिए। कृपया, धन्यवाद, माफ कीजिए जैसे शब्द रिश्ते में नरमी लाते हैं। उदाहरण के रूप में "माफ कीजिए, आपको असुविधा हुई।" और "कृपया हमें और जानकारी दें ताकि हम आपकी बेहतर सहायता कर सकें।"

❖ **सहानुभूति:** ग्राहक की समस्या को महसूस करना और उसे यह एहसास दिलाना कि आप उसकी परवाह करते हैं, विश्वास का आधार होता है। यथा "मैं समझ सकता हूँ कि यह आपके लिए कितना परेशान करने वाला है। हम इसे शीघ्र ठीक करेंगे।"

❖ **सकारात्मकता:** नकारात्मक शब्द डर पैदा करते हैं। सकारात्मक भाषा उम्मीद जगाती है। जैसे कि "यह नहीं हो सकता।" या "इसका एक दूसरा तरीका है, आइए उसे आजमाते है।"

❖ **धैर्य:** प्रत्येक ग्राहक एक जैसा नहीं होता। कुछ लोग अधिक सवाल पूछते हैं। इसलिए, भाषा में धैर्य रखना जरूरी है, यथा "कोई बात नहीं, मैं फिर से समझा देता हूँ।"

❖ **भाषा और सांस्कृतिक विविधता:** भारत जैसे बहुभाषी देश में ग्राहक सेवा में भाषा का सांस्कृतिक पक्ष और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। यदि कोई ग्राहक कन्नड, मराठी, बांग्ला या तमिल में बात करना चाहता है और सेवा उसी भाषा में मिले, तो उसे सम्मान का एहसास होता है।

❖ **क्षेत्रीय अभिव्यक्तियों की समझ:** प्रत्येक भाषा की अपनी शैली और अभिव्यक्ति होती है। ग्राहक की संस्कृति को समझकर भाषा का प्रयोग करना आवश्यक होता है।

❖ **भाषाई विविधता और समावेशिता:** बहुभाषी कस्टमर सपोर्ट से संस्थाएं यह संदेश देती हैं कि वे प्रत्येक ग्राहक की परवाह करती हैं। उदाहरण स्वरूप, बैंक के कॉल सेंटर पर एक ग्राहक अपनी पेंशन में गड़बड़ी की शिकायत करता है। सेवा सहयोगी उखड़े स्वर में कहता है, "यह तो आपके विभाग की गलती है, हम कुछ नहीं कर सकते।" ग्राहक नाराज़ होकर बैंक बदल देता है। दूसरी स्थिति में सेवा सहयोगी कहता है, "मुझे

खेद है कि आपको समस्या हुई। मैं पूरी जानकारी लेकर देखता हूँ कि हम आपकी कैसे मदद कर सकते हैं।" ग्राहक को संतोष मिलता है और वह उसी बैंक में बना रहता है। इसी प्रकार एक ग्राहक ने बैंक की वेबसाइट पर हिंदी में अपनी शिकायत दर्ज की। ग्राहक सेवा प्रतिनिधि ने भी हिंदी में जवाब दिया, तथा सरल शब्दों में प्रक्रिया भी समझाई। साथ ही ग्राहक को हुई तकलीफ के लिए माफी भी माँगी। ग्राहक ने सोशल मीडिया पर उस बैंक की तारीफ की और कई ग्राहकों को उस बैंक में खाता खोलने की सलाह भी दी।

डिजिटल युग में ग्राहक सेवा की भाषा: आज कल ग्राहक सेवा केवल कॉल सेंटर तक सीमित नहीं है। ईमेल, चैटबॉट, सोशल मीडिया, ऐप्स आदि सभी माध्यमों में भाषा महत्वपूर्ण है।

❖ **ईमेल में भाषा:** ईमेल में भाषा पेशेवर व मानवीय होने के साथ-साथ संक्षिप्त तथा स्पष्ट होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त, सम्मानजनक अभिवादन के साथ आरंभ व समापन होना चाहिए।

❖ **चैट में भाषा:** अनौपचारिक लेकिन शिष्ट होनी चाहिए, साथ ही त्वरित परंतु सटीक भी होनी चाहिए।

❖ **सोशल मीडिया:** सोशल मीडिया जैसे सार्वजनिक मंच पर भाषा में विनम्रता आवश्यक है। समस्याओं को निजी बातचीत में ले जाकर हल करना हमेशा लाभदायक होता है।

❖ **चैटबॉट:** चैटबॉट की भाषा स्वचालित होते हुए भी मानवीय होनी चाहिए। साथ ही उपयोगकर्ता को जटिलता से मुक्त भी रखना चाहिए।

भाषा के खराब उपयोग से नुकसान: भाषा के गलत प्रयोग से संस्था की छवि और ग्राहक के विश्वास दोनों को गहरी क्षति पहुँचती है।रूखा या अपमानजनक लहजा होने से ग्राहक अपमानित महसूस करता है। अस्पष्ट या झूठी जानकारी होने से भ्रम फैलता है और ग्राहक का भरोसा टूटता है। ग्राहक की बोली या भाषा की उपेक्षा से उसे महसूस होता है कि उसकी परवाह नहीं की जा रही है। इसके अतिरिक्त, अत्यधिक जटिल शब्दावली से ग्राहक में भय उत्पन्न होता है और वह असुरक्षित महसूस करता है।

विश्वास निर्माण की रणनीतियाँ: प्रशिक्षण के माध्यम से सेवा प्रतिनिधियों को भाषा की कला सिखाई जा सकती है। इसके अतिरिक्त मानव-केंद्रित दृष्टिकोण अर्थात ग्राहक

को केवल एक उपभोक्ता न समझें, बल्कि एक संवेदनशील व्यक्ति मानें। साथ ही स्थानीय भाषाओं में सेवा प्रदान कर क्षेत्रीय जुड़ाव द्वारा भरोसा बढ़ाया जा सकता है। रिकॉर्डेड कॉल या चैट की गुणवत्ता की जांच द्वारा उसकी समीक्षा के उपरांत सुधार किया जा सकता है। सबसे महत्वपूर्ण है ग्राहक से फीडबैक लेना, "क्या हमारी भाषा और सेवा संतोषजनक थी?"

ग्राहक सेवा केवल एक समस्या समाधान ही नहीं है, वरन् यह एक रिश्ते की शुरुआत होती है। भाषा इस रिश्ते की आत्मा होती है। शब्दों में छुपा सम्मान, सहानुभूति, स्पष्टता और सरलता ही विश्वास की नींव रखते हैं। संस्था चाहे कितनी भी बड़ी हो, उसकी तकनीक चाहे कितनी भी उन्नत हो, अगर उसकी भाषा में अपनापन नहीं होगा, तो ग्राहक उस पर भरोसा नहीं करेगा। ग्राहक सेवा प्रतिनिधि के शब्द ग्राहक के दिल तक पहुँचते हैं। यही शब्द संस्था की छवि बनाते या बिगाड़ते हैं। इसलिए, प्रत्येक संस्था और सेवा प्रदाता को यह समझना चाहिए कि भाषा केवल शब्दों का खेल नहीं है, यह भरोसे की डोर है। भाषा में संस्कार, सम्मान, सरलता और सत्य हो, तो ग्राहक सेवा विश्वसनीय बनती है।

कृष्ण कुमार यादव

लुप्त होती क्षेत्रीय भाषाएं

'कोस-कोस पर बदले पानी, चार कोस पर बानी' — जब यह कहा जाता है कि प्रत्येक चार कोस पर बोली या भाषा बदल जाती है तो इसका अर्थ है कि यह केवल बोली ही नहीं बदलती, बल्कि सूक्ष्म तौर पर वहाँ की संस्कृति, सामाजिकता, विचार और व्यवहार तक बदल जाते हैं और चार कोस तो फिर भी कहावत है, वास्तविकता यह है कि एक भौगोलिक सीमा में बसे छोटे पारिवारिक समूह के बाद भाषा का स्वरूप कुछ न कुछ बदल ही जाता है। अतः किसी भौगोलिक सीमा में भी भाषा या बोली केवल आदान–प्रदान का माध्यम ही नहीं है, बल्कि वहां के लोगों की पहचान है।

भाषा समाज की रीढ़

भाषा बोली भी जाती है और लिखी भी जाती है। बोलने के लिए केवल ध्वनियों के उच्चारण का अभ्यास पर्याप्त नहीं माना जाता। बोली का अपना एक लहजा भी होता है जिसे बोली बोलने वालों के साथ रहकर ही सीखा जा सकता है। इसी तरह लिखने के लिए भाषा के लिपिचिह्नों के अंकन की विधि सीखी जाती है। बोलियों में प्रायः लोक साहित्य मुखरित होता है और भाषाओं में नागर साहित्य लिखा जाता है। लिखने का मतलब आदर्श हिंदी शब्दकोश में किसी नुकीली वस्तु से रेखा, अक्षर आदि के रूप में चिह्नित करना भी है। यद्यपि कोई भी बोली या भाषा किसी भी लिपि में लिखी जा सकती है, पर हर लिपि किसी विशेष भाषा के लिए ही विकसित होती है और उसके लिए रूढ़ हो जाती है।

किसी भी समाज की भाषा उस अंचल की रीढ़ होती है। भाषा सिर्फ अभिव्यक्ति का साधन ही नहीं होती, बल्कि उसमें इतिहास और मानव विकास क्रम के कई रहस्य छिपे होते हैं। बाज़ार, रोजगार और शिक्षा जैसे कारणों से जनजातीय बोलियों में बाहर के शब्द तो प्रचलित हो रहे हैं, लेकिन उनकी अपनी मातृभाषा के स्थानिक शब्द प्रचलन से बाहर हो रहे हैं। दुखद है कि हजारों सालों से बनी एक भाषा, एक विरासत, उसके शब्द, उसकी अभिव्यक्ति, खेती, जंगल, इलाज और उनसे जुड़ी तकनीकों का समृद्ध ज्ञान, उनके मुहावरे, लोकगीत और लोककथाएं लुप्त होने लगी हैं।

बीते 30–40 सालों में एक बड़ी आबादी की मातृभाषा लुप्त हो चुकी है। इस दौरान देश की 500 भाषा/बोलियों में से लगभग 300 लुप्त हो चुकी हैं और 190 से ज्यादा भाषाएं

लुप्त होने की कगार पर हैं। पिछले 50 साल में भारत की करीब 20 प्रतिशत भाषाएं विलुप्त हो गई हैं।

2011 की जनगणना के अनुसार देश के सवा अरब लोग 1652 मातृभाषाओं में बात करते हैं। इनमें सबसे ज्यादा 42,20,48,642 लोग (41.03 प्रतिशत) हिंदी भाषी हैं। राजस्थानी बोलने वाले 1,83,55,613 (1.78 प्रतिशत) लोग हैं। मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र के 28,672 वर्ग मील के बड़े क्षेत्र में भील रहते हैं, पर भीली बोलने वाले 95,82,957 (0.93 प्रतिशत) और संथाली बोलने वाले मात्र 64,69,600 (0.63 प्रतिशत) लोग ही हैं।

देश में लगभग 550 जनजातियां निवास करती हैं जिनकी अपनी-अपनी बोलियां हैं। लेकिन इनमें से कई बोलियों को बोलने वालों की संख्या अब घटकर सिर्फ हजारों में सिमट चुकी है। जनजातीय बोलियों को लिपिबद्ध किए जाने की अब तक कहीं कोई गंभीर कोशिश नहीं हुई है। इन्होंने अपने वाचिक स्वरूप में ही हजारों सालों का सफर तय किया है। जानकारों का मानना है कि जब तक इन बोलियों या भाषाओं को छात्रों के पाठ्यक्रम से नहीं जोड़ा जाता, तब तक इन्हें आगे बढ़ाने की बात बेमानी ही साबित होगी। बच्चे अपनी स्थानीय बोलियों से लगातार कटते जा रहे हैं। यदि समय रहते इन बोलियों के संरक्षण के लिए ठोस कदम नहीं उठाए गए तो जल्द ही ये पूरी तरह लुप्त हो जाएंगी। यह सिर्फ एक बोली या भाषा की नहीं, बल्कि मानव समाज की कई अमूल्य विरासतों की भी विलुप्ति होगी।

भाषाओं का लुप्त होना सांस्कृतिक नुकसान तो है ही, साथ ही आर्थिक नुकसान भी है। भाषा आर्थिक पूंजी होती है क्योंकि आज की सभी तकनीक भाषा पर आधारित हैं। चाहे पहले की रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान या इंजीनियरिंग से जुड़ी तकनीकें रही हों या आज के दौर का यूनिवर्सल अनुवाद, मोबाइल तकनीक — सभी भाषा से जुड़ी हैं।

भाषा बचाने का मतलब है कि भाषा बोलने वाले समुदाय को बचाना। ऐसे समुदायों के लिए जो नए विकास के विचार से पीड़ित हैं, उनके लिए माइक्रोप्लानिंग की ज़रूरत है। हर समुदाय के लिए अलग योजना आवश्यक है। बहुत से लोग शहरीकरण को भाषाओं के लुप्त होने का कारण मानते हैं। अत: शहरों में इन भाषाओं की अपनी एक जगह होनी चाहिए। बड़े शहरों का बहुभाषी होकर उभरना ज़रूरी है। हमारे देश में राष्ट्रीय स्तर की

योजनाएं बनती हैं और राज्यों में उसी की छवि देखी जाती है। इसी तरह पूरे देश में भाषा के लिए योजना बनाना ज़रूरी है।

गृह मंत्रालय के अधीन कार्यरत जनगणना निदेशालय की रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत में 22 अधिसूचित तथा 100 गैर-अधिसूचित भाषाएं हैं, जिन्हें एक लाख या इससे अधिक लोग बोलते हैं। संयुक्त राष्ट्र ने भी 42 भारतीय भाषाओं या बोलियों की सूची तैयार की है जो खतरे में हैं और धीरे-धीरे विलुप्त होने की ओर बढ़ रही हैं।

संकटग्रस्त भाषाओं में 11 अंडमान और निकोबार द्वीप समूह की हैं — ग्रेट अंडमानीज, जरावा, लामोंगजी, लुरो, मियोत, ओंगे, पु, सनेन्यो, सेंतिलीज, शोम्पेन और तकाहनयिलांग।

मणिपुर की सात संकटग्रस्त भाषाएं हैं — एमोल, अक्का, कोइरेन, लामगैंग, लैंगरोंग, पुरुम और तराओ।

हिमाचल प्रदेश की चार भाषाएं — बघाती, हंदुरी, पंगवाली और सिरमौदी भी खतरे में हैं।

ओडिशा की मंडा, परजी और पेंगो भाषाएं भी संकटग्रस्त सूची में शामिल हैं।

सांस्कृतिक और भाषाई विविधताओं के मनकों को एक सूत्र में पिरोकर ही भारत की कल्पना साकार होती है। समय ने भले ही लोगों को समाज, शिक्षा, व्यवसाय और तकनीकी संचार से जुड़ी विभिन्न भाषाओं के साथ जीने का आदी बना दिया हो, पर हमारे अवचेतन की भाषा एक ही होती है, जिसे हम मातृभाषा कहते हैं। जन्म और संस्कारों के साथ चलने वाली यह भाषा न केवल हमारे बोध को सुगम बनाए रखती है, बल्कि नवीनता, अनुसंधान और कलात्मकता के लिए उत्प्रेरक का कार्य करती है।

भाषाओं की विविधता और उनके संरक्षण एवं संवर्धन के उद्देश्य से 1999 से हर साल 21 फरवरी को अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस मनाया जाता है। परंतु भारत में क्षेत्रीय भाषाओं और भाषाई संस्कारों को बचाने की कवायद उससे कहीं पहले शुरू हो चुकी थी। सदियों से शासक वर्ग की भाषा को राजकाज और ज्ञानार्जन का माध्यम बनाकर थोपा गया, चाहे वह अरबी-फारसी रही हो या आधुनिकता का चोला ओढ़े आई अंग्रेज़ी। अवधी, मैथिली, मराठी और बांग्ला जैसी भाषाएं आज भी संघर्षरत हैं।

इस संदर्भ में उच्च न्यायालयों में हिंदी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के इस्तेमाल को बढ़ावा देने की संसदीय समिति की मांग स्वागत योग्य है। वर्तमान में सर्वोच्च न्यायालय समेत देश के 24 उच्च न्यायालयों के फैसले अंग्रेज़ी में जारी होते हैं। ऐसे में कोलकाता, मद्रास, गुजरात, छत्तीसगढ़ और कर्नाटक उच्च न्यायालयों में बंगाली, तमिल, गुजराती, हिंदी और कन्नड़ भाषा के इस्तेमाल के लिए भेजे गए प्रस्तावों पर सकारात्मक पहल करते हुए केंद्र को समावेशी कदम उठाने की जरूरत है।

भारत में भाषाई संरक्षण के प्रयास

भारत में भाषाई संरक्षण के कई प्रयास किए जा रहे हैं, जिनमें सरकारी, शैक्षणिक, डिजिटल और सामाजिक स्तर की पहलें शामिल हैं।

1. सरकारी योजनाएँ और पहल - लुप्तप्राय भाषाओं की सुरक्षा और संरक्षण योजना (SPPEL): 2013 में केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गई। इसके तहत केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थान (CIIL), मैसूर ऐसी भाषाओं का दस्तावेजीकरण, संरक्षण और प्रलेखन कर रहा है, जिनके बोलने वालों की संख्या दस हजार से कम है। अब तक 117 भाषाओं का चयन किया जा चुका है और भविष्य में लगभग 500 भाषाओं के अध्ययन की योजना है। इसमें द्विभाषी/त्रिभाषी शब्दकोश, व्याकरण, प्राइमर और समुदाय की जातीय-भाषाई प्रोफाइल भी बनाई जाती हैं।

जनजातीय भाषाओं के लिए टीआरआई सहायता योजना: जनजातीय कार्य मंत्रालय, राज्यों के जनजातीय अनुसंधान संस्थानों (टीआरआई) के माध्यम से आदिवासी भाषाओं के संरक्षण हेतु डिजिटल शब्दकोश, प्राइमर आदि विकसित कर रहा है।

सरकारी आश्रम स्कूलों में भाषा विशेषज्ञों और समुदायों के सहयोग से प्राथमिक कक्षाओं में मातृभाषा आधारित शिक्षा को बढ़ावा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020): मातृभाषा एवं क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षण पर बल।

यूजीसी पहल: विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने राज्य विश्वविद्यालयों में स्थानीय और लुप्तप्राय भाषाओं के अध्ययन एवं अनुसंधान के लिए वित्तीय सहायता योजना चलाई है।

2. डिजिटल संरक्षण और समाज आधारित प्रयास

डिजिटल प्लेटफॉर्म: ऑनलाइन भाषाई ज्ञानकोश, शब्दकोश, ग्रंथावली आदि। कई एनजीओ, स्टार्टअप और समुदाय डिजिटल आर्काइव, ऑडियोबुक, ई-बुक, सोशल मीडिया, यूट्यूब आदि से योगदान दे रहे हैं।

यूनेस्को का प्रयास: 2022–2032 को "International Decade of Indigenous Languages" घोषित किया गया है।

3. प्रमुख रणनीतियाँ

- संकटग्रस्त भाषाओं का दस्तावेजीकरण
- शब्दकोश, व्याकरण और साहित्य का संग्रह
- प्राथमिक शिक्षा में क्षेत्रीय/मातृभाषा का प्रयोग
- सांस्कृतिक पहचान और गौरव का संवर्धन
- डिजिटल और सोशल मीडिया से युवाओं में रुचि जगाना

भाषाओं को सहेजने के प्रयास

कुछ संस्थान ऐसे भी हैं जो बोली-भाषाओं को सहेजने की दिशा में प्रयास कर रहे हैं। बड़ौदा स्थित 'भाषा संशोधन प्रकाशन केंद्र' पश्चिम भारत की जनजातीय बोलियों को सहेजने की कोशिश कर रहा है। यह गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश और राजस्थान के सीमावर्ती इलाकों में रहने वाली आदिवासी जनजातियों की अर्थव्यवस्था, उनके वन-अधिकार, विस्थापन, परंपरा, खेती और सेहत से जुड़े ज्ञान आदि और इनके मौखिक साहित्य, गीत, कथाएं आदि मुद्दों पर काम कर रहा है। इसके लिए शोध और प्रकाशन भी किए जा रहे हैं। ऐसा ही कुछ मैसूर का भारतीय भाषा संस्थान भी कर रहा है। इसके पूर्व उप-निदेशक प्रो। जेसी शर्मा बताते हैं, 'बोलियां लगातार खत्म होने के कगार पर हैं। हमें आदिवासियों के बीच काम करते हुए इन्हें सहेजने की दिशा में काफी काम करने की जरूरत है। अपने स्तर पर हमने कुछ प्रयास शुरू किए हैं। इनका अच्छा परिणाम रहा है। हम बोली के साथ ही उसके परंपरागत ज्ञान को भी सहेजने की कोशिश कर रहे हैं।'

लेकिन ऐसे प्रयास बेहद सीमित ही हैं। इसका अंदाजा इस तथ्य से भी लगाया जा सकता है कि भाषा विज्ञानी ग्रियर्सन के बाद बीते लगभग 100 सालों में कभी बोलियों या भाषाओं का सर्वेक्षण तक नहीं हुआ है।

भारत में विविध भाषाओं के संरक्षण हेतु नीतिगत, अकादमिक, डिजिटल और सामाजिक स्तर पर निरंतर प्रयास चल रहे हैं। लेकिन उनकी सफलता के लिए सतत सामुदायिक भागीदारी, डिजिटल नवाचार और सरकारी सहयोग आवश्यक है।

भाषा सामाजिक निर्मिति का एक महत्त्वपूर्ण आधार है। समाज भाषा की संरचना करता है और भाषा समाज को गढ़ती है।

सुनील दत्त

डिजिटल उत्पादों में क्षेत्रीय भाषा एवं सुगम्यता

वर्तमान समय में किसी भी उत्पाद के निर्माण में उसकी वैश्विकता और सर्वसुलभता पर विशेष बल दिया जाता है। इस पर जोर देने के पीछे अनेक मानवीय और व्यक्तिगत आवश्यकताओं से जुड़े पहलुओं पर गहन विचार किया जाता है। ऐसा करना न केवल हमारे इस युग की मांग है, बल्कि यह भारतीय परंपरा में निहित 'वसुधैव कुटुंबकम्' की उक्ति को चरितार्थ करने का एक सुनहरा अवसर भी है।

बैंकिंग और वित्तीय क्षेत्र में हमारा लक्ष्य जब शत-प्रतिशत पहुँच का हो चुका है, ऐसे में यह बेहद ज़रूरी हो जाता है कि हम अपने उत्पादों को प्रत्येक स्तर पर सबकी पहुँच और सर्व-उपयोगिता के आधार पर डिज़ाइन करें।

कंप्यूटर जैसी तकनीक को वैश्विक स्तर पर पहुँचने में लंबा समय लगा। इसका एक बड़ा कारण था उक्त प्रौद्योगिकी का सभी भाषाओं में उपलब्ध न हो पाना। शुरुआत में कंप्यूटर केवल अंग्रेज़ी और अन्य पश्चिमी यूरोपीय भाषाओं में ही उपलब्ध थे, किंतु 1991 में जब यूनिकोड का विकास किया गया, उसके बाद से एशिया और अफ्रीका के कई देशों में इस तकनीक का विस्तार हुआ। अधिकाधिक लोग कंप्यूटर साक्षर बने, जिससे इन देशों में डिजिटलीकरण आसान हो सका।

अपने देश भारत की बात करें तो हम पाते हैं कि यहाँ भूमंडलीकरण और डिजिटलीकरण को स्वीकार किए जाने के बाद प्रौद्योगिकी को अपनाने और उसका उपयोग करते हुए आगे बढ़ने की प्रवृत्ति बलवती हुई है। ऐसे में, कंप्यूटर और अन्य तकनीकी-आधारित उत्पादों का देश में तेज़ी से विस्तार हुआ। जब बैंकों और अन्य वित्तीय संगठनों द्वारा प्रौद्योगिकी-आधारित कामकाज को बढ़ावा दिया गया, तब विभिन्न भाषाओं में अपने उत्पाद तैयार कर जारी करने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी।

हमारे देश में राष्ट्रीयकृत बैंकों और वित्तीय संस्थानों, जैसे बैंकिंग वित्तीय संगठन और विभिन्न स्तरों पर नियंत्रण करने वाले कार्यालयों की उपस्थिति देशभर में है। चूँकि हमारा देश भाषाई आधार पर विविधतापूर्ण है तथा प्रत्येक क्षेत्र की भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में सूचीबद्ध कर संवैधानिक दर्जा भी प्रदान किया गया है, ऐसे में यह आवश्यक

हो जाता है कि क्षेत्रीय आधार पर डिजिटल उत्पादों को स्थानीय भाषाओं में जारी किया जाए ताकि उनकी पहुँच देश के प्रत्येक नागरिक तक हो सके।

संविधान निर्माताओं ने संविधान में हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया। इसके साथ ही, 14 अन्य भाषाओं को आठवीं अनुसूची में स्थान देकर संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया। बाद के वर्षों में, स्थानीय आवश्यकताओं और नागरिकों द्वारा की गई माँग के आधार पर, देश में प्रचलित 8 अन्य भाषाओं को भी आठवीं अनुसूची में शामिल कर संवैधानिक दर्जा दिया गया है।

संघ सरकार के सभी उपक्रम अपनी सूचनाएँ हिंदी और अंग्रेजी में जारी करते हैं। वहीं, हिंदीतर क्षेत्रों में स्थानीय भाषा, हिंदी और अंग्रेजी में सूचना जारी करने का प्रावधान रहा है। हालाँकि, आज सरकारी और गैर-सरकारी उपक्रमों का कार्यक्षेत्र केवल सूचना प्रदान करने तक सीमित नहीं रह गया है। अब हमें प्रत्येक जानकारी को, जो उपयोगकर्ता के लिए आवश्यक है, हिंदी और स्थानीय भाषाओं में उपलब्ध कराने की नैतिक बाध्यता है।

बहुभाषिकता के लाभ

किसी डिजिटल उत्पाद को बहुभाषी बनाने से कई महत्वपूर्ण लाभ हो सकते हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख बिंदु इस प्रकार हैं:

- **ग्राहकों तक आसान पहुँच:** बहुभाषिकता से ग्राहकों तक अपनी पहुँच बनाना बेहद आसान हो जाता है।
- **क्षेत्रीय ग्राहकों से जुड़ाव:** आप अपने उत्पादों को प्रत्येक क्षेत्र के ग्राहकों तक सरलता से पहुँचा सकते हैं।
- **बेहतर समझ और कम गलतफहमी:** ग्राहक उत्पाद को आसानी से समझ पाते हैं, जिससे संवादहीनता की स्थिति नहीं बनती और जारीकर्ता संगठन व ग्राहक के बीच किसी भी प्रकार की गलतफहमी की संभावना कम हो जाती है।
- **वैश्विक स्वीकृति:** उत्पाद को वैश्विक स्तर पर स्वीकृति मिलती है, क्योंकि यह अधिक से अधिक भाषाओं में उपलब्ध होता है।

- **भाषाई नीति का अनुपालन और कानूनी मजबूती:** बहुभाषिकता से देश की भाषा विषयक नीति का अनुपालन भी होता है। ऐसा करने से न केवल कारोबार को बढ़ावा मिलता है, बल्कि न्यायिक रूप से भी संगठन की स्थिति सशक्त बनती है।

इस प्रकार, हम पाते हैं कि डिजिटल उत्पादों में क्षेत्रीय भाषाओं को शामिल करने से किसी संगठन का ग्राहक आधार न केवल मजबूत होता है, बल्कि उसके न्यायिक और नैतिक दायित्वों का भी बखूबी अनुपालन होता है।

बहुभाषिकता सुगम्यता को भी बढ़ावा देती है। इसके माध्यम से स्थानीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संगठन और उत्पाद की एक उच्च छवि का निर्माण होता है। इतना ही नहीं, सुगम्यता को ध्यान में रखकर तैयार किए गए उत्पाद समाज के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति तक भी आसानी से पहुँच सकते हैं, जिससे बैंकिंग का मूल उद्देश्य पूरा होता है।

अब प्रश्न उठता है कि सुगम्यता क्या है? आइए, इस पर चर्चा करें—

सुगम्यता क्या है?

सुगम्यता को विभिन्न क्षेत्रों और स्रोतों में अलग-अलग तरीकों से परिभाषित किया गया है, लेकिन इसका मूल अर्थ यह सुनिश्चित करना है कि सभी लोग, विशेष रूप से विकलांग व्यक्ति, किसी भी उत्पाद, सेवा, सूचना या पर्यावरण का उपयोग कर सकें।

विभिन्न स्रोतों में सुगम्यता की परिभाषाएँ इस प्रकार हैं:

1. **विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ):** डब्ल्यूएचओ के अनुसार, सुगम्यता का अर्थ है "वातावरण, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) सहित उत्पादों, सेवाओं, सुविधाओं और वातावरण के डिज़ाइन को इस तरह से बनाना जो सभी लोगों के लिए सुलभ हो"।

2. **विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन (यूएनसीआरपीडी):** इस कन्वेंशन में सुगम्यता को एक मानवाधिकार के रूप में परिभाषित किया गया है। यह कहता है कि सुगम्यता "लोगों को एक स्वतंत्र जीवन जीने और समाज में पूरी तरह से भाग लेने में सक्षम बनाती है"।

3. **भारत सरकार का दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016:** इस अधिनियम के अनुसार, सुगम्यता का अर्थ है "वातावरण, परिवहन, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी, और सेवाओं तक पहुँच, जिसमें सूचना और संचार प्रौद्योगिकी में वेबसाइटें, इलेक्ट्रॉनिक दस्तावेज़ और अन्य डिजिटल सामग्री शामिल हैं"।

क्या है डिजिटल सुगम्यता?

डिजिटल सुगम्यता का अर्थ है वेबसाइटों, ऐप्स और अन्य डिजिटल उत्पादों को इस तरह से डिज़ाइन करना कि वे सभी के लिए उपयोग में आसान हों, जिसमें दृष्टिबाधित, श्रवण बाधित, गतिशीलता बाधित और संज्ञानात्मक रूप से विकलांग लोग भी शामिल हैं।

सुगम्यता केवल विकलांग लोगों के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि यह सभी के लिए लाभप्रद है। उदाहरण के लिए, एक वेबसाइट जो सुलभ है, वह उन लोगों के लिए भी उपयोग में आसान होगी जो धीमी इंटरनेट गति या कम दृश्यता जैसी समस्याओं का सामना कर रहे हैं।

भाषाई आधार पर सुगम्यता को प्रोत्साहन देने वाले उपाय

भाषाई सुगम्यता यह सुनिश्चित करती है कि जानकारी और सेवाएँ उन लोगों तक पहुँचें जो विभिन्न भाषाओं का उपयोग करते हैं, खासकर उन लोगों तक जो स्थानीय भाषाओं (वर्नाकुलर लैंग्वेज) का उपयोग करते हैं। कुछ प्रमुख उपाय जिनके माध्यम से भाषाई सुगम्यता को बढ़ावा मिल सकता है, वे इस प्रकार हैं:

1. **बहुभाषी वेबसाइटें और एप्लिकेशन:** वेबसाइटों और मोबाइल एप्लिकेशन को कई भारतीय भाषाओं में उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

2. **आसान पहुँच:** डिजिटल बैंकिंग उत्पादों तक प्रत्येक वर्ग की आसान पहुँच सुनिश्चित करने हेतु व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके लिए टोल-फ्री नंबर, मोबाइल एप्लिकेशन, वेबसाइट, कार्ड स्वैपिंग मशीन आदि को विभिन्न भाषाओं में जारी किया जाना चाहिए। साथ ही, इनमें से जिन माध्यमों को ऑफ़लाइन मोड में उपलब्ध कराना संभव है, उन्हें ऑफ़लाइन मोड में ही उपलब्ध करवाना चाहिए।

3. **ऑडियो-विजुअल सामग्री:** वृद्धजनों, कम साक्षरता वाले व्यक्तियों तथा दृष्टि दिव्यांगजनों को ध्यान में रखते हुए ऑडियो-विजुअल उत्पाद तैयार किए जाने चाहिए, ताकि कोई भी वर्ग वंचित न रहे और वित्तीय उत्पादों की जानकारी सब तक पहुँच सके।

4. **अंतरराष्ट्रीय मानकों का उपयोग:** डिजिटल उत्पादों को डिज़ाइन और तैयार करने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बनाए गए मानकों का ध्यान रखा जाना चाहिए। वेबसाइटों और मोबाइल ऐप्स में डब्ल्यू3सी की वेब कंटेंट सुगम्यता के दिशानिर्देशों का पालन किया जाना चाहिए।

5. **सांकेतिक भाषा एवं बड़े प्रिंट का उपयोग:** श्रवणबाधित अथवा कम सुनने वाले लोगों के लिए सांकेतिक भाषा का उपयोग किया जाना चाहिए, जबकि धुँधली दृष्टि अथवा आंशिक दृष्टि वाले व्यक्तियों के लिए बड़े प्रिंट (लार्ज प्रिंट) अथवा बड़ी छपाई वाले अक्षरों और चिह्नों का उपयोग किया जाना चाहिए।

6. **भाषा बदलने की व्यवस्था:** मोबाइल ऐप्स और वेबसाइटों पर उपयोगकर्ता की सुविधा के अनुसार भाषा बदलने की व्यवस्था होनी चाहिए। इसमें जितनी अधिक भाषाओं का समावेश होगा, उत्पाद उतनी अधिक जनसंख्या तक पहुँच पाएगा।

7. **भाषा की बोधगम्यता:** क्षेत्रीय अथवा स्थानीय भाषा का उपयोग करते समय इस बात का अवश्य ध्यान रखा जाए कि भाषा सामान्य उपयोगकर्ता के लिए ग्राह्य और बोधगम्य हो। इसमें न तो क्लिष्ट साहित्यिक शब्दों का समावेश किया जाए और न ही बिल्कुल प्रचलित शब्द हों। पारिभाषिक शब्दों की भरमार भी नहीं होनी चाहिए।

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया द्वारा भाषाई सुगम्यता हेतु किए गए प्रयास

स्वभाषा और स्वावलंबन के प्रति अपनी स्थापना से ही संवेदनशील रहे यूनियन बैंक ऑफ इंडिया द्वारा अपने विभिन्न डिजिटल उत्पादों को बहुभाषिकता से सुसज्जित करके भाषाई समावेशन को पूरी तरह अपनाया गया है। यूनियन बैंक ऑफ इंडिया द्वारा अपने डिजिटल उत्पादों में जिन भारतीय भाषाओं का समावेश किया गया है, उनका यहाँ उल्लेख करना उचित होगा:

1. **व्योम (Vyom):** यह यूनियन बैंक ऑफ इंडिया का मोबाइल बैंकिंग ऐप है, जिसमें 350 से अधिक फीचर्स हैं। बैंकिंग विषयक अधिकांश कार्य इस मोबाइल एप्लिकेशन के माध्यम से शाखा में उपस्थित हुए बिना संपन्न किए जा सकते हैं। इस एप्लिकेशन में जिन भाषाओं को सम्मिलित किया गया है, वे हैं - हिंदी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, बांग्ला, कन्नड़, तमिल, तेलुगू, मलयालम, उड़िया, पंजाबी, असमिया, कोंकणी। एप्लिकेशन के सभी मेन्यू इन 13 भाषाओं में देखे और उपयोग में लाए जा सकते हैं।

2. **ग्राहक सेवा हेतु टोल-फ्री नंबर:** प्रत्येक बैंक की भाँति, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया अपने ग्राहकों को 24/7 उत्तम ग्राहक सेवा प्रदान करने के प्रति प्रतिबद्ध है। इस कड़ी में बैंक द्वारा विभिन्न श्रेणियों में, जैसे सामान्य ग्राहक सेवा, धोखाधड़ी और लेन-देन में हुई किसी प्रकार की गड़बड़ी विषयक शिकायत निवारण, प्रीमियम खातों का प्रबंधन, एनआरआई खातों हेतु कॉलबैक सुविधा, और सशुल्क नंबर, अपनी वेबसाइट और शाखाओं में निःशुल्क एवं सशुल्क नंबर प्रदर्शित किए जाते हैं। इन नंबरों पर ग्राहक 19 भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी में बात कर अपने बैंकिंग विषयक प्रश्नों के हल जान सकते हैं तथा अपनी शिकायतों का निवारण करवा सकते हैं। इतना ही नहीं, इन भाषाओं में बहुत सी स्वचालित बैंकिंग सेवाएँ भी प्राप्त की जा सकती हैं। जिन भाषाओं में आईवीआर और ग्राहक सेवा प्रतिनिधियों की सेवाएँ उपलब्ध हैं, वे हैं - हिंदी, अंग्रेजी, तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड, गुजराती, मराठी, उड़िया, बांग्ला, कश्मीरी, कोंकणी, उर्दू, पंजाबी, मैथिली, असमिया, नेपाली, सिंधी, संथाली एवं मणिपुरी।

3. **एसएमएस सुविधा:** यूनियन बैंक ऑफ इंडिया द्वारा अपने ग्राहकों को एसएमएस द्वारा उनके खाते में किए गए लेन-देन तथा अन्य सभी महत्वपूर्ण सुविधाओं की त्वरित सूचना प्रदान की जाती है। ये सूचनाएँ मोबाइल बैंकिंग ऐप व्योम में उपलब्ध 13 भाषाओं में से ग्राहक द्वारा चुनी गई किसी एक भाषा में प्रेषित की जा सकती हैं। ग्राहक अपनी पसंदीदा भाषा की जानकारी बैंक को प्रदान कर उक्त भाषा में एसएमएस प्राप्त कर सकता है।

4. **व्हाट्सएप बैंकिंग:** यूनियन बैंक अपने ग्राहकों को 24/7 बैंकिंग सुविधा देने की प्रतिबद्धता को निभाते हुए व्हाट्सएप बैंकिंग प्रदान करता है। बैंक की व्हाट्सएप बैंकिंग को वर्चुअल कनेक्ट (UVConn) के नाम से जाना जाता है। सुविधा का लाभ उठाने हेतु व्हाट्सएप नंबर 9666606060 है। व्हाट्सएप के माध्यम से ग्राहक उपलब्ध 7 भाषाओं में से किसी भी एक में बैंकिंग सुविधा प्राप्त कर सकते हैं। उपलब्ध भाषाएँ हैं – हिंदी, अंग्रेजी, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, बांग्ला एवं मराठी।

5. **यूट्यूब चैनल में बहुभाषिकता:** बैंक का यूट्यूब चैनल बैंकिंग क्षेत्र की नवीनतम जानकारियों एवं उत्पादों के मार्गदर्शक विवरण से सुसज्जित है। चैनल पर जागरूकता विषयक रोचक वीडियो की श्रृंखला है। यहाँ पर सामग्री 10 भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है। कोई भी व्यक्ति इन वीडियो से लाभ उठा सकता है; इसके लिए यूनियन बैंक ऑफ इंडिया का ग्राहक होना अनिवार्य नहीं है।

6. **साउंड बॉक्स:** बैंक अपने ग्राहकों को आवश्यकता होने पर यूपीआई क्यूआर कोड स्कैनर एवं क्रेडिट कार्ड स्वाइप करने हेतु पीओएस मशीनें उपलब्ध करवाता है। इन मशीनों के साथ साउंड बॉक्स भी उपलब्ध करवाए जाते हैं, जिनमें बहुभाषिकता का फीचर उपलब्ध है। हिंदी-अंग्रेजी के साथ ही स्थानीय भाषाओं को भी सक्रिय किया जा सकता है। इससे ग्राहक अपने भुगतान के विषय में सुनकर जानकारी प्राप्त कर लेता है। यह साउंड बॉक्स हर तरह के ग्राहक, चाहे वे दिव्यांगजन हों अथवा वृद्धजन, के लिए उपयोगी है।

7. **बैंक की वेबसाइट:** बैंक द्वारा भारत सरकार के गृह मंत्रालय के दिशानिर्देशों का पालन करते हुए अपनी कॉर्पोरेट वेबसाइट को हिंदी एवं अंग्रेजी में द्विभाषी तैयार किया गया है। समय-समय पर वेबसाइट को अपडेट भी किया जाता है और इसमें सुगम्यता को अधिकतम रखा जाता है।

8. **द्विभाषी बोलते एटीएम:** यूनियन बैंक ऑफ इंडिया द्वारा भारतवर्ष में की गई अपनी तरह की पहली एवं एक अनूठी पहल के अंतर्गत हिंदी एवं अंग्रेजी में बोलते एटीएम की शुरुआत 2012 में की गई। इन एटीएमों को दृष्टिबाधितजन

बिना किसी अतिरिक्त सहायता के अपने ईयरफोन की सहायता से उपयोग कर सकते हैं।

9. **कृत्रिम बुध्दिमत्ता (एआई) एवं यूनियन बैंक ऑफ इंडिया:** बैंक ने अमेज़न एलेक्सा के साथ करार कर कुछ बैंकिंग सुविधाएँ वॉयस कमांड (आवाज) के माध्यम से भी उपलब्ध करवाई हैं। ये सेवाएँ एलेक्सा में उपलब्ध विभिन्न भाषाओं में ली जा सकती हैं। इसके साथ ही बैंक का अपना चैटबोट भी उपलब्ध है, जो कि ग्राहकों के प्रश्नों के त्वरित उत्तर देने में समर्थ है।

अन्य महत्वपूर्ण प्रयास

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया का प्रबंधन हमेशा से ही अपने ग्राहकों को उनकी भाषा में सुविधा प्रदान करने और भाषाई सुगम्यता को बढ़ावा देने में विश्वास रखता आया है। इसके लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए जाते रहे हैं और इन्हें निरंतर किया जा रहा है। कुछ उल्लेखनीय प्रयास जिनके माध्यम से डिजिटल उत्पादों में भाषाई सुगम्यता को प्रोत्साहन मिलता है, उन्हें इस प्रकार समझा जा सकता है:

1. **बहुभाषिक निर्देशिकाएँ:** यूनियन बैंक ऑफ इंडिया अपने डिजिटल उत्पादों की निर्देशिकाएँ भी बहुभाषिक जारी करता है, जिन्हें सोशल मीडिया एवं यूट्यूब चैनलों पर आसानी से देखा जा सकता है।

2. **स्थानीय भाषा-भाषी स्टाफ:** बैंक अपने स्टाफ सदस्यों में क्षेत्र के आधार पर अधिकारियों की नियुक्ति कर रहा है, ताकि ग्राहकों को भाषाई आधार पर सहायता मिल सके। बैंक के कार्यबल में स्थानीय भाषाओं से जुड़े अधिकारी/कर्मचारियों की नियुक्ति की जा रही है।

3. **कार्मिकों को अन्य भाषाओं का प्रशिक्षण:** अपने ग्राहकों को अधिकतम सुगम्यतापूर्ण वातावरण प्रदान करने के उद्देश्य से बैंक कार्मिकों को उनके तैनाती स्थल में प्रचलित एवं उक्त राज्य की राजभाषा का प्रशिक्षण भी समय-समय पर देता है। इसके लिए बैंक 3 माह का सघन कार्यक्रम चलाता है। इतना ही नहीं, विभिन्न राज्यों की भाषाओं को सीखने हेतु ऑनलाइन निर्देशिकाएँ भी तैयार की गई हैं।

बैंक द्वारा की गई ऐसी पहलों से डिजिटल उत्पादों में सुगम्यता के समावेश में सहायता मिल रही है, जिससे कार्मिकों का भाषा ज्ञान बढ़ता है, और वे अपने ग्राहकों को डिजिटल उत्पादों को भली-भाँति समझा पाते हैं।

इस प्रकार, भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश में स्थानीय भाषा और डिजिटल उत्पादों में सुगम्यता का बहुत अधिक महत्व है। सरल भाषा में सुगम्यता से अभिप्राय है किसी भी उत्पाद अथवा सेवा को सबकी पहुँच में लाना। वैश्वीकरण और भूमंडलीकरण की यही माँग भी है यूनियन बैंक ऑफ इंडिया भाषाई सुगम्यता को लेकर प्रारंभ से ही प्रतिबद्ध रहा है। अपनी प्रतिबद्धता को पूर्ण करने के लिए बैंक अपने सभी डिजिटल उत्पादों को भाषाई सुगम्यता को ध्यान में रखते हुए डिज़ाइन कर रहा है। इस क्षेत्र में बहुत सी भावी संभावनाएँ हैं जिनकी तलाश एवं कार्यान्वयन हेतु बैंक निरंतर प्रयासरत है।

अर्पित जैन

भारतीय भाषाओं पर एआई का प्रभाव

भारतीय भाषाएं देश की सांस्कृतिक विरासत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। प्राचीन काल से ही देश में भाषाई आदान-प्रदान एक आम अभ्यास रहा है, जो साहित्यिक गतिविधियों और अनुवादों के माध्यम से होता रहा है। भारतीय अपनी बहुभाषी प्रवृत्ति के लिए जाने जाते हैं, जिसमें वे कई भाषाओं पर अधिकार रखते हैं। भारतीय भाषाएं हमारे देश की जीवंत संस्कृति और वैविध्यपूर्ण आत्मा को गर्व से व्यक्त करती हैं, जो साहित्य की सुंदरता से समृद्ध होती है। भारतीय भाषाएं अपनी विविधता और समृद्धि के लिए ख्यात हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी विशिष्ट पहचान, समृद्ध साहित्य, विशेषताएं और जटिलताएं हैं, जो उसे अन्य भाषाओं से अलग बनाती हैं। भारतीय भाषाएं विभिन्न भाषाओं की विशिष्ट शैलियों को अपनाकर सदियों से सह-अस्तित्व में हैं और एक दूसरे के पूरक और समर्थक रही हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी बोलियां हैं जो भौगोलिक और सांस्कृतिक कारकों से प्रभावित होकर अपनी अलग पहचान बनाती है। भारतीय भाषाएँ हमारी संस्कृति और विरासत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इन भाषाओं ने हमारी पहचान और ज्ञान को पीढ़ियों से संजोया है। भारत के बहुभाषी परिवेश में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के आगमन से भाषाई जुड़ाव में उल्लेखनीय प्रगति देखी गई है। यद्यपि अंग्रेजी की तुलना में भारतीय भाषाओं में एआई का प्रभाव और इससे उत्पन्न सुविधाओं की मात्रा अपेक्षाकृत कम है, तथापि भारतीय भाषाई परिवेश की विशिष्टताओं के दृष्टिगत इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य भी हुआ है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) एक ऐसी तकनीक है जो मशीनों को मानव जैसी बुद्धिमत्ता प्रदान करने के लिए डिज़ाइन की गई है। इसका उद्देश्य मशीनों को सीखने, समझने और निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करना है, जिससे वे मानव की तरह काम कर सकें। एआई के अनुप्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में आमूल परिवर्तन कर रहे हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रणाली में बृहत डेटा की प्रविष्टि करना, डेटा में आपसी तालमेल और पैटर्न का विश्लेषण, और इस विश्लेषण के आधार पर भविष्य के संभावित स्थितियों के संबंध में पूर्वानुमान लगाना शामिल होता है। अत: एआई प्रणालियों में सीखना, तर्क, स्वयं सुधार और सृजनात्मकता के पहलू सम्मिलित होते हैं।

सामान्यत: एआई को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है, संकीर्ण एआई और सामान्य एआई। संकीर्ण एआई विशिष्ट कार्य करने के लिए प्रशिक्षित होते हैं। संकीर्ण एआई प्रोग्राम के अनुरूप कार्य करने की क्षमता रखती है और अपने आरंभिक प्रोग्राम के दायरे से परे सामान्य विचार करने या सीखने की क्षमता नहीं रखती है। इसके उदाहरण हैं विभिन्न वर्चुअल सहायक यथा एप्पल सिरी, अमेज़ॉन अलेक्सा और स्ट्रीमिंग प्लेटफार्म के अनुशंसा इंजन आदि।

सामान्य एआई जिसे कृत्रिम सामान्य बुद्धिमत्ता यानी एजीआई भी कहा जाता है, वर्तमान में उपलब्ध नहीं है। इससे तात्पर्य है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता ऐसे सभी कार्य करने में सक्षम होगा जो मानवीय बुद्धिमत्ता पर आधारित हैं। वर्तमान में सबसे उन्नत एआई प्रौद्योगिकी, यथा चैटजीपीटी और अन्य अत्यंत कुशल एलएलएम भी मानव सदृश्य बौध्दिक क्षमता प्रदर्शित नहीं करती हैं और वैविध्यपूर्ण परिस्थितियों में सहजता से सामान्य निर्णय नहीं ले पाती हैं।

अत: यह कह सकते हैं कि वर्तमान में उपलब्ध डेटा के विश्लेषण के आधार पर वांछित परिणाम देने की यांत्रिक प्रक्रिया को एआई की संज्ञा दी गई है। इस प्रक्रिया में ऐसे सभी कार्य सुगम और सरल हो गए हैं, जिनमें अधिक मात्रा में डेटा तक पहुँच की आवश्यकता होती है, स्थापित पैटर्न विद्यमान हैं और उपयोक्ता को उचित प्रश्न प्रस्तुत करते हुए उत्तर प्राप्त करने का मंच उपलब्ध होता है।

एआई की प्रगति से विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय बदलाव हुए हैं, और भाषा प्रसंस्करण भी इससे अछूता नहीं है। मशीन लर्निंग और डीप लर्निंग जैसी तकनीकों ने भाषाई मॉडलों को विकसित करने में मदद की है, जो मानव भाषा को समझने और उत्पन्न करने में सक्षम हैं। एनएलपी (नेचरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग) ऐसी तकनीक है जो प्राकृतिक भाषा के साथ काम करने में मदद करती है। एनएलपी एल्गोरिथम मानव भाषा के साथ संवाद स्थापित कर सकता है और अनुवाद, वाक् पहचान और भावना विश्लेषण जैसे कार्य कर सकता है। इसका उपयोग करके, हम प्राकृतिक भाषा को समझने, उत्पन्न करने और विश्लेषण करने में सक्षम हो सकते हैं। एलएलएम एक विशिष्ट प्रकार का एनएलपी मॉडल है जो बड़ी मात्रा में डेटा पर प्रशिक्षित होता है और प्राकृतिक भाषा को समझने और पाठ उत्पन्न करने में सक्षम होता है।

भाषा के क्षेत्र में एआई के प्रयोग पर ध्यान दिया जाए, तो यह देखा जा सकता है कि एआई का विशेष प्रयोग लेखन, पाठांतरण, सारांश लेखन और विशेषकर अनुवाद के प्रयोजन से किया जा रहा है। अब मेटा और चैट जीपीटी जैसी सुविधाओं के माध्यम से आम व्यक्ति भी अपनी भावनाओं को विभिन्न शैलियों में व्यक्त करने हेतु एआई का प्रयोग कर पा रहे हैं। भाषाओं के संदर्भ में एआई के कुछ प्रयोग निम्नानुसार हैं:

1. विभिन्न भाषाओं के बीच अनुवाद
2. भाषण पहचान के माध्यम से वाक् से पाठ में रूपांतरण
3. पाठ से भाषण में रूपांतरण
4. भावना विश्लेषण
5. चैटबॉट्स के माध्यम से उपयोगकर्ताओं के साथ संवाद
6. नई भाषा सीखना
7. पाठ निर्माण यथा - लेख, ब्लॉग पोस्ट और सोशल मीडिया पोस्ट
8. सर्च इंजन ऑप्टिमाइजेशन
9. पाठ में नामित इकाई पहचान यथा नाम, स्थान और संगठन की पहचान
10. प्रश्नों के आधार पर जानकारी प्राप्त करना

देश की बहुभाषा-भाषी बनावट का एक तथ्य यह भी है कि देश के राज्य और प्रांत विशेष की अपनी भाषा है और उस राज्य और प्रांत विशेष के निवासी उसी भाषा में संवाद कर पाते हैं और सहजता महसूस करते हैं। अत: आम जनता तक पहुँचाने के लिए क्षेत्रीय भाषाओं में अधिकाधिक सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित करना सर्वोपरी है। इस दिशा में कृत्रिम बुद्धमत्ता की भूमिका का विश्लेषण किया जाए तो यह देखा जा सकता है कि भारतीय भाषाओं के संदर्भ में एआई के प्रयोग में भाषाई विविधता, डेटा की कमी, लिपि और वर्तनी में एकरूपता का अभाव, और सांस्कृतिक संदर्भ गतिरोध उत्पन्न करते हैं। भारत की प्रत्येक भाषा की अपनी विशिष्ट विशेषताएँ और जटिलताएँ होती हैं। इससे एआई मॉडलों को प्रशिक्षित करना और उन्हें विभिन्न भाषाओं में लागू करना एक बड़ी चुनौती होती है। भारतीय भाषाओं के लिए पर्याप्त डेटा उपलब्ध नहीं होता है, जिससे एआई मॉडलों को प्रशिक्षित करना मुश्किल होता है। इससे एआई मॉडलों की सटीकता

और प्रभावशीलता पर प्रभाव पड़ता है। भारतीय भाषाओं में विभिन्न लिपियों और वर्तनियों का उपयोग किया जाता है, जो एआई मॉडलों के लिए जटिलता पैदा करता है। भारतीय भाषाओं में सांस्कृतिक संदर्भ और मुहावरे का महत्वपूर्ण स्थान है, जो एआई मॉडलों के लिए समझना आवश्यक है। इन समस्याओं का समाधान करने के लिए कई निजी और सरकारी पहल किए गए हैं।

भारत कृत्रिम बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में उल्लेखनीय परिवर्तन के दौर से गुज़र रहा है, जिसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान इंडिया एआई मिशन के तहत सरकार की सक्रिय नीतियों का है। यह पहल वर्ष 2047 तक विकसित भारत के दृष्टिकोण के अनुरूप है, जो भारत को वैश्विक एआई पावरहाउस के रूप में स्थापित करेगी। भारतीय भाषाओं के लिए एआई अनुप्रयोग तैयार करने का कार्य तेज़ी से आगे बढ़ रहा है, जिसका मुख्य उद्देश्य बड़े भाषा मॉडल (एलएलएम) और अन्य एआई समाधान विकसित करना है जो विभिन्न भारतीय भाषाओं में पाठ को समझ और उत्पन्न कर सके। इसमें ओपन-सोर्स मॉडल, ग्राहक सहायता के लिए संवादी एआई और एआई-संचालित भाषा शिक्षण अनुप्रयोग बनाने की पहल शामिल हैं। भारत सरकार ने इंडिया एआई मिशन के तहत सरवम को भारत का पहला संप्रभु बड़े भाषा मॉडल (एलएलएम) बनाने के लिए चुना है। इस पहल का उद्देश्य रणनीतिक स्वायत्तता को बढ़ावा देना, घरेलू नवाचार को तेज करना और दीर्घकालिक रूप से एआई में भारत के नेतृत्व को सुरक्षित करना है।

एक ओर बृहत पैमाने पर तकनीकी का प्रयोग करने वाली वैश्विक संस्थाएं एआई के क्षेत्र में काफी प्रगति कर रही हैं, वहीं दूसरी ओर भारतीय एलएलएम और एआई समाधान अपनी विशेष पहचान स्थापित कर रहे हैं। भारतीय भाषाओं के लिए बनाए गए महत्वपूर्ण एलएलएम का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

- विभिन्न भारतीय भाषाओं में डिजिटल सेवाओं की पहुँच सुनिश्चित करते हुए डिजिटल दूरी को पाटने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा भाषिणी का शुभारंभ किया गया। यह प्रौद्योगिकी और भारत की समृद्ध भाषाई धरोहर के बीच सेतु का कार्य करती है और सभी नागरिकों के लिए डिजिटल समावेशिता सुनिश्चित करती है।

- इलेक्ट्रानिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अनुदान से आईआईटी मद्रास स्थित अनुसंधान प्रयोगशाला - एआई 4 भारत में भाषा के विभिन्न प्रयोजनों

के लिए एआई समाधान विकसित किए गए हैं यथा - इंडिकबर्ट, इंडिकबार्ट और ऐरावत जैसे बहुभाषी एलएलएम; 22 भारतीय भाषाओं हेतु बना मशीनी अनुवाद मॉडल-इंडिक ट्रान्सवी2; भारतीय भाषाएं और अंग्रेजी की लिपियों के बीच लिपयंतरण हेतु इंडिकएक्सलिट लिंप्यंतरण मॉडल; स्वचालित वाक् पहचान मॉडल- इंडिक वेव2वेक और इंडिकविस्पर; टेक्स्ट से वाक् परिवर्तन हेतु एआई4बीटीएस; और ऑप्टिकल अक्षर पहचान हेतु विकसित मॉडल। यह संस्था भाषिणी के लिए डेटा प्रबंधन का कार्य भी संभाल रही है।

- कोरोवर.एआई द्वारा विकसित भारतजीपीटी पूर्ण रूप से भारत सरकार की पहल के अनुरूप है और डेटा की सार्वभौमिकता तथा संरक्षा सुनिश्चित करते हुए 14 भाषाओं में सेवा उपलब्ध कराती है। इसमें रियल टाइम लेनदेन हेतु इनबिल्ट भुगतान गेटवे भी उपलब्ध है। आईआरसीटीसी और एलआईसी जैसी बड़ी संस्थाएं इसका प्रयोग करती हैं।

- स्वदेशी एआई मॉडल भारतजेन एआई – संचालित सार्वजनिक सेवाओं के लिए विश्व की पहली सरकारी वित्तपोषित लार्ज लैंग्वेज मॉडल पहल है।

- सरवम 1, 2 बिलियन मानकयुक्त एलएलएम है और यह दस प्रमुख भारतीय भाषाओं का समर्थन करता हे। इसे भाषा अनुवाद, पाठ सारांश और सामग्री निर्माण जैसे अनुप्रयोगों के लिए निर्मित किया गया है।

- एआई कोष एक सरकार समर्थित मंच है जिसे व्यवसायों, शोधकर्ताओं और स्टार्टअप्स को एआई समाधारा विकसित करने में मदद करने के लिए गैर-व्यक्तिगत डेटासेट प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया है।

- तेलुगू एलएलएम लैब्स द्वारा विकसित नवरसा 2.0, 15 भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी में उन्नत सामान्य सृजनात्मक क्षमता के साथ सामग्री तैयार करने, ग्राहक सहायता, अनुवाद और शैक्षणिक संसाधन उपलब्ध कराता है।

- किसान एआई द्वारा विकसित धेनु 1.0 अंग्रेजी और हिंदी में उपलब्ध ओपन सोर्स कृषि मॉडल है जो किसानों को तीन प्रमुख फसलों में बीमारियों का पता लगाने की सुविधा प्रदान करती है।

- आडियाजेनएआई ने उड़िया भाषा और सांस्कृतिक संदर्भों के लिए समर्पित एलएलएम मॉडल का शुभारंभ किया है।

- कन्नडा लामा कन्नड भाषा में संवाद और टेक्स्ट विश्लेषण प्रदान करता है, जिसे 600 मिलियन से अधिक कन्नड टोकन के माध्यम से पूर्वप्रशिक्षित किया गया है।

- अभिनंद बालचंद्रन द्वारा विकसित तमिल लामा में संवर्धित शब्द भंडार, दक्ष प्रशिक्षण, अनुकूलन और ओपन सोर्स पहुँच इसे अनुसंधानकर्ता और डेवेलपर हेतु एक बहुमूल्य समाधान बनाता है।

- ओला कैब्स के संस्थापक श्री भावीश अग्रवाल द्वारा विकसित कृत्रिम एआई एक जेनरेटिव एआई है जो 10 से अधिक भारतीय भाषाओं में संदर्भ संगत प्रतिक्रिया देने में सक्षम है।

- टेक महींद्रा की पेशकश प्राजेक्ट इंडस शुद्ध हिंदी एलएलएम है जिसमें 539 मिलियन मानक और हिंदी तथा इसकी बोलियों से लिए गए 10 बिलियन टोकन से बने इस बृहत परियोजना के पहले चरण में हिंदी और इसकी 37 बोलियों पर ध्यान केंद्रित किया गया है। भविष्य में इसमें अतिरिक्त भाषाओं और बोलियों को जोड़ने की योजना है।

- अनुवादिनी एआई एक शक्तिशाली बहुभाषी अनुवाद प्लेटफॉर्म है, जो 22 भारतीय और 37 विदेशी भाषाओं में टेक्स्ट, डॉक्युमेंट, ऑडियो और वीडियो अनुवाद की सुविधा प्रदान करता है। यह टूल शैक्षणिक, शासकीय और सामाजिक मीडिया जैसे क्षेत्रों में विशेष रूप से उपयोगी है। यह भारत सरकार के अंतर्गत AICTE द्वारा प्रोत्साहित एक प्रभावी समाधान है।

- नेचुरल रीडर एक अग्रणी टेक्स्ट-टू-स्पीच टूल है जो 200 से अधिक आवाज़ों और इमोशनल टोन के साथ सुसज्जित है। यह दृष्टिहीनों के लिए एक उपयोगी माध्यम है और ऑडियोबुक, दस्तावेज़ वाचन आदि के लिए व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। ओसीआर (स्कैन डॉक्युमेंट पढ़ने) की सुविधा इसे और प्रभावशाली बनाती है।

- इलेवन लैब्स एक उन्नत वॉइस एआई टूल है, जो वॉइस क्लोनिंग और इमोशनल/इंटरेक्टिव टोन उत्पन्न करने की क्षमता रखता है। यह पॉडकास्ट निर्माण, यूट्यूब वीडियो डबिंग और प्रोफेशनल वॉइस सिंथेसिस के लिए बहुत उपयोगी है। इसके बहुआयामी उपयोग इसे कंटेंट क्रिएटर्स के बीच लोकप्रिय बनाते हैं।

- टीटीएस मेकर एक सरल लेकिन उपयोगी टेक्स्ट-टू-स्पीच टूल है, जो सीमित रूप से (1000 अक्षर तक) मुफ्त में पाठ वाचन की सुविधा देता है। यह शुरुआती उपयोगकर्ताओं या साधारण टेक्स्ट वाचन आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त है। यह छोटे उपयोगकर्ताओं के लिए एक सुलभ समाधान प्रदान करता है।

भाषाई आदान-प्रदान ने भारतीय संस्कृति और साहित्य को समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इससे विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों के बीच समझ और सहिष्णुता बढ़ी है, जिससे देश की एकता और अखंडता को मजबूती मिली है। भाषाई आदान-प्रदान एक महत्वपूर्ण परंपरा है, जो भारतीय संस्कृति और साहित्य को समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस दिशा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के प्रयोग से भारतीयों की बहुभाषी प्रवृत्ति देश की विविधता और समृद्धि को बढ़ावा मिलेगा। कुल मिलाकर, भारतीय भाषाओं के लिए एआई का क्षेत्र तेज़ी से प्रगति देख रहा है। शोधकर्ताओं, स्टार्टअप्स और संगठनों का एक बढ़ता हुआ पारिस्थितिकी तंत्र डिजिटल विभाजन को पाटने और भारत की भाषाई विविधता की क्षमता को उजागर करने के लिए काम कर रहा है।

गायत्री रवि किरण

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
अच्छे लोग, अच्छा बैंक

Union Bank of India
Good people to bank with

VYOM

आप में छुपी संभावनाएं उभरते भारत की आशाएँ

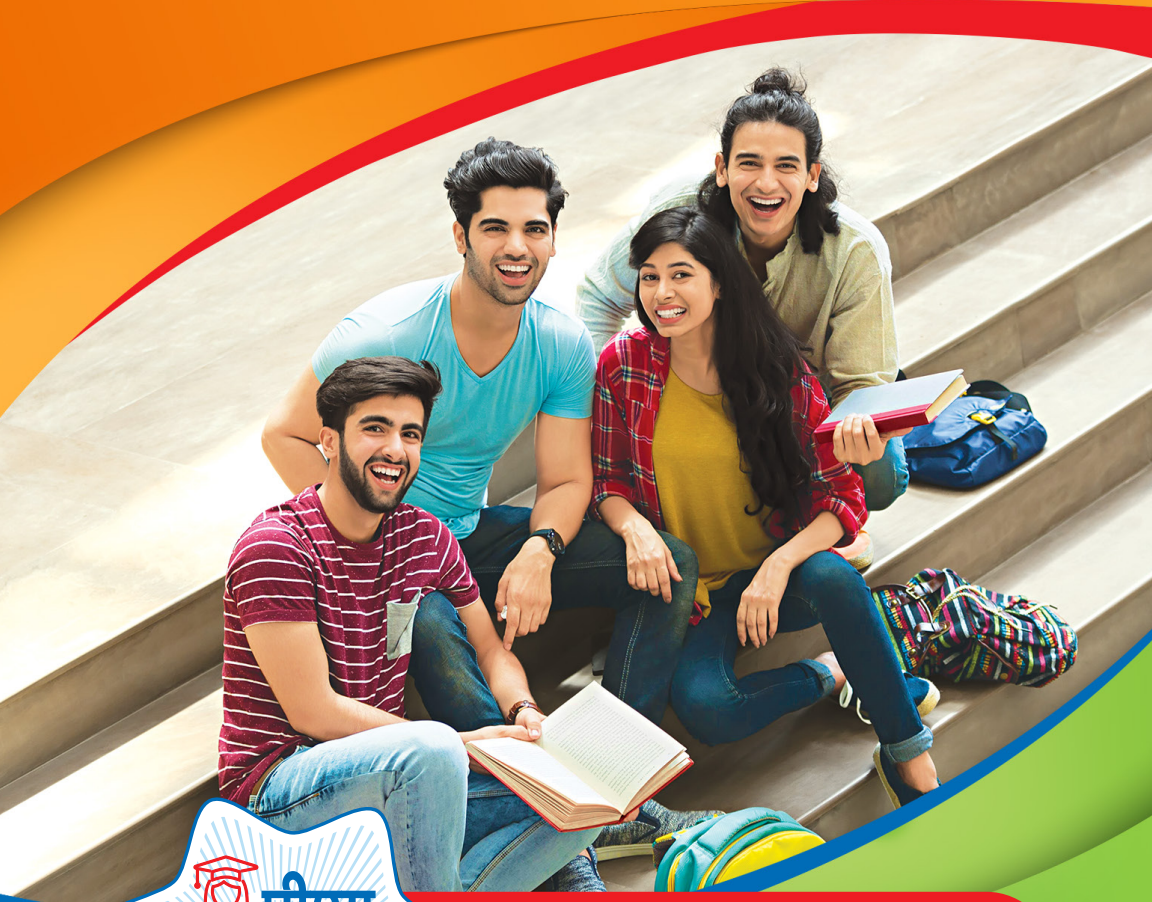

पीएम विद्यालक्ष्मी योजना

भारत सरकार की शिक्षा ऋण योजना जिसमें **902 गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षण संस्थान** शामिल हैं

- ऋण राशि की कोई अधिकतम सीमा नहीं
- कोई संपार्श्विक एवं गारंटर की आवश्यकता नहीं
- कोई प्रक्रिया शुल्क नहीं
- पीएम विद्यालक्ष्मी पोर्टल **https://pmvidyalaxmi.co.in** के माध्यम से ऋण हेतु आवेदन करें
- भुगतान अवकाश अवधि के दौरान ब्याज सहायता

*नियम व शर्तें लागू

VYOM

अभी डाउनलोड करें Available on the Google Play | Download on the App Store

(टोल फ्री नंबर) 1800 222 244 / 1800 222 243 / 1800 425 1515 / 1800 208 2244 | www.unionbankofindia.co.in

unionbankofindia UnionBankTweets unionbankinsta UnionBankofIndiaUtube unionbankofIndia unionbankinsta